

प्रकाशक:—

गौतम बुद्ध शिरो,

नई मद्रास, तिमिरी ।

---

सर्वाधिकार प्रकाशक के आधीन

---

द्वारा —

ए. ए. आर्चर प्रेस

तिमिरी ।



( ८ )

पत्नी से काम-काज के पत्नी के साथ ही विद्वान्-पत्र, मास-पत्र, निबंध-पत्र  
आदि भी हैं ।

आता है 'आदर्श निबन्ध मासा' का एक वर्ष-पत्र मंथोदिन, परिवर्तिन  
एवं परिवर्तिन मास-पत्र हमारे लक्ष्यों को निबन्ध-लेखन में सदायक एवं  
समय-सिद्ध होगा ।

—विशेष

# प्रथम-खण्ड

( निबन्ध-विभाग )

संख्या	विषय	पृष्ठ
१.	निबन्ध-बच्चा और उसके भेद	१
२.	हमारे आदिम की भाँसी	१०
३.	भौतिक शिक्षा	१२
४.	संयुक्त राष्ट्रसंघ	१३
५.	ग्राम-संस्थापन	२३
६.	हस्त-शिल्प का सम्बन्ध	२८
७.	सांस्कृतिक सम्बन्ध	३३
८.	विकास के सामान्य	३६
९.	वर्तमान-पाठ्यक्रम	३८
१०.	मधुर भाषण	४२
११.	विमान यात्री की दुर्घटना १९३३—४४	४२
१२.	नागरिक सम्बन्ध	४३
१३.	मनोरंजन की महत्ता	४६
१४.	दर्शन शिक्षा-योजना (लेमिन्-शिक्षा)	४६
१५.	अनुशासन का अर्थ	४८
१६.	ग्राम-विकास के अर्थ के सामान्य	४९
१७.	विश्वीय शांति के सम्बन्ध के सामान्य	५३
१८.	शिक्षा और समाज	५८
१९.	शिक्षण के अर्थ के सामान्य	६३
२०.	शिक्षण के अर्थ के सामान्य के अर्थ के सामान्य	६३
२१.	शिक्षण के अर्थ के सामान्य	६०
२२.	शिक्षण के अर्थ के सामान्य	६३

संख्या	विषय	
२३.	सच्चरित्रता	
२४.	मिलनवधना	१०
२५.	हम दीर्घजीवी कैसे हो सकते हैं ?	१०
२६.	हमारा भोजन	१०
२७.	भारत वर्ष में ग्राम-सुधार	११
२८.	हमारी प्रथम राजकृति ( १८५७ )	१२
२९.	मित्र के कर्तव्य	१२
३०.	महात्मा बुद्ध	१३
३१.	महात्मा गाँधी	१३
३२.	क्षत्रपति शिक्षाजी	१४
३३.	महाकवि तुलसीदास	१४
३४.	कवि-सम्मेलन	१४
३५.	समाचार-पत्रों की उपयोगिता	१५
३६.	वायुमल	१५
३७.	देशादम के लाभ	१५
३८.	स्त्री-शिक्षा	१५
३९.	मच्छाई	१६
४०.	भोजन में चर्दिया का महत्व	१६
४१.	समय का सदुपयोग	१६
४२.	दासी	१६
४३.	विश्वरूप का विवेका	१६
४४.	छद्म-छद्म	१६
४५.	स्वातन्त्र्य	१६
४६.	आत्म	१६
४७.	हम का सङ्गठन	१६
४८.	मित्र	१६

विषय	पृष्ठ
बाल-पालन	२१०
पुटबाल का खेल	२१४
जीर्ण पात्र की आत्म-बहानी	२१८
रूपे की आत्म-बहानी	२२१
प्रहर्षिणी	२२६
भारतीय किशान	२२६
मन्तोदी मदा सुम्पी	२२६
बालर का बाप-बहाउट संग्रहा	२२९
आवरण	२३२
पुट से आत्म हानि	२३०
हिन्दुस्तानी खेल	२३८
गार्भभूमि के विरहीन्द्राध	२३४
कादम् जीवन की आधार शिला	२३८
राज-भाषा का प्रग	२४१
रूप-अन्तर्भाषा की दृष्टि	२४०
राज के कर्तव्य के ० केन्द्र	२४२
देव की विद्या केन्द्रों की आधारशिला है	२४८
देव की शक्ति की आधारशिला है	२४१
आत्मिक समाज के काली का स्वर	- २४९
जीव के परिणाम का स्वर	२५२
राज का स्वर	२५१

## दृमरा-खण्ड

( १९११-१२ के लिये )

एक दिन के लिये १९११-१२	२५५
एक दिन के लिये १९१२-१३	२५५
एक दिन के लिये १९१३-१४	२५५

संख्या	विषय	पृष्ठ
४.	पिता का पत्र, पुत्र के नाम ( विद्यार्थी जीवन )	१०७
५.	पत्र माता को ( छात्राश्रम के सम्बन्ध में )	१०८
६.	पत्र मित्र को ( पहाड़ की यात्रा )	१११
७.	छोटे भाई को पत्र	११४
८.	शिष्य को पत्र ( कुमनसि की हानियों पर )	११६
९.	विवाह का निमन्त्रण-पत्र	११७
१०.	शोक-पत्र	११८
११.	मीति-भोग का निमन्त्रण-पत्र	११९
१२.	गार्डन पार्टी का पत्र	१२०
१३.	विधेयामक उत्तर,	१२०
१४.	विधेयामक उत्तर	१२०
१५.	पुस्तक-विक्रेता को पत्र	१२१
१६.	शोक प्रस्ताव	१२१
१७.	याचना पत्र	१२१
१८.	छुट्टी का प्रार्थना-पत्र	१२३
१९.	हाली मैच खेलने का आवेदन-पत्र	१२३
२०.	बधाई पत्र	१२४
२१.	अभिनन्दन पत्र ( मानपत्र )	१२५
२२.	छोटे भाई को पत्र ( व्यायाम के लाभ )	१२७
२३.	कपड़ा खरीदने का पत्र	१२८
२४.	विदाई-पत्र	१२८
२५.	कपड़ा खरीदने का पत्र	१२९
२६.	रेलवे अधिकारियों को प्रार्थना-पत्र	१३१
२७.	कलकत्ता साहब को खयाल माफ करने का प्रार्थना-पत्र	१३२
२८.	नौकरी के त्रिये प्रार्थना-पत्र	१३३
२९.	म्यूजिसिपैजिटी के सम्बन्ध की शिक्षावत्त का पत्र	१३४
३०.	समाश्रित के नाम पत्र	१३५
	मित्र को पत्र ( गर्मी की सुदृष्टियों का प्रयोग )	१३७-१४०

निबन्ध कला और उसके भेद

निवन्धन का दायित्व क्या है 'दोषा दुष्ठा' अर्थात् साधक प्रजा में दूषण गृहण में दूषे हुए विचार । जिस क्षेत्र में एक ही निवन्धन को वेन्द विन्दु बनाकर विभिन्न विचारों को साधक बिदा जाता है वह निवन्धन का प्रवन्धन का प्रवन्धन होता है । इसका अविचार्य है कि विचारधारा प्रवन्धन तदा प्रासंगिक ही होनी चाहिए । प्रवन्धन का अनासंगिक निवन्धन की वक्ता में परिपूर्ण क्षेत्र निवन्धन कोटि में नहीं आता ।

मिथ्या के लिए विद्वानों को सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती, बुद्धादिपुत्र और दशंग से लेकर महात्मागुरु तक सभी मिथ्या के विद्वान् हो सकते हैं। भूविषय और वांछितों तक को संसार के महात्मा होनेको के बदले मिथ्या का विद्वान् बनना है। ऐलक का विविध बदलाव हो विद्वान् को मज्जीव का निर्माण करना पड़ता है। मिथ्या के दूसरी कारण बदलाव की बात देखना आवश्यक हो गया है। यदि ऐलक विद्वान्-मिथ्यापुत्र और ब्रह्म के समान बदले बदलाव को हमने मिथ्या देना है तो सभी विद्वान् मज्जीव और सात सप्ताह रोचक तथा वाक्योंक प्रणीत होने लगता है। विद्वान् के जैसे ऐलकों के दूसरी कारण बहुत सामान्य विद्वानों पर केम मिथ्या का ही नाम बजावण के बाद के बाद ब्रह्म मिथ्या है।

[illegible]



विषय से सम्बद्ध पुस्तकों का अध्ययन कर अन्य विद्वानों के विचारों का पता लगाइये। इस प्रकार मन्थन करने से आपके पास प्रचुर परिमाण में भाव-सामग्री जुट सकेगी और आप तब मज़ी मौजि विषय का शब्दीकरण एवं प्रतिपादन कर सकेंगे। विषय के उपयुक्त सामग्री एकत्र करने में अध्ययन के साथ लेखक को जागरूक रहकर सांसारिक वस्तुओं का भाँव लोकात्मक निरीक्षण एवं पर्यालोचन भी करना चाहिए, केवल पुस्तकें पाने से ही विषय के उपयुक्त सामग्री नहीं जुड़ती।

विचार-विमर्श तथा अध्ययन के उपरान्त निबन्ध की तैयारी के रूपरेखा तैयार करना चाहिए। जिस क्रम से विचारों का शुद्धन करना हो उसी क्रम से समस्त विचारों का ढोंग सजा करके लिखना प्रारम्भ करिये। एक विचार को एक अनुच्छेद (पैराग्राफ) में लिखिये। पुनरावृत्ति तथा अत्रासक्तिक बातों को बचाने के लिए विशेष सतर्कता की आवश्यकता है।

निबन्ध का दूसरा अनिवार्य तत्व है शैली। शैली को लेखक का निश्चित स्वचित्रत्व भी कहा जाता है। कुछ लोग इसे व्यक्ति का परिधान कहते हैं और कतिपय विद्वानों की सम्मति में यह सार्वभौमिक सौन्दर्य की मौजि व्यक्ति से अभिन्न तरह की मौजि है। शैली की सीमा में अभिव्यञ्जना, भाषा या शब्द-चयन, लोकोभिर्षा, मुदाबरे आदि सभी आवश्यक बातों का समावेश होता है। अभिव्यञ्जना के प्रकार का ही हमरा नाम यदि शैली है तो भाषा चुनका सबसे अधिक महत्वपूर्ण अंग है। व्याकरण-सम्मत, शुद्ध, गंजज एवं परिष्कृत भाषा का जो प्रभाव पाठक पर पड़ता है वह अशुद्ध एवं अपरिष्कृत भाषा का कदापि नहीं होता; किन्तु परिष्कार तथा मोरज बनाने के मोह में भाषा को दुरुद्ध और मोरज बना देना भी शैली की दृष्टि से दोष हो कहा जायगा। आवश्यक तो यह है कि भाषा शुद्ध होने के साथ-साथ सरल, सुबोध तथा सरस हो। परिधन-भाष्य कठिन शब्दों के मोह से भाषा को छान्द देना शैली की दृष्टि से हानिकारक ही समझा जायगा। भाषा वह अच्छी होती है जो बिना प्रयास के नैसर्गिक रूप से पाठक पर अपनी प्रभाव डोहती साथ तथा धारा-प्रवाह रूप में चल कर अभिमत अर्थ का

घोषण करे। मूल-निर्मात्र के समान कल-कल नाद करती हुई अविरत गति से प्रवहमाण भाषा ही नियन्त्र की सर्वोत्कृष्ट भाषा है। दीर्घ और ममास-प्रधान विलम्ब वाक्यों के प्रयोग से भाषा को दुर्गम बनाना शैली के सौन्दर्य पर कुटारापात है। उन्हीं शब्दों का प्रयोग समीचीन और व्यावहारिक है जो सरल तथा पूर्णरूपेण ज्ञात हैं। भाषा की प्रकृति को बिना पढ़चाने मुने-मुनाये ह्रस्व शब्दों के प्रयोग में पड़कर शैली के सौष्ट्य को नष्ट-विस्तृत नहीं करना चाहिए।

अभिप्रेयोजना को तीव्र एवं प्रभावपूर्ण बनाने के लिए वाक्य मौल्य भी अनिवार्य रूप से प्राधान्य है। छोटे-छोटे, कटे-छटे, पड़कते वाक्यों से जो तेज और प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है वह लम्बे और विलम्ब पदावली द्वारा कभी संभव नहीं। शब्द शक्तियों के द्वारा भी वाक्यों को समस्त रूप को जीवंत बनाया जा सकता है। साधारण वाक्यों को मुद्राशरीर और लोकोक्ति के द्वारा एकमात्र बनाने की शैली भी बढ़ी उपयोगी है। इस पद्धति से वाक्य अपनी सांकेतिक सीमाओं का विस्तार करके अर्थ प्रत्यक्ष में समर्थ होता है।

भाषा को सर्वजन-मुख्य और अभिव्यक्ति को सामिक बनाने के लिए ही मुद्राशरीर का प्रयोग किया जाता है। उपन्यास महात्मा प्रेमचन्द जी की भाषा में जो शक्ति और सरलता दृष्टिगत होती है वह एकमात्र ही मुद्राशरीर के सुन्दर एवं समीचीन प्रयोग के कारण है। स्वयं, हास्य और विनोद के लिए भी एकमात्र पदावली का प्रयोग बहुत ही आवश्यक है। मुद्राशरीर से ज्ञात में इतना आवश्यक ध्यान रहे कि वे अपनी भाषा की प्रकृति के अनुकूल हो, अनुवाद मात्र में प्रयुक्त मुद्राशरीर हमारी भाषा में ही व्यापक प्रयुक्त हो सके, इसमें संशय है। अंग्रेजी, फारसी और उर्दू के अनेक मुद्राशरीर हमारी भाषा की प्रकृति के अनुकूल नहीं रहते हैं। हमें अपने भाषा में प्रयुक्त वाक्यों को अपनी भाषा के लिए ही प्रयुक्त करना चाहिए। इसीलिए मुद्राशरीर का प्रयोग हमें अपने भाषा के लिए ही प्रयुक्त करना चाहिए।

भाषा का सरल बनाने के लिए आवश्यक तथा सुदो में परिभाषित





निबन्ध के कनेडा का शिकार करने समय खेलकूद को चाहिए वह उसे शिव-प्राप्तियों के अनुसार निबन्ध का ले । सामान्यतः निबन्ध मुख्य तीन भागों के होते हैं—विशेषिक, कारण ही होना है । पदार्थ का प्रारम्भ या प्रस्तावना, दूसरा भाग मुख्य या विषय विस्तार और तीसरा भाग अन्त या उपसंहार । इन तीन भागों में प्रस्तावना या अन्तर्भाव का विशेष महत्त्व है । प्रायः छात्रों के सामने सबसे बड़ी कठिनाई निबन्ध प्रारम्भ करने में ही आती है । वे यह निर्णय नहीं कर पाते कि कहाँ से अथवा निबन्ध प्रारम्भ करें और प्रस्तावना में क्या लिखें—यदि एक बार प्रारम्भ करके गाड़ी चले पड़ी तो आगे बहुत कुछ लिखा जा सकता है किन्तु सबसे बड़ी परेशानी तो प्रारम्भ में ही आती है । प्रारम्भ करने के लिए सबसे अधिक आवश्यक है निबन्ध का शीर्षक—अथ विषय के प्रतिपादन के लिए शीर्षक दिया गया है—कुशल खेलकूद को चाहिए कि वह उसी शब्द के केन्द्र बना कर उसी की परिधि में अपने विचारों का आश्रय ले । शीर्षक का भीमोवा विवेचन या व्याख्या भी एक प्रकार की प्रस्तावना बन जाती है । यदि निबन्ध का प्रारम्भ शीर्षक या आश्रय बन गया तो सम्पूर्ण निबन्ध सर्वोपरि प्रवाहपूर्ण बन आया । किन्तु प्रस्तावना बहुत विस्तृत नहीं होनी चाहिए । भूमिका के रूप में शीर्षक को स्पष्टीकरण देकर विषय के मुख्य स्रोत या प्रारम्भ कर देना ही प्रस्तावना में पर्याप्त होगा । कभी-कभी विषय को परिभाषित देकर भी प्रस्तावना का काम चलाया जा सकता है । कभी-कभी किसी प्रतिस्पर्धी की विषय से सम्बन्धित कृति को उद्धृत करके भी विषय की प्रस्तावना की जा सकती है । कभी-कभी किसी मनोरंजक या प्रभावशाली घटना का वर्णन करके भी विषय की प्रारम्भ किया जाता है । किसी ऐतिहासिक सिद्धान्त को उल्लेख कर वा उसका संकेत करके भी निबन्ध की प्रारम्भ किया जा सकता है किन्तु सबसे सुन्दर शैली तो सीधे विषय को लेकर आगे चलने की शैली है जो निरन्तर चर्चा के बाद विद्वत्ता खेलकों के निबन्धों में ही उपलब्ध होती है । अपने खेलकों की विषय की परिभाषा या शीर्षक का व्याख्या देकर ही प्रारम्भ करना चाहिए ।









कहता है : यथाथमन मनोवैज्ञानिक -सैद्धी पर खरी उतरने वाली व्याख्या ही देनी चाहिए। विज्ञान और तर्क के इस युग में भवैज्ञानिक व्याख्या कगारामास्पद ही होगी ।

३—आलोचनात्मक निबन्ध—आलोचनात्मक निबन्ध प्रायः कवियों का लेखकों की कृतियों की समीक्षा सम्पन्न करने के उद्देश्य से लिखे जाते हैं। इनमें कवि की कृति का शेषक अपनी दृष्टि से या शास्त्रीय दृष्टि से मूल्यांकन करना हुआ आलोचना करता है। हिन्दी में इस कोटि के सर्व-श्रेष्ठ निबन्ध १९०० आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के हैं। आगे लक्ष्मी, आपसी, मूर आदि कवियों पर बड़े ही गवेषणापूर्ण समीक्षात्मक निबन्ध लिखे हैं। इन निबन्धों में तुलना अनुसन्धान तथा व्याख्या का बड़ा प्रचार हुआ है। केवल शिव शास्त्र-व्यक्ति में विरभाव रहता है प्रायः उसी को कमोटी बनाकर अपनी आलोचना सम्पन्न करता है। इस प्रकार के निबन्ध लिखने में इनकी आकाशवाणी करनी चाहिए कि निबन्ध कहीं एकांगी तथा वचनानुसृत न हो जायें

इनके अतिरिक्त गवेषणात्मक निबन्ध, तुलनात्मक निबन्ध तथा मनोवैज्ञानिक निबन्ध भी हैं जो उपर्युक्त भेदों में ही रले जा सकते हैं।

### हमारे साहित्य की भर्झी

[ हिन्दी-साहित्य का विकास और उसकी समृद्धि का विशिष्ट इस कौड़ी में प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी-साहित्य के काव्य-विभाजन का संकेत देकर उसका मुख्य प्रवृत्ति का भी इसमें स्पष्टत्व है। ]

साहित्य असाध्य का रस है। किसी देश या समाज की धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक गतिविधियों का साहित्य में प्रतिबिम्बित होना प्रकृत है। हिन्दी-साहित्य के विकास में साहित्य के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के साहित्य के विकास का अध्ययन करना आवश्यक है। साहित्य के विकास में साहित्य के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के साहित्य के विकास का अध्ययन करना आवश्यक है। साहित्य के विकास में साहित्य के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के साहित्य के विकास का अध्ययन करना आवश्यक है।



## ७. सांख्यिक काव्य ( गद्य-काव्य सं० ११००—१००० )

हिन्दी-साहित्य के विकास के इस काव्य या नाम के वर्गीकरण को समझने के लिये यह बात विशेष रूप से ध्यान में रखनी चाहिए कि जिस काव्य में लोक-प्रवृत्ति जिस विषय या तान को घोर प्रमुख रूप से चुनो रही होती के आधार पर काव्य का नामकरण कर दिया गया । इसका यह तात्पर्य नहीं कि इस युग में अन्य विषयों की कविता हुई ही नहीं ।

(१) इस युग में जो साहित्य रचा गया उसमें धीरे धीरे काव्य का प्राधान्य था । युद्ध और आन्दोलन ही उस समय के कवियों के प्रिय विषय थे । इस काव्य के प्रमुख कवियों में 'दृष्टीराज रामो' के प्रयोगा चन्द्रवर्मा का नाम सबसे अधिक विख्यात है । 'रामो' नाम से इस काव्य में 'बीसवर्षीय रामो' और 'लुमान रामो' भी लिखे गये । आरुह्य शब्द भी इसी काव्य की काव्य-शैली का परिणाम है । धीरे धीरे लुमान भी इसी काव्य के जन-प्रिय कवि थे, जिन्होंने अपनी हुई भाषा में सुन्दर मुक्तियाँ सादि लिखीं । इस समय के कवियों की भाषा हिमालय भाषा के नाम से पुकारी जाती है ।

(२) इस काव्य में काव्य रस की कविता का प्राधान्य रहा । निराल और इनाम हिन्दू जनता में ईश्वर-भक्ति की प्रेरणा उत्पन्न कर दिखाने तथा धर्मपरायणता की भावना पैदा करना इस युग के कवियों का श्रेष्ठ था । गोस्वामी तुलसीदासजी ने राम का रूप जनता के समक्ष ऐसा उपस्थित किया जो लोक-प्रवृत्ति की उदात्त भावना से परिपूर्ण था । इस युग में दो प्रकार की भक्ति-प्रवृत्ति का प्रचार हुआ । पहिली पद्धति निगुण भक्त कवियों की थी; जिसमें जादवी, कबीर, दादू तथा अन्य मूल कवि आते हैं । महात्मा कबीर ने अपने उपदेशों से सुप्रसिद्ध तथा हिन्दू जनता के धार्मिक मनोबल को दूर कर एक सर्वमान्य ईश्वर का रूप दिया और भेदभाव का दीवार का गिरा कर सबको लड़ा का बन्दा बन्ध कर राम धर्म रहस्य की प्रवृत्ति भी स्थापित की । दूसरी कवि भाषा न प्रेम के चानचानकाव्य जिस पर ईश्वर भक्ति का मधुर और मधुर रूप प्रभावित किया । 'पद्यात्म' भक्ति मुहम्मद आलमी का एक सुन्दर महाकाव्य है जो अपनी भाषा में लिखा गया है ।

विशुद्ध ईश्वर-भक्ति का प्रचार लाक्षाधीन गृहस्थ समाज में उठना । हो सका जिसका साधु-सन्तों में हुआ । गृहस्थ जब एक ऐसे ईश्वर की प्रामाणा चाहते थे कि जो उनके दैनिक-जीवन से सामंजस्य करके उन्हें पारदाओं में डबा सके । उनके जीवन में आया और उत्साह का संचार कर उन्हें आग्रह दे सके । सगुणोपासक कवियों ने इस प्रकार के ईश्वर के रूप बनने काय्य में प्रस्तुत किये । राम तथा कृष्ण की असीम शक्तियों के वर्णन के माध्यम कवियों ने ईश्वर की सर्वजन-सुख बनाने की सच्चा चेष्टा की । गोस्वामी तुलसीदास ने राम के रूप में परमाना की आराधना की जो आदर्श जनता के समक्ष उपस्थित किया उनमें शक्ति, शील और मौन्दर्य का अपूर्व सामंजस्य था । महाना सूरदास ने जगवान् कृष्ण के जीवन का आदर्श जनता के सामने प्रस्तुत कर सगुणोपासना का पथ प्रशस्त किया । गोस्वामी ने राम की शक्ति में रामचरितमानस, विनय-पत्रिका, कवितावली, गोतावली आदि ग्रन्थ लिखे । महाना सूरदास ने कृष्णभक्ति में स्वतन्त्र रूप में कई हजार छन्दों पर पद लिखे, जिसका संग्रह 'सूरसागर' नाम से प्रसिद्ध है । सूर के अनुयायी कवि 'अष्ट-भ्रात' के नाम से व्यवहृत होते हैं । नाना-दास, रहीम, नीरा, रसखान आदि हमी काब के मशहूर कवि हैं । यह काब हिन्दी-साहित्य का सर्वश्रेष्ठ काब—स्वर्णदुग के नाम से विख्यात है ।

(३) इस काब की काय्य-प्रवृत्ति तथा काय्य-मान्यता बनने पूर्ववर्ती काब में निष्ठ है । इन काब के अधिकांश कवि स्वतन्त्र रूप से काय्य भाषना में लीन रहने वाले कवि नहीं थे, वरन् वे दरबारा या राजाओं के अधीन कवे थे । इस युग में मुगलमानों का राज्य सुस्थिर रूप से प्रतिष्ठित हो चुका था और हिन्दू राजा भी भोग-विहार में लीन रह कर जीवन-यापन कर रहे थे । विताय-भय राजा और रक्षकों का हस्तानुबन्ध तथाकथीन कवेदों ने भी अन्तर और विज्ञान का बनना कवेता का विषय बनाया । अपने समाज-वर्तन में बाह्य रूप से इन कवियों ने नारायण-पुत्र या महा-गान की इनायत-नायिका का नाम दिया । हिन्दु इनके उपास्य देव थे मङ्गलार्थी व्यक्ति हैं । अतः, काय्यभाग में मङ्गल रस का प्रभाव अति प्रबल हो गया

और केशवदास, देवदत्त, बिहारीदास, मनिराम, वसन्तदास आदि गू मारी कवियों की रचनाओं से साहित्य परिपूर्ण हो गया। इस काल में 'मृगय' ही एक केव कवि थे जिन्होंने गू गार रूप को अपने काव्य में स्थान नहीं दिया, वस्तुतः गीत रस की सुन्दर अभिव्यक्ति में वे सीन रहे। इस युग में कविता ने जो प्रत्यक्षिमे उनमें अलंकार, रस, रीति आदि का ही प्रयोजन था, वन इस युग के काव्यों का नाम रीतिकाल पड़ा। रीति शब्द का अर्थ है व्यवस्था-प्रण।

मुगल साम्राज्य के पतन के बाद भारत में अंगरेजों शासन का आरम्भ हुआ। अंगरेजों शासन के स्वभाव के साथ ही देश के अनेक क्षेत्र में नूतन ज्ञानि उपपन्न हुई। शिक्षा और विचार विनिमय के जिये नवीन भाषा की आवश्यकता अनुभव की गई। पद्य की प्रधानता को दूर करके गद्य का उन्नत शैली: कवयित्तियों, शिक्षा संस्थाओं तथा सांख्यिक स्थानों में प्रवेश होने लगा। रीति-प्रणों के स्थान पर गद्य और पद्य दोनों में ही नवीन आवश्यकता के अनुरूप रचना प्रारम्भ हुई। यह नवीनता गद्य के रूप में सबसे अधिक विकसित हुई। वन: इस आधुनिक युग का नाम 'गद्य-काल' हो गया। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि इस युग में गद्य-रचना ही हुई। पद्य का भी पर्याप्त प्रयोग इस युग में होता रहा है और हो रहा है किन्तु गद्य का विकास हुआ इसी युग से है। गद्य के प्रवर्तकों में मुंशी सदाशिवदास, मदन मिश्र, इत्यादिना की और जलन्जीदास हैं।

आधुनिक युग के प्रवर्तक या उत्प्रेरक के रूप में भी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हमारे सामने आते हैं। आपने हिन्दी भाषा और साहित्य की सर्वतोमुखी उन्नति के जिये साहित्य के सभी क्षेत्रों में नूतन प्रयोग किए। काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध, समाचार-पत्र आदि सभी क्षेत्रों में भारतेन्दु जी की देन अर्प है, वन: आरम्भ के पतमान युग का प्रवर्तक कहा जाता है। आपके साधियों में भी प्रतापनारायण मिश्र, बाबू कृष्ण मल्ल, प्रेमचन्द, बाबू मुकुन्द गुप्त प्रसिद्ध हैं।

आधुनिक युग का दूसरा अध्याय भी आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी

आत्मन होता है। श्री द्विवेदीजी ने भाषा के परिष्कार तथा व्याकरण-मूलक बनाने का जो प्रयत्न किया वह हिन्दी-साहित्य के इतिहास में सदैव असाधारणों में अंकित रहेगा। यहाँ तक 'सरस्वती' का सम्पादन करके द्विवेदी ने अनेक लेखक और कवियों का पथ-प्रदर्शन किया। अतः सन् १९०१ से १९२० तक का युग 'द्विवेदी युग' के नाम से हिन्दी साहित्य में सिद्ध है।

द्विवेदीजी के बाद व्यापावाद युग आता है। यह नवीनतम युग भी कहा जा सकता है। प्रान्तीय भाषाओं के साहित्य तथा अंगरेजी साहित्य के प्रभावों के कारण इस युग में हिन्दी-साहित्य का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक हो गया। अनेक प्रकार की हिन्दी रचनाएँ इस युग में प्रस्तुत हो रही हैं। सर्वश्री मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह व्यापापाय, धीर पाठक, प्रेमचन्द कौशिक, सुदर्शन, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, निराडा, महादेवी वर्मा, दिनकर, जैनेन्द्र, हजारीप्रसाद द्विवेदी, माखनलाळ खजुरी आदि जैसे प्रतिभाशाली कवि, लेखक और कलाकार उत्पन्न हो रहे हैं।

काव्य, नाटक, उपन्यास, निबन्ध, आलोचना, समाचार-पत्र, पत्रिका, आदि सभी क्षेत्रों में प्रचुर परिमाण में सुन्दर कृतियाँ प्रस्तुत की जा रही हैं। साहित्य के इस विकास को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि स्वतन्त्र राष्ट्र भारतवर्ष को राष्ट्रभाषा हिन्दी एक समुद्दिशाकी भाषा है और उसका अविच्छेद रहस्य है।

### सैनिक शिक्षा

[ इस लेख में राष्ट्र-पक्ष के जिने सैनिक शिक्षा को उगादेयता का वर्णन किया गया है। सैनिक शिक्षा द्वारा नवयुवकों में शक्ति-पंचांग के साथ अनुशासन, आदेश-पात्रता और संयम की भावना उत्पन्न होती है। ]

जिस देश की धृष्ट में नैतिक-दृष्टि का हम बड़े होते हैं, जिसके पक्ष में हमारा देश बनता है जिसकी पाठ्याङ्गणों में हम उत्कृष्ट-विकास



मे मर्जी हुई मेना तो नहीं बनार्ह लेकिन स्वयंसेवकों की सेना तैयार की  
 जो सेवा का आदर्श लेकर काम करती थी। भारत की जनता तो हिम्मत  
 हार चुकी थी और दुखी थी। दामता की बेदियाँ काटे न बटती थी और  
 आपत्तियों का घन्टा न था। ऐसे समय में उन्होंने लोगों को धैर्य देते हुए  
 साहसी बनाया। इसके बाद उन्होंने बताया कि जीवन संघर्ष है, जिसको  
 जीतने के मुख्यमंत्र हैं—संघर्ष, अनुशासन, त्याग और एकता। उनकी आवाज  
 से पीड़ित जनता में जल का गर्ह और हमारा देश सम्पूर्ण प्रभुत्वमन्त्र  
 लोकप्रशासनिक गदरावट बन गया।

स्वतंत्र भारत के पास मैदानी, समुद्री और हवाई—तीन तरह की  
 सेनाएँ हैं। नये रंग के हथियार और दूसरा मानास भी पर्याप्त मात्रा में  
 है, लेकिन आज दुनिया बहुत आगे बढ़ चुका है। कहा जाता है कि समुद्र-  
 मान भाग में हमारे विरुद्ध है कि उनके पास तेज बंदे और बंदूकें हैं।  
 बाद में हमें जों ने हमारे विरुद्ध है कि उनके पास और भी नये  
 रंग के हथियार थे और उनके सैनिकों को अच्छी सैनिक-शिक्षा हो गई  
 थी। हमारे आज के युग और दूसरे देशों की हानि को देखते हुए  
 हमारा कहना है कि भारत के पास इतने अच्छे हथियार नहीं हैं और न  
 उनके ज्यादा सैनिक हो, जिनके कि होने चाहिये। ऐसी दशा में देश की  
 रक्षा के लिए यह जरूरी है कि अगर हम पर किसी तरह का हमला हो  
 तो हम उसे कमजोर कर सकें। इसी विचार से भारत में ऐसे कारखाने  
 बनाने जा रहे हैं जहाँ हवाई जहाज और रानों के जहाज बन सकें।  
 वैज्ञानिक लोग के लिए जगह-जगह प्रयोगशालाएँ भी खोली जा रही हैं।  
 सैनिक शिक्षा के केंद्र भी बनाने जा रहे हैं। मछुओं और कृषिजों में सैनिक  
 शिक्षा का परिचय देना जा रहा है। जल-सुरक्षा समिति में एक-दूसरे  
 समझ जा रहे हैं और यह कर्मियों का सैनिक शिक्षा भी हुए रही। साथ-साथ  
 भारत में जो देश-देश के सैनिकों को भेजने के लिए भेज दिया किना तरह  
 का, जहाँ न केवल देश के सैनिकों को भेजने का विचार हो जिन्होंने युद्ध के  
 केंद्रों में न केवल देश के सैनिकों को भेजने का विचार हो जिन्होंने युद्ध के  
 केंद्रों में न केवल देश के सैनिकों को भेजने का विचार हो जिन्होंने युद्ध के





र दिये, लेकिन अपने इस काम से उन्होंने यह बना दिया कि ना का अनुशासन किसे कहते हैं और संग्रोज जाति के महान् बनने का कारण क्या है ?

मैत्रिक शिक्षा का एक और लाभ यह है कि उसमें मूठ-मूठ न जाति-प्राप्ति का भेद जाता रहता है। सब लोगों में भाईपार की और एक दूसरे को सहायता देने की गहरी भावना पैदा हो जाती है। इसके तिरिक्त बटोर जीवन पिताने और अपना काम अपने आव कर लेने की आदत पड़ती है।

किन्तु एक और जहाँ मैत्रिक शिक्षा से इतने लाभ हैं वहाँ दूसरी ओर मैत्रिक शिक्षा पर अनुरत से ज्यादा जोर देने से हानि भी है। इसके कारण पड़ले तीस आखीस वर्षों में दुनिया में दो महायुद्ध हो चुके हैं। तमन्नी में अपने वहाँ बन्धे-बन्धे को मैत्रिक शिक्षा देकर यह आशा कि वह हमारे देशों को गुलाम बना ले, लेकिन उसके प्रयासों से संसार का भंडार ही हुआ। बरोहों आहमियों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा और अपार जन, धन की क्षति हुई।

इस समय जब कि विज्ञान की उन्नति परम सीमा पर पहुँच रही है और एतम कम, हाइड्रोजन कम और गहर जैसे भयानक हथियार बन गये हैं, दुनिया के देशों को सावधानी से काम लेना चाहिए। मैत्रिक शिक्षा को हम मानव-जाति के बरदाए में लगा सकते हैं और उसके विनाश में भी। यदि मैत्रिक शिक्षा पर इतना जोर दिया गया कि हम मानवता को भूल कर मैत्रिकवाद नाम के दैतान के इरावों पर चढ़ने लगे तो हमें बाद हमला चाहिए कि वह समय दूर नहीं है जब कि सारी मानव-जाति नष्ट हो जावगी।

### संक्षुब्ध गण-संघ

[संक्षुब्ध गण-संघ में वैज्ञानिक कार्यधारा से बालक दुहा का सम्पर्क हो गया है। इस दुहा की शिक्षाधारा में बचन तथा समस्त वैज्ञानिक गण-संघ की भावना के अन्तर्गत ही बालक दुहा के सम्पर्क में आया है।]





सुखे हुए हैं जिन्होंने मानवक्रांतिवादी के संयुक्त राष्ट्र संबंधी समझौते में भाग लिया। साथ ही वे सब शांति-प्रेम देश जो हमके सदस्य बन सकते हैं को कि हमके प्रदेशों और शक्तिशाली करने के लिए तैयार हों। मियोरिटी कौमिल (सुरक्षा-समिति) की विकारित पर जनरल असेम्बली एक सदस्य-राष्ट्र के संयुक्त-राष्ट्र के सदस्यता-संबंधी अधिकारों और विशेषाधिकारों का कुछ समय के लिए सीमा तक करती है। अगर एक सदस्य-राष्ट्र या एक संयुक्त राष्ट्र-संघ के मित्रात्मकों का लगातार उल्लंघन करता हो, तो मियोरिटी कौमिल (सुरक्षा-समिति) की विकारित से जनरल असेम्बली इस सब को सदस्यता से अलग कर सकती है। सभी विश्व दिनों ३ मार्च १९४० को हेग में स्थायी की अंतर्राष्ट्रीय अदालत ने यह फैसला दिया कि एक देश की संयुक्त राष्ट्र-संघ का सदस्य बनाने के लिए जनरल असेम्बली और मियोरिटी कौमिल दोनों की स्वीकृति लेना जरूरी है। इसके अलावा मियोरिटी कौमिल में स्थायी सदस्यों द्वारा वाटो (विषय) अधिकार बताने के कारण जावरलैंड, आस्ट्रिया, जर्मनी, इटली, कनाडा, इगरी और रुमानिया संयुक्त राष्ट्र-संघ के सदस्य नहीं बन पाये हैं। अभी तक हमके सदस्यों की संख्या २६ है।

संयुक्तराष्ट्र-संघ के सभी सदस्य जनरल असेम्बली के भा सदस्य हैं। हर सदस्य-राष्ट्र पाँच तक अपने प्रतिनिधि असेम्बली में भेज सकता है, पर उसका वोट एक ही होगा। अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा का काम मियोरिटी कौमिल के अस्थायी सदस्यों का चुनाव, ट्रस्टीशिप कमिशन और संयुक्त राष्ट्र संघ की दूसरी संस्थाओं के सदस्यों का चुनाव, संयुक्त राष्ट्र संघ से नये सदस्यों को लेना, राष्ट्रों को संघ का सदस्यता से हटाना और इसी तरह के दूसरे महत्वपूर्ण मामलों असेम्बली में लाये जाते हैं।

मियोरिटी कौमिल — इसमें ११ सदस्य हैं। उनमें, काम ब्रिटेन, चीन, रूस और अमेरिका कमिशन के अस्थायी सदस्य हैं और एक सदस्य दो-दो वर्षों के लिये असेम्बली द्वारा चुने जाते हैं। कामिशन में एक

सभी मामलों पर विचार किया जाता है, जिनके कारण अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष हो जाने की सम्भावना हो।

**न्याय की अन्तर्राष्ट्रीय अदालत :—**इसके १२ सदस्य हैं। किसी एक राष्ट्र के दो व्यक्ति इस अदालत के जज नहीं बन सकते। जनरल असेम्बली और मिक्थोरिटी-कौंसिल मिलकर सिर्फ ऐसे ही लोगों को चुनते हैं, जो कि अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अच्छे जानकार हों। हर जज ६ वर्ष के लिए चुना जाता है। अदालत थाम-तौर पर हेग में ही बैठता है। अदालत संधियों और समस्याओं के कानूनी पहलू पर प्रकाश डालती है और इसका निर्णय हर हालत में मानना पड़ता है।

संयुक्तराष्ट्र-संघ ने पिछले पाँच वर्षों में जो काम किया है। उस पर नज़र डालने से पता चलता है कि संघ की अधिकतर असफलता का मुँह देखना पड़ा है। मिक्थोरिटी-कौंसिल के स्थायी सदस्यों का बौटो अधिकार साम्राज्यवाद, उग्र राष्ट्रीयता, जातीयता, हथियारों की होड़, राष्ट्र-संघ के पास अपनी सेना का न होना, प्रादेशिक समस्याएँ—जैसे बुरुन्डी पैकट, उत्तरी पट्वारिक पैकट और कामिनफार्म—इन सबको देखते हुए यदि कोई ये कहे कि भावी संसार का भविष्य उज्ज्वल है तो वह दुराशा मात्र हो है। लोग संयुक्तराष्ट्र-संघ पर बड़ी आशा बाँधे हुए थे, पर उस सब पर पानी फिर गया। युरुशलम, काश्मीर, हिन्द-चीन, कोरिया, यूनान की समस्याएँ मुँह पाए रखी हैं।

संक्षेप में, संयुक्तराष्ट्र-संघ का उद्देश्य महान् है। क्या ही अच्छा हो कि संसार के समस्त देश इसमें अपना पूरा और सच्चा सहयोग दें और मानवता के बल्याण के लिये इसे सफल बना दें।

### ग्राम-पंचायत

[ इस लेख में भारतवर्ष का नवीन तथा आधुनिक ग्राम-पंचायत-प्रणाली पर प्रकाश डाला गया है। अद्यतन भारत में जो पंचायतों की बड़ा महत्व प्राप्त था। देश के स्वतंत्र होने पर उनका जो नया रूप मानने आया है, उसका विस्तृत वर्णन इस लेख में प्रस्तुत किया गया है। ]

'संघायन' भारत के लिए कोई नया शब्द नहीं है। भारत में संघायन की भारी जगमग उठनी ही पुरानी है, जिनका पुराना कि यह देण है। जिस काज में ही स्थानीय स्वायत्त शासन के लिए प्रत्येक गाँव और नगर 'समा' और 'समिति' स्थापित हो गई थी जो कि केन्द्रीय सरकार का काम के मामले अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व भी करती थी। सामायण, महा-शासन, जनक मन्त्र, आचार्य के सपरिचार्य और मुगल साम्राज्य के समय के विद्वान-ई वकों की पुस्तियों के अपने पत्ररत्ने से पता चलता है कि यह संस्था मुगल पुराने समय से चली आ रही है। अब भी भारत में 'पंच परमेश्वर' की कहावत प्रचलित है। चोख और पंडित राज्यों के समय में दक्षिण भारत में स्थानीय स्वायत्त शासन प्रणाली और गाँव-संघायन बहुत उन्नत थी। जो कोई भी व्यक्ति वह बात ठीक तरह से नहीं बना सकता कि भारत में सबसे पहली ज्ञात संघायन कहाँ और कब बनी। राजनीतिक संघर्षों और सामरिक मुद्दों से भारत के केन्द्र काज रूप में ही परिवर्तन होता रहा है, भारत की आत्मा पर हमका प्रभाव बहुत कम पड़ा है। भारतीय भूमिका और संरचना काज भी भारत के गाँवों में है और वह गाँवों के भीतर मुक्तों से संचालित रहनी चाहते हैं। इन गाँवों की सतया मान खान से अधिक है और इनमें भारत के कोई भी प्रतिष्ठान होता रहने दे। और हमारे से अधिक मुक्तों है। गाँवों से ही भारतीय संस्कृति का उदय हुआ। मेरी के काम में निपुण भाषों की समितियाँ गाँव ही बनी थी। हमारे गाँवों में शासन-कार्य संचालित करने के लिए संघायनों की स्थापना की गई थी, दुर्भाग्य से संघायनी शासन काज में हमका कोर हो गया। जिस की इस निष्कर्षता को तुरन्त के लिए और स्वायत्त व्यवस्था में सबसे अधिक योग देने वाले विद्वानों की काम्य मुक्तों के लिए महात्मा गाँधी ने 'ग्राम शासन' और 'विधान मजदूर शासन' की स्थापना का नाम बताया।

भारत के सभी राज्यों में गाँवों में गाँव शासन का कार्य विचारों का रहा है। इस बीच में सबसे ज़ात प्रमुखता और महत्त्व है। जिस विद्वान को प्रभाव का महत्त्व जो। जो के एक देश में इसका कुछ नक़्क़ा





को मरने के लिए हर वर्ष भुताय होते हैं। पंचायत की बैठक हर महीने कम से-कम एक बार जरूर होती है, जिसका समय, तारीख और स्थान सभी पति ( सरपंच ) या मन्त्री नियत करते हैं और उसका कम-से-कम एक दिन का नोटिस दिया जाता है। बैठकों और कार्यवाहियों का संक्षिप्त और जिज्ञा बोर्ड के सभापति के पास भेजा जाता है।

पंचायतों के काम दो तरह के हैं। एक तो ऐसे काम जो कि उनके हाज़त में करने होते हैं और दूसरे पंचायत की इच्छा पर निर्भर हैं। यदि की सफाई, दवा-दारू और प्राथमिक चिकित्सा की व्यवस्था, साफ पानी का प्रबंध, पम्पों का हिसाब-किताब, मक्कों के निर्माण, मरम्मत और रक्षा की व्यवस्था, थोरो और स्कैतो से गाँव की रक्षा और सरकार द्वारा ग्राम-मुधार के लिए बनाई हुई योजनाओं पर चलने के काम और निर्धार का प्रबंध—ऐसे काम हैं जो कि पंचायत के लिए अनिवार्य हैं। दूसरी ओर मक्कों पर रोगाणु का प्रबंध, ग्राहमरी शिक्षा का प्रबंध, जन्म-मरण और विवाह का लेखा रखने का काम, वृक्ष लगाने और फुर्रें सुर्खाने का काम, पुरस्काराज्य अस्वा-वस्था-केन्द्र की स्थापना, मनबहलान के साधनों, जैसे—छलावा, खेज-रूद पौधा का प्रबंध, किसानों को कर्ज देना और धरेनु उद्योग-धंधों का विकास, मराय, धर्मशाखा आदि बनाना और उसका प्रबंध—ये सब ऐसे काम हैं जो काय समिति के अधिकतर सदस्यों की राय से या सरकार के आदेश द्वारा किये जा सकते हैं।

सामान्य गाँव के प्रशासन स्वायत्त है और १ ग्राम कुचहरा की अध्यक्षता करते हैं। उसका महापति के विषय कुछ दूसरे पंच भी हाग। हर गाँव-मना का एक अपना गाँव काय है। हर पंचायत का गाँव में अपनी एक व्यवस्थाक डल है या कि गाँव का रक्षा और योकी पहर का काम करता है

पंचायती अदालत के जाते किसे हुए सम्मनों और नोटिसों को तामोत्र  
ता है। पंचायत इसके सदस्यों के विद् वेतन और भत्ता देती है।

हर पंचायत का चुनाव हुआ करता एक क्षेत्री है जो कि मनारवि  
संपंच) को कानूनी मामलों में सलाह देता है और गाँव-मना और  
व-पंचायत को बैठकों के विद् कार्यक्रम तैयार करता है।

हर राज्य के स्थानीय स्वायत्त शासन-विभाग के अधीन हर विधे में  
6 ग्राम-पंचायत अदालत रखा गया है, जो कि ग्राम-पंचायतों में ठाहनेउ  
गता है और उनके संगठन के काम में हाथ बैठाता है।

यह बात याद रखने योग्य है कि निम्न-निम्न राज्यों में गाँव-मनाओं,  
वि-पंचायतों और पंचायती अदालतों के काम उनको रचना और सदस्यता  
कुछ-कुछ फर्क है। लेकिन गाँव-पंचायत बनाने का मुख्य उद्देश्य यही  
कि लोग भारत में निज-उज्ज कर सहकारी ढंग पर, सद्भावना के साथ  
रने काम आर करें, करने अधिकारों के प्रति सचेत हों और वे करने अधि-  
गता की रक्षा में उसी जोर के साथ काम करें, जिस जोर के साथ शैली  
रने आहार पर पररा देती है। गाँव-पंचायत बनने में राजनीतिक स्थिति  
में आ हो रही है, लेकिन अगर किसानों को ठीक तरह से शिक्षा दी जाये  
ग भारत निरक्षर हो कम-से-कम पर सदा के विद् विद्य पा जेगा। अगर  
केवल आरम्भ मगहों को तक में रखकर, पड़े पर करना कच्चा आर  
कामों में बिबाई नष्ट जमाने छुड़ने, बड़ा जमान को उपजाऊ बनाने  
जाते का मतलब है कि वे काम हो सब कर सकते हैं। हम बात को पूरी  
करा है कि गाँव-पंचायत भारत का सामाजिक राजनीतिक वैचारिक और  
आर्थिक स्थिति में बहुत महत्वपूर्ण भाग लेगी और भारत के सभी किसान

राष्ट्र-मन्दिर के कंकर, पाषाण वन उसे मनुष्य और सुभी बनाने में सफल  
-कौशिल्य करेंगे ।

## उत्तुङ्ग शिखर का अन्वेषण

[ हिमालय पर्वत श्रृंखला के सर्वोच्च पर्वतों में है । इसकी कं  
चोटियों की उन्नतता का अन्वेषण करने के लिये देश-विदेश के अनेक सा  
अन्वेषकों ने इस बार प्रयास किये, किन्तु अभी तक कोई सफल नहीं हुआ  
है । अन्वेषण यात्राओं का ही इस यात्रा में वर्णन है । ]

भारतवर्ष के उत्तर में हिमालय पर्वत श्रेणी १२६२ मील ल  
-चौड़ी हुई है । इसमें २० शिखर ऐसे हैं जो २२००० फीट से ऊँचे हैं । इ  
शिखरों में एक "गौरीशंकर शिखर" है जिसे संसार में सर्वोच्चतम गिरि-शि  
कहा जाता है । यह शिखर सदैव हिमालयादित्य रहता है और सूर्य के प्र  
में इतना देशीयमान होता है कि अग्नि बहाधीय हो जाती है । इस स  
शिखर पर आज तक कोई मनुष्य नहीं पहुँच सका । इसका दर्शन १  
और इसके रहस्य को समझने के लिये देश-विदेश के अनेकों अन्वेषक  
अनेक बार प्रयास किए हैं ।

भारत सरकार के 'सर्वे विभाग' ( भूमि की माप, निरीक्षण क  
करने का विभाग ) की ओर से एक दल हिमालय की चोटियों की शीर्ष का  
रहा था । इसमें से एक भारतवासी की गतिविधि में ज्ञान हुआ कि हिमालय की  
सबसे ऊँची चोटी २२००२ फीट की ऊँचाई पर है । जयन्त इस गणना की  
पता दल के सबसे बड़े अधिकारी जनरल एवर्सटन को दिया । एवर्सटन ने इसकी  
पूरी २ वर्षों परमाप्त की और तभी से इस चोटी का नाम 'एवर्सटन पर्वत'  
पड़ गया । आज तक की ही गई हिमालय यात्राओं में काट भा यात्रा सफलतापूर्वक

म शिखर तक नहीं पहुँच सका और आज भी यह शिखर गौरव में सिर  
 उँचा किये खड़ा है।

माउन्ट एवरेस्ट के समीपस्थ भाग का अनुसन्धान करना सरल कार्य  
 नहीं था, क्योंकि यह भाग तिब्बत और नैपाल के पहाड़ी प्रदेशों से घिरा  
 हुआ है। इन देशों के निवासी अन्य देशवासियों को इस प्रदेश में प्रवेश  
 नहीं करने देते। सबसे प्रथम तिब्बत के दलाई लामा ने सन् १९२०  
 ई. अंग्रेजों के एक दल को हिमालय के इस भाग की खोज करने की आज्ञा  
 दी। अज्ञात प्रदेशों की खोज में धन से सहायता प्रदान करने वाली इंगलैंड  
 की रायल ज्योग्राफिकल सोसाइटी तथा नेल्सन रूबल का नाम उल्लेखनीय  
 है। इनकी और से सहायता पाकर कुछ साहसी पर्वत-आरोहियों का एक दल  
 सन् १९२१ में इंगलैंड से हिमालय की यात्रा करने चला। पर्वतों की तंग  
 खादियों और ऊँचे २ दरों को पार करके ये तिब्बत के ११००० फीट ऊँचे  
 मैदान पर पहुँच गये, वहाँ से दफों की एक नदी (ग्लेशियर) में होकर यह दल  
 अधिक-से-अधिक १०००० फीट और चढ़ सका। कुल २२८६० फीट की  
 ऊँचाई तक पहुँच कर यह दल लौट आया। इस दल के एक अन्वेषक  
 डा॰ कैलाश का वही पर दफों में मृत्यु हो गई।

सन् १९२२ में जनरल ग्रुम की अध्यक्षता में दूसरा दल इस शिखर  
 का अनुसन्धान करने के लिये चला। गंगटोक घाटी में १६२०० फीट की  
 ऊँचाई पर शिव मठ की बहाव स्थापित किये गये। मानव सामग्री तथा  
 आवश्यक सामान अन्ध सहायता के माध्यम से पहुँचाने के लिये अन्तिम पहाड़  
 २०००० फीट की ऊँचाई पर चंगला में स्थापित किया गया। चंगला में  
 चार मनुष्यों का टी.ओ. एवरेस्ट का और बड़ा

इनका यह यात्रा रोमांचक तथा बड़ा विषय था। अधिक ऊँचाई





एक बार नैपाख की तराई से होकर एक म्बिम सम्मेलन वाली हिमाचल ओर गई थी । पर वह वहाँ न जा सकी ।

सन् १९३६ में कर्तव्य एन्डर ने हवाई जहाज द्वारा शिमा तक पहुँच का प्रयास किया । बिहार के पुरनिया से हवाई जहाज चले । जेद छोटे जहाज के परचान वायुयान एक्सेसट शिखर के ऊपर थे । पहले लोगों ने देखा जिसके लिये वहाँ से मनुष्य के नेत्र तारम रहे थे । वायुयान के नीचे स्वच्छ हिमाच्छादित अजेय पवित्र गौरी शिखर स्पष्ट दृश्य रहा था । उस चकर लगा कर वायुयान झूट आया । परन्तु पैदल यात्रा करके पहुँचना अभी शेष है ।

---













है ? कृषो को मनभावनी कथाओं का कैसा काम से मन्नाया है ? उपरी शोभा तो देखने ही से समझी जा सकती है ।

चैत की चोदनी में उद्यान की शोभा निरालिये । बने कृषो की वं में में धन धन कर चन्द्रिका धिरक रहा है, वृक्षजगति पर फैली शुभ्र उभोर मन को अपनी ओर खींचे लेती है । मगध में चन्द्र को चन्द्री धामा विजि कौतूहल उत्पन्न कर रही है । वर्षा ने उद्यान धामा को नूना बना दिया है वृक्ष गहरी हरियाली पतियों में मज गये हैं । उद्यान में मोरों का ना पतियों का कलगात, चन्द्रों की अठ्ठलिया हृदय को कैसा आनन्द देती है उसका धरोन नहीं हो सकता है ।

उद्यान में कहीं कोयल चूक रहा है, कदा पपीहा पीउ-पीउ कीर जगाये हुये हैं । कहीं मयूर को मयूर पति काना में मयूर उड़ेल रही है कहीं चिरियों की चहचहाहट कानों को प्यारी लगता है कहीं 'उप टप' का आस गिर रहे हैं, कहीं भद भद करके तामुल गिर रही हैं, कहीं चन्द्र, 'टोली किलकारी लगा रही है, कहीं झिलझिला झनकार रही है, कहीं रात हर्ष के मारे लगा काड़े काखन हैं, कहीं प्राम्य-वाजक कानों पर पैग बना रहे । कहीं प्राम्य-वाजिकाये हिमोजे के मयूर गान गा रहा है, कहीं अलख-मोर कूज कूज पर अपनी मयूर मुरली बजा रह है ।

आश्र-संजरी-मणिल भमराइयो में सुगन्ध महक रही है । चम्पा के फुले फजो ने सारे उद्यान को महका दिया है । लाल कोर महुए की छपरें अलग आनन्द दे रही है । मोक्षमरी कोर : नाव की मरक दशकों की नाक को मुग्ध कर रही है । अहा उद्यान उद्यान का ना उमास्वाद काजिये कैसा मीठ है, जामुन का ना स्वाद ही निराला है । ना नाव नहीं दूकते । तनिक इजाहावाडा अमरुड का ना स्वाद ही निराला है । ना नाव नहीं दूकते । क मवो को ना आन कर रहा है । ना नाव नहीं दूकते । ना नाव नहीं दूकते । आधा अब बर है ना । ना नाव नहीं दूकते ।

उद्यान की रसमय काना में ना नाव नहीं दूकते । ना नाव नहीं दूकते । ना नाव नहीं दूकते । कैसा आनन्द कोर उद्यान में उद्यान में ना नाव नहीं दूकते । ना नाव नहीं दूकते । अलख-मोर कूज कूज पर अपनी मयूर मुरली बजा रहा है । ना नाव नहीं दूकते । ना नाव नहीं दूकते । ना नाव नहीं दूकते ।

अहा कैसा अलौकिक आनन्द है ? कैसा स्वास्थ्य बल बुद्धि वर्षक जलवायु है ! सुमे तो यहाँ स्वर्ग का भ्रम होता है ।

यहाँ स्वर्ग सुरलोक, यहाँ कहूँ बसत पुरन्दर ।

यहाँ अमरन का लोक, यहाँ कहूँ बसत पुरन्दर ॥

## कर्तव्य-पालन

विचार-तात्त्विकाः—

(१) प्रस्तावना—कर्तव्य की महत्ता, मनुष्य की उन्नति, अवनति, परा और कीर्ति, सब कर्तव्य-पालन पर ही निर्भर है ।

(२) कर्तव्य-पालन करना मनुष्य का धर्म है ।

(३) कर्तव्य-पालन में लाभः—

मानसिक, शारीरिक और धार्मिक उन्नति होती है, सम्मान प्राप्त होता है, कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति समाज के आदर्श और भद्रा के पात्र होते हैं, कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति समाज का बड़ा हित करते हैं, अपने कर्तव्य का पालन करना ही ईश्वर की सेवा मंवा है ।

(४) कर्तव्य-परायण महापुरुषों की गौरव-गाथाएँ ही संसार का इतिहास हैं ।

(५) उपसंहार—प्रत्येक व्यक्ति को कर्तव्य-निष्ठ होना चाहिये ।

जगत का प्रत्येक परमाणु कर्तव्यशील है । यदि प्रकृति के समस्त पदार्थ अपने अपने कार्य करना बन्द कर दें तो सृष्टि का सारा रूप नष्ट हो जाय । कर्तव्य-पालन के सहारे ही सृष्टि का यह क्रम चल रहा है । व्यक्ति को अपनी जीवन रक्षा के लिए कर्तव्य-पालन की आवश्यकता पड़ती है । समाज — मनुष्य का आश्रय, सम्मान, उन्नति और उन्नति सब कर्तव्य पालन के द्वारा निर्मित है । यदि मनुष्य अपने कर्तव्य कम से व्युत्त हो जाय तो समाज की रक्षा, सम्मान, उन्नति का कर्तव्य है कि वह अपना प्रभु का पालन करे । यदि वह अपने कर्तव्य-पालन में विवश रहता है तो समाज का श्रेष्ठ होने परना । एक कर्मधार वैश्व का कर्तव्य है कि वह सर्वत्र

में राज्य का सामना करे, यदि वह धनदा कर राज्य को पीठ दिखाकर रखवाये तो  
 भारत बड़े ही संसार में उसे कौन बहादुर कहेगा और उसके इस निन्दनीय  
 कर्म की कौन प्रशंसा करेगा ?

प्रायेक मनुष्य को चाहिये कि वह अपने कर्तव्य की समझ और अपने  
 अनुकूल ही अपना आचरण बनाये । भिन्न भिन्न परिस्थितियों में भिन्न भिन्न  
 ही मनुष्य के कर्तव्य होते हैं । मनुष्य को चाहिये कि अपनी स्थिति के अनुसार  
 अपने कर्तव्य का पालन करे । कभी व्यक्ति को अपने समाज और राष्ट्र के प्रति  
 कर्तव्य के अग्रसर होते हैं । कभी पिता, स्त्री, पुत्र आदि के प्रति कर्तव्य  
 पालन करना पड़ता है । किन्तु सच्चा कर्मवीर वही है जो विघ्न-बाधाओं से  
 विशुद्ध विचक्षण नहीं होता और सदैव अपने कर्तव्य-वश वा  
 आरुढ़ रहता है । वह कर्तव्य-पालन में अपने प्राणों की चिन्ता नहीं करता  
 बरन् अपने कर्तव्य-कर्म की पूर्ण करने के श्रिये प्राणोत्थान करने को सदैव  
 प्रस्तुत रहता है । ऐसा महापुरुष अपने देश और समाज का मुख उज्ज्वल  
 करता है ।

कर्तव्य-पालन में ऐसा मिश्रण है जिसका वर्णन करना कठिन है ।  
 कर्तव्य-पालन की छान ऐसा होती है जिसमें अपने और पराये का ज्ञान  
 नहीं रहता । कर्तव्य-पालन का मार्ग विशाख है । कर्तव्य-पालन की प्रेरणा  
 परमात्मा की ओर से होती है, उसकी पूर्ति से हृदय में शक्ति और संतोष  
 होता है । कर्तव्य-पालन से मनुष्य की अपूर्व उन्नति होती है । कर्तव्य-वश  
 के पथिकों की रंक से राजा बनते देखा गया है । कर्मवीर व्यक्ति सब छोड़ों  
 के हृदय पर अपना अधिकार बना लेता है । कर्तव्य-निष्ठ व्यक्ति का सर्वत्र  
 आदर होता है । वह समाज की धार और श्रद्धा की वस्तु बन जाता है ।  
 समाज उसके आचरण का अनुकरण करता है । कर्तव्यनिष्ठ प्राणी अपना  
 और अपने परिवार का तो मुख उज्ज्वल करता ही है । किन्तु समाज और  
 राष्ट्र भी इससे सीमा पाते हैं और नवनव आचरण का उन्मूलन के पथ  
 के अनुगामी बनते हैं । हमें बताने की तो मज और कर्तव्य उपासक करता  
 ही है साथ ही परकोष्ठ में निहित प्राप्त करता है । समाज उसका पालन करता  
 है । इतिहास में महापुरुषों के जीवन का चित्रण करने का उच्च सम्मान





से राज का सम्मान करो, यदि वह सत्य। वह राज्य को नीरद्विभाजित नहीं  
 माने उसे तो संसार में उसे कीमत बढ़ाए। करने की वरुण के रूप में  
 कर्म की कीमत बढ़ाया जाता है ।

अथर्व वेदों को याद रहे कि वह अपने इन राज को मानने और  
 अनुभव ही करना आवश्यक है । जिस जिस परिस्थितियों में जिस  
 ही मनुष्य के मन में होने है । मनुष्य को याद रहे कि सभी मनुष्य के अपने  
 अपने कर्मों का वाचन करो । सभी मनुष्य को अपने समाज और राज्य के ।  
 कर्मों के सम्मान माने है । सभी मनुष्य, सभी, युव, वृद्ध के सभी कर्म  
 वाचन करना चाहता है । किन्तु सच कर्मों की वरुण है जो निम्न-वर्गों  
 विप्लव विप्लव नहीं होता और अपने कर्मों का  
 वाचन रहता है । वह कर्मों-वाचन में अपने सभी का निम्न-वर्गों का  
 सर्व अपने कर्मों-कर्मों को पूर्ण करने के लिए वाचन-वाचन करने को सर्व  
 मनुष्य रहता है । ऐसा मनुष्य अपने देश और समाज का मनुष्य उत्पन्न  
 करता है ।

कर्मों-वाचन में ऐसा मिश्रण है जिसका सर्व का सर्व है ।  
 कर्मों-वाचन की समस्त सेवा होती है जिसमें अपने और वरुण का वाचन  
 नहीं रहता । कर्मों-वाचन का मार्ग विशाल है । कर्मों-वाचन की सेवा  
 वाचन-वाचन की ओर से होती है, वरुण की वरुण से राज्य में राज्य और सर्व  
 होता है । कर्मों-वाचन में मनुष्य को सर्व उत्पन्न होता है । कर्मों-वाचन  
 के पथों को रंक से राज्य करने देना गया है । कर्मों-वाचन सर्व  
 के राज्य पर अपना अधिकार मान लेता है । कर्मों-वाचन सर्व का सर्व  
 वाचन होता है । वह समाज की वाचन और वरुण का वरुण बन जाता है ।  
 समाज वरुण का वरुण का वरुण करता है । कर्मों-वाचन वाचन अपने  
 और अपने परिवार का तो वरुण उत्पन्न करता है । किन्तु समाज और  
 राज्य भी इससे होता पाने है और वरुण का वाचन का वरुण का वरुण  
 के वरुणों में वरुण है । कर्मों-वाचन का वरुण का वरुण का वरुण  
 ही है साथ ही वरुणों में वरुण का वरुण का वरुण का वरुण का वरुण  
 है । इतिहास का वरुण का वरुण का वरुण का वरुण का वरुण का वरुण



गौरी जी ने अपने कर्म-नाशक के लिये अपने घर जाने वाली की लाल  
जगाई और घर में कर्म-की बलि देनी पर ही गणेशजी करते हुए  
हुए ।

हमारे देश में कर्म-पन्थियों के ऐसे राज-महाराजों के होने हुए हैं  
कर्म-पन्थि-उपनिषद् का अभाव है । पराधीनता के दीर्घ-काल के हमारे  
समाज-प्रमाण को विनष्ट करने दिया है । बिना इन बातों के हमारी समा-  
ज-मा कर्म-पन्थ-कर्म पर आकाश नहीं होना । हमारे देश के लिए वह  
हुए की बात है, आज हमारे सामने कर्म-पन्थ-पन्थ है । इसके कारण  
हम आदर्श को दुबला देने हैं । यही कारण है कि हमारा देश छोटे छोटे  
तक पराधीनता के गर्ते में पड़ा रहा । नवयुवकों का अन्धों और निरा-  
कर्म-पन्थ-कर्म के पथ पर अग्रसर होना चाहिए । तब ही हम अपने पूर्वजों  
का मान रख सकेंगे और अपने देश को आधीनता की लाल मर्दूरी से  
शक्तिशाली बना सकेंगे । तब ही हम सब कर्म-पन्थि-कर्म-पन्थ के  
अधिकारी होंगे । अतः हम भारतीय नवयुवकों को सदैव प्रेरित करें

## मधुर-भाषण

विचार-तार्जिका :—

(१) अस्वास्थ्य—मधुर भाषण की आवश्यकता और अभाव ।

(२) मधुर भाषण से लाभ :—

सर्वप्रियता, शान्ति, आदर और पक्ष की प्राप्ति होती है । हृष्या व  
पुण्या त्र होती है, सफलता प्राप्त होती है । आत्मिक अभ्यास होता ।

(३) कटु भाषण से हानियाँ

जी दुःखता है, पुण्या उन्मूलन होता है । अथ अप्रियता प्राप्त होता  
मनुष्यों की सम्पत्ति खोता है ।

(४) उपसंहार—मधुर भाषण और कटु भाषण का फल

मधुर भाषण एक प्रकार की आत्मिकता है जो मनुष्य को कटु भाषण  
जशीकरण मन्त्र की भाँति परिहार प्रदान करे । जीवन का आनन्द, सुखी प







धर्मसंस्थापन के लिए था और जर्मन-अमेरिका युद्ध राज्य-विस्तार के चिन्तित आर्थिक दृष्टि से लाभ के लिए हुआ ।

संसार में युद्ध से बड़ी हानियाँ होती हैं । युद्ध में अगणित निर्मनुष्यों का वृष होता है । बड़े-बड़े बुद्धिमान और कलाकार युद्ध में मर जाते हैं । समाज और राष्ट्रों की उन्नति में रुकावट आ जाती है । देश की संस्कृति नष्ट हो जाती है । उनकी शक्ति का समयमें क्षय हो जाता है । अगणित स्त्रियाँ विधवा हो जाती हैं, समाज में अविचार फैल जाता है । अविचार से नैतिक-जीवन पतित हो जाता है जिसके कारण समाज अस्त हो जाता है । पतित समाजों का अस्तित्व मिट जाता है, अतीत युद्ध मालूम कितने राष्ट्रों को लेकर बैठा, कितने देशों को क्षमता की श्रृंखला में अकड़ा और न मालूम कितने परतंत्र राष्ट्रों को स्वतन्त्र बनाया ?

विगत महायुद्ध सन् १४ में भी राज्य-विस्तारात्मक प्रवृत्ति के ही आश्रय पर खड़ा गया था किन्तु देश में कम्युनिस्ट विचारों का प्रबल अवसर उठ खड़ा हुआ जिसके कारण जर्मन-साम्राज्य को मित्रों के समक्ष दायित्व का देना पड़े । इसके बाद वरसाई की अनुदार सन्धि हुई जिसमें बदले व क्षीण भावनाएँ काम कर रही थीं । वरसाई की अनुदार शर्तों ने जर्मन को चौखें खोली और देश ने अपनी भूख का समाधान । जर्मनी में चारों तरफ अशांति की घटाएँ छा गईं । देश में प्रजातन्त्र-वाद का हृदयक फैला । सहृदियों और साम्यवादियों ने जर्मन देश को पर्दे की आँक में सूँघ चुका देश ने इस प्रवृत्ति की अधिक काख तक न मर्याद । जर्मनी न हिटलर जैसा नेता को उत्पन्न दिया । हिटलर के दृष्ट में जर्मनी का प्रति अगाध प्रेम था वह अपने प्यारे देश के लिए प्राण पशु स लगाया था, उधन खपन अस्मित के बल से सारा जर्मन-साम्राज्य का एक सूत्र में बांध दिया था । हिटलर ने साम्यवादियों और सहृदियों का बहुरंग इरकला का समन-साम्राज्य का शोषण करना बनना के सामन रखवा पीर दिया था 'क' सम्राट का सन्धि अनुष्णाचित अधिकारों का अन्त कर-कर आर्थिक-वृत्ति का नरम पाना पर

आम बर रही थी। हिटलर ने कदमी प्यारी लगता हो सम्मति दी कि मैं  
 एक जीवन में तो मृत्यु हो सकती है। जर्मन लगता ने कदमे प्यारे नेता को  
 सहिष्णुता और समझौता पर कदम-कदम सहने को प्रेरित हो गई।  
 जब जर्मनी का हिटलर सर्वे-सर्वो था। जर्मन लगता कदमे प्यारे हिटलर  
 के सर्वे पर मात मरोधार्य करने को प्रेरित है।

हिरण्य ने हिरण्यवर्ग की मृगु के लक्षण में उमंगों की बागडोर  
 अपने हाथ में ले ली थी। उसके समक्ष में एक बड़ी सावधानी और दुश्मनी  
 से बिना था। मई १९११ ई० में हिरण्य ने बामार्ग की चतुर्थ मंथि की  
 जो गिरि के साथ १९११ ई० में हुई थी, खोल दिया। इससे मने दोनों  
 में बहबली बह गई। १९११ में हिरण्य ने राहु-कैद पर अपना अधिकार  
 बना दिया, उसी मास उसके कैद-मित्रा राहु की अनिवार्य बाधों और  
 बिना का समय एक साथ से बाध हो मान का दिया। १९१२ में हमने  
 काहिरा और मुहम्मद और अपना अधिकार बना दिया। इस मासिक  
 बाधों ने हिरण्य के गिरि में बहुत कुछ विचलन किया, रोने प्रहार  
 किया, शिवाजी की विस्तृत मंथि का निबन्ध। गिरि और की  
 हिरण्य का वह दुश्मनीय बाध हो रहा, उसके निबन्ध हो गया कि उमंगों  
 बिना दुष्ट के साथ पर न बाधेगा। साथ ही गिरि के उमंगों की मैजि  
 लैटरी को भी बड़ी समझ। यह एक बड़ा विचलन मने पर मने का  
 था।

[illegible]







रूपका इंग्लैंड भेजा जा रहा था। देश के नेता मिलेन की इस प्रकार की सहायता के पक्ष में नहीं थे। महात्मा गांधी ने सम्बन्धित संसद में कहा था, वे कहते थे कि मिलेन को न एक आदमी रो न एक पाई। उनमें सर्वत्र घणांति थी। नौरी के बच्चे में कठिनाता था गई थी। बँडों में रूपका विद्रोह होने आरम्भ हो गये थे। किन्तु बाद में वह स्थिति ठीक हो गई।

सर्कारों में बड़े बड़े भयंकर झगड़ों का प्रयोग हो रहा था। जिसका कभी विचार भी नहीं किया जा सकता था। हिटलर स्वयं मोर्चा ले खड़े आता था। वह सारी सेना का संयोजन खुद कर रहा था। इसमें बड़े सहायों को बुलाया था। इंग्लैंड पर बड़ी बड़ी भयंकर गोलाबारी की गई जिसके कारण इंग्लैंड निवासियों की नींद दराम हा रही थी। काम की विजय के बाद हिटलर की निगाह बात्रकान मायट्रूप के देशों पर गई उनके एक २ देश पर बड़े बड़े फायर काज में उसने विजय प्राप्त कर ली। युद्ध का मोर्चा मिलेन की मर्द् के कारण बड़ा भयंकर रहा। ग्रीक के राष्ट्र में मिलेन और जर्मन शक्तियों का संयोजन हुआ, किन्तु विजय कमनी के रूप रही। मिलेन का बड़ा जन-धन नारा हुआ।

इधर रूस ने स्वयं जर्मनी से सर्कारों माना था। मगर यह सब मिलेन की राजनीति के खेद थे। विजयान हिटलर ने रूस के निवास युद्ध की घोषणा कर दी। ३ मास तक घमासान युद्ध हुआ रहा था। मिलेन ने भी युद्ध से जोड़ी तक का जोर लगा रक्खा था किन्तु विजय 'नये जर्मन' की हो रही थी। रूस की राजनीति रूस को नाराज कर रही थी। हिटलर की विजय 'नये जर्मन' को आशा मिली हो रही है।

सत्तार का अर्थिण इसी लड़ाई पर निर्भर था। कौन जानता था कि युद्ध कब तक चलेगा ? इस में अनुमान का कनना मिश्रण हुआ यह सब नब एक अचिन्तनीय विषय था। इनका अर्थिण हुआ कि युद्ध कितने हो गा ? की हतहतता की सर्वे के जिय शक्ति कर गया। किन्तु हा राष्ट्र स्वतन्त्रता का आनन्द उपलब्ध कर गये और किन्तु हा राष्ट्र अपना अर्थिण सत्तार से मिला गये।





नागरिकों का तीसरा कर्तव्य है कि वह अपनी जनता को किसी पारस्परिक हल्लह में न पड़ने दें। यह तब ही सम्भव हो सकता है जब जनता में परस्पर प्रेम हो, किसी के हृदय को किसी प्रकार की सामाजिक या धार्मिक ठेस न पहुँचाई गई हो। एक को दूसरे की सहायुभूति हो। सबमें मातृभाव की भावनाएँ हो। जनता में धार्मिक विषमता न हो। जनता में सबको आगे बढ़ने के समान अधिकार हो। प्रायः साम्प्रदायिक भावनाएँ कभी-कभी बड़ा उग्र रूप धारण कर लेती हैं। अतः साम्प्रदायिक भावनाओं को उत्पन्न ही न होने दिया जाय। जनता में सहिष्णुता के भाव साम्प्रदायिक भावनाओं को मिटाने में बड़े सफल सिद्ध होते हैं। जनता में ऐसी संस्थाओं और आन्दोलनों को जन्म दिया जाय जिससे जनता प्रेम-सूत्र में बन्ध जाये और विद्वेष की भावनाएँ ही उत्पन्न न हों। अछूतों और इतर निम्न जातियों को उठाने का भरसक प्रयत्न किया जाय, उनको समान अधिकार दिये जायें। उनको कुओं से जल भरने और देव-दर्शन का अधिकार होना चाहिये। हिन्दू मुसलिम एकता का आन्दोलन जारी रखा जाय, सब को धार्मिक अधिकार ऐसे दिए जायें जिससे एक दूसरे की भावनाओं को ठेस न पहुँचे।

नागरिकों का चौथा कर्तव्य है कि वह अपनी जनता की आर्थिक दशा को ठीक रखें। आर्थिक दशा के ठीक-ठीक न रहने से जनता में घोर अशान्ति रहती है। अशान्ति की दशा में कोई कार्य सुचारु-रूप से संचालित नहीं हो सकता। नगर में बेकार जनता बड़ा उत्पात मचाती है, जहाँ तक सम्भव हो सके बेकारों के समस्या को बिल्कुल न बढ़ने दिया जाय। शिक्षित बेकारों का अधिकता जनता और सरकार दोनों को समान-रूप से खतरनाक है, क्योंकि शिक्षितों में ऐसे ऐसे मस्तिष्क होने सम्भव हैं जिनका अनेक प्रकार का शेतानी मूक, जिनसे जनता और सरकार दोनों परेशाना में पड़े। अतः नागरिकों को चाहिये कि वह ऐसे उद्योग-धन्यों को जन्म दें जिससे बेकारों की आजातिका प्राप्त हो जाये और वे बेकार रहकर जनता में अशान्ति उत्पन्न न करें। उद्योग-धन्यों और कला-कौशल का उन्नत बनाने के लिए आवश्यक है कि धनिक लोग समिति-प्रणाली का



नागरिकता के अधिकार में सबसे अधिक आवश्यक बात यह होनी चाहिये कि कौंसिल, प्रान्तीय कौंसिल, केन्द्रीय कौंसिल, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और म्यूनिसिपल बोर्ड में राष्ट्र की समस्त स्त्री पुरुषों को मेम्बर चुनने का अधिकार हो। बहुत ही उचित और न्याय-संगत है। चुनाव में खड़े होने के लिये पक्षिक हैमियत प्रतिबन्ध हटा देना चाहिये। इससे सर्व-भाषारण्य को भाग लेने का अवसर प्राप्त होगा। सरकारी पद प्रान्ति में आति-नाति या सम्मान का विचार न किया जाय। केवल योग्यता पद की कसौटी हो।

समाजिक कार्यों में धैर्य से काम लिया जाय। समाज के कार्यों में लष्ठा की बड़ी आवश्यकता है। मानाजिक कार्यों में पश्चात् बढ़ा-बूझावों होता है। स्वतंत्र सम्मति समाज में अधिक महत्व रखती है। नागरिकों को चाहिये कि वह पद या धन के लालच से अपनी प्रतिष्ठा को खोयें। न्याय के अवसर पर पश्चात् से काम न लें। शान्ति और व्यवस्था पर रखने वाले कानूनों का समर्थन करें, इसके विरुद्ध कानून का विरोध न करें। सबको समान अधिकार हों। सबको धार्मिक स्वतन्त्रता हो। निर्धन और अमहायों की सहायता की जाय। हिमालय के कानूनों को उप-योगी बनवाया जाय। नागरिकों का सबसे उपयोगी कर्तव्य यह है कि वह अपना निर्णय और निश्चय स्वयं करें। देश की बागडोर नागरिकों के हाथ में हो।

हमारे देश में जनता की अधिकारों का अभाव रहा है। विदेशी गवर्नमेंट के कारण हमने अपने नागरिक अधिकार तक प्राप्त नहीं हो सके थे। किन्तु अब हम अपने न्याय-परायण गवर्नमेंट में यहाँ कहना है कि वह जनता के अधिकारों का बाग-डोर को ठीक और भी ठीक कर दे जिसमें समाज जागृति का सब विराज हो जाय। इसके साथ ही जनता का भी कर्तव्य है कि वह अपने राष्ट्रीय सरकार को पूरा सहयोग दे और कर्तव्य तथा अधिकारों का समान रूप में उपयोग करें।



## ब्रह्मचर्य की महिमा

विचार-तालिका :—

- (१) भूमिका, ब्रह्मचर्य की आवश्यकता
- (२) शारीरिक पुष्टता और सौंदर्य वृद्धि
- (३) मानसिक विकास
- (४) आत्मिक उन्नति और विकास
- (५) ब्रह्मचारियों की गाथाएँ
- (६) उपसंहार—ब्रह्मचर्य का लाभ और मनुष्यों का कर्तव्य ।

विज्ञान पाठ वेद-पदों का पढ़ा गया ।

विद्या विद्यास विजुषरों का पढ़ा गया ॥

सारे असार पन्थ सगों को दिखा गया ।

आनन्द-मुखा मार दया का विद्या गया ॥

बह कौन दयानन्द यमी के समान है ।

महिमा बसंद, ब्रह्मचर्य की महान है ॥ “संकर”

संसार में ब्रह्मचर्य से बाहर कोई दूसरा तप नहीं है । ब्रह्मचर्य धर्म का पावन करने वाला मनुष्य देवता कोटि में था जाता है । जो व्यक्ति ब्रह्मचर्य के महत्त्व को समझती है और यथावत् ब्रह्मचर्य धर्म को पावनी है वही कीर्तमान, मनाजी, शक्तिमान और दीर्घ-जीवी होती है । जो व्यक्ति ब्रह्मचर्य धर्म को दुकरानी है, वह निरन्तर, दुर्बल, रुग्ण और अस्वस्थ होता है । भारतवर्ष में कभी असीम ब्रह्मराजी पुटन होने से, किन्तु आज ब्रह्मराजी ब्रह्मराज, दुर्बल और अशक्तिमान पुटन है, इसका कारण भारतीयों को ब्रह्मचर्य विषय और ब्रह्मचर्य धर्म का निराकार करना है ।

सम्प्रसारि महाराज करने शिष्यों को आयुर्वेद का उपदेश देने सत्त्व ब्रह्मचर्य का महत्त्व बना है — ‘यु यु राजा और युवा का नाश करने वाला ब्रह्मचर्य ब्रह्मचर्य है ।’ आयुर्वेद मंत्रा, न सृष्टि, ज्ञान, शारीरिक और इन्द्रिय सम्मान वादना है ब्रह्मचर्य का निरन्तर ।



समता संगत में मिश्रता कठिन है। चात्र संपाद से ऐसा दुःख होता है जो और अनुमान की और भीष्म विनामद की समीप ब्रह्मचर्य विद्या को जानता हो ?

इन महापुरुषों के जीवन का सब स्मरण हो आता है तो हीरोमॉचिन हो उठता है। भीष्म विनामद के सामने उनके सगरी पुत्र परशुराम जी को भी हार माननी पड़ा था। भीष्मजी मरते महापुरुषों को भीष्म विनामद के सामने मिर मुकाना पड़ा था। यन्तः ब्रह्मचर्य व पाश्चात्त करमा निवृत्त आशयक है। इस पर एक ऐतिहासिक कथा बड़ी उत्साह-वर्धक है। एक था भीष्म विनामद काही क राधा की सगरी सम्बन्ध और सम्बाधिका तीन कम्पामों को जीन जाने। सम्बाधिका भी सम्बन्ध का विवाह तो उन्होंने करने कोटे नाहों चित्रागद और विधि वीर्य से कर दिया और ब्रह्मचर्य सब आशय करने के कारण उन्होंने सगरी को काही लौट जाने को कहा। सम्बा बड़ा दुःखी हुई वह दुःखी होने परशुराम जी के पास गई और अपनी सारी कह कहा कह सुनाई। परशुराम जी सम्बा की कथा सुनते ही कहया उत्पन्न हो आई। परशुराम जी सम्बा से कहा कि सम्बा मैं भीष्म से तेर विवाह करिष् कहूंगा, यदि न मानेगा तो मैं उससे युद्ध करूंगा। यदि भीष्म हार गया तो उसे सगरी सुन्दारे साथ विवाह करना पड़ेगा।

परशुराम सम्बा को लेकर भीष्म जा के पास था और कहा कि इस कम्पा के साथ विवाह करओ। भीष्म जा न हमका सम्बन्धकार। दिया और कहा कि यदि आप मुझ युद्ध म हरा न ग रा मैं अवश्य आप से विवाह कर लूंगा। दोनों में घोर युद्ध रहा। भीष्म जा सगरी ब्रह्मचारी थे, परिणामतः परशुराम हार गया और सगरी ब्रह्मचारी भी ने ब्रह्मचर्य के सब पर विजय लड़ी। यान के राजा है कि यदि भीष्म से शरीरबन्ध न दाता तो। कना अपना प्रतिज्ञा का पालन कर सकते कहादि नहीं अनमान जा न लक्ष्य से नालिन ब्रह्मचर्य के पूरे में सगरी

या और पाच की आशय के समुद्र

। बात की बात में उलझ गये थे । इसे ब्रह्मचर्य की महिमा न कहें तो ना कहें ?

हमारी आयु निरप्य खोय होती जाती है । हमारे मनुष्यक खिलने से हले ही मुरम्मा जाने हैं, इसी कारण हमारी औसत आयु कम होती जा रही है । हमारे देश में दौगिक-नियमों के स्थानों पर घुरे व्यवहार प्रचलित हो गये हैं । अतः देश के नेताओं का कर्तव्य है कि वह देशवासियों को योग नियमों पर चलाने का उद्योग करें और ब्रह्मचर्य का उचित रीति से पालन करावें । बिना ब्रह्मचर्य के पालन के सुख और ऐश्वर्य की प्राप्ति करना निरी मूर्खता है ।

ब्रह्मचर्य ही हमारी विद्या, वैभव और उन्नति का एकमात्र साधन है । ब्रह्मचर्य ही जीवन है, ब्रह्मचर्य ही मानवी शक्तियों को विकास देने का मूल साधन है । अतः हमें ब्रह्मचर्य अथ का पालन करके बल, उत्साह और ऐश्वर्य प्राप्त करना चाहिये । अपने मन को मदैव पवित्र रखना चाहिये । अन्त में हम इतना ही कहना चाहते हैं कि ऊपर जो साधन बतलाये हैं उन पर चलकर ब्रह्मचारी बनो । ब्रह्मचर्य द्वारा शक्ति उत्पन्न करने के परचात देश तथा जाति का उद्धार करो । बस यही मनुष्य का धर्म है और इसी में मानव-जीवन की सार्थकता है ।

## वर्धा-शिवा-योजना [ वैसिक-शिवा ]

विचार तालिका:—

- (१) प्रस्तावना - वर्तमान शिवा-प्रस्तावों से असन्तोष
- (२) वर्तमान शिवा-प्रस्तावों दोषपूर्ण हैं ।
- (३) महात्मा गांधी की शिवा-योजना
- (४) वैसिक-शिवा का विशेषताएँ
- (५) वैसिक शिवा का पाठ्य-प्रस्ताव
- (६) नवन शिवा का वैसिक-शिवा
- (७) उपमहार-वेकारी और अशिवा का निराकरण

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली ने हमारी संस्कृति को गहरा घक्का पहुँचा है। वर्तमान शिक्षा-प्रणाली का मूलराज कुछ ऐस जगह लेकर हुआ जिसकी पूर्ति अब आवश्यकता में अधिक हो गई है। वर्तमान शिक्षा हमारी सामाजिक स्थिति को हलना खराब कर दिया है और देश को हल भीचा गिरा दिया है कि इसको उठाने में पर्याप्त समय लगेगा। हम वहाँ को प्रत्येक भारतीय अनुभव कर रहा है और वर्तमान शिक्षा-प्रणाली ने एकदम बन्द करने की चिन्ता में है। भारतीय महिलक में हम समस्याओं भारी समस्याओं का पत्र कर रक्खा है।

सन् १९०२ के स्वदेशी आन्दोलन के समय देश ने अनुभव किया कि शिक्षा-प्रणाली में भारतीयता होनी चाहिये। उस समय अनेक राष्ट्रीय संस्थाओं का जन्म हुआ और प्रयत्न हुए, किन्तु वह प्रयत्न केवल स्थिति तक ही सीमित रहे और स्वदेशी आन्दोलन के साथ ही साथ भारतीय शिक्षा-प्रणाली द्वारा शिक्षा देने पर जोर दिया। देश में गुरुकुलों की विद्यार्थीयों की स्थापना हुई। राजा महेन्द्रप्रसाद ने वृन्दावन में प्रथम शिक्षा, म० मुन्शीराम ने गुरुकुल कागड़ी और चार्वर्गनिधि म० यू० पी० ने गुरुकुल वृन्दावन की बुनियाद डाली। राष्ट्रीय-सहायभा ने जो बने प्रयत्न किये। असहयोग आन्दोलन के अवसर पर सन् १९११ ई० में गुर्गा और काशी में विद्यार्थीयों का जन्म हुआ। १९वीं शताब्दी के अन्तिम हि में ही देश का यह निश्चय हो गया कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली हमारे सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को हल नहीं कर सकती, उस अनुपयोगिता के सम्बन्ध में अनेक नेताओं ने अपने विचार प्रकट किये और कहा कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में जो कोई उँचा चार्ज है और जो समाज में ऐसे व्यक्ति उत्पन्न कर सकती है, जो समाज के उपयोगी बन सकें, तब तो अपना विकसित स्वभाव है और समाज के काम सहकार्य में भाग ले सकें। वर्तमान शिक्षा-प्रणाली ने समाज में एक सच उत्पन्न कर दिया है। १९वीं शताब्दी के अन्तिम की नींव पर अवधारित है। समाज अब उस समाज उत्पन्न करने का चिन्ता में है जिसमें सद्वर्ग

भी भाषनाय अधिक हों। पुरानी और एक सदी पिछले आदर्श को लेकर चलने वाली शिक्षा-पद्धति को बदलने की बड़ी भारी आवश्यकता है। इस शिक्षा में विषमता है, केवल पूंजीवादी व्यक्ति ही इसे प्राप्त कर सकते हैं, सर्वसाधारण के विकसित होने की इसमें कोई गुंजायश नहीं है। सबसे मुख्य बात यह है कि वर्तमान शिक्षा-मण्डली में भारत के मूल नैतिक-आदर्शों को कोई स्थान नहीं दिया गया है।

विरव के महापुरुष महान्मा गांधी की दृष्टि भी इस दृश्य शिक्षा-मण्डली की ओर गई और वह उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करने लगे। सन् १९३० ई० में भारत के कई प्रान्तों का शासन कांग्रेसवादी प्रतिनिधियों के हाथ में आ गया। महान्मा गांधी ने इस अवसर को उपयुक्त समझा और इस महत्वपूर्ण विषय को जनता के सामने रखकर कांग्रेस मंत्री-मण्डलों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। इस शिक्षा-योजना के सम्बन्ध में महान्मा जी ने जो अपनी जनता में हरिवन में की थी उसके अवतरण यह है—“मेरी योजना यह है कि बालक को शिक्षा उसे उद्योग-धन्धे मिला कर शुरू की जाए, इस प्रकार अपनी शिक्षा के आरम्भ में ही वह कुछ उपार्जन करने लगे। स्कूलों में विद्यार्थी जो चीज बनायें उसे राज्य मोल ले ले। इस प्रकार धन में बाहर राज्य को शिक्षा पर कुछ भी व्यय नहीं करना पड़ेगा। बालकों के स्कूल स्वावलम्बी होंगे।” महान्मा गांधी की आज्ञानुसार देश ने अनुभव किया कि हम कर्मों को भी क्यों न पूरा किया जाए? अतः २२, २३ नवम्बर सन् १९३० ई० में राष्ट्र के प्रमुख प्रमुख नेताओं का एक सम्मेलन वर्षा में हुआ जिसके प्रेसीडेंट डाक्टर बाबिरहसन प्रिन्सिपल जाना मिलिया देहली नियत हुए। महान्मा जी ने अपनी महत्वपूर्ण शिक्षा-योजना को सम्मेलन के सामने रखा। सम्मेलन ने बहुत से हम योजना को स्वीकार किया। हमी योजना को वर्षा-शिक्षा योजना के नाम से पुकारा जाता है। यू० पी० प्रान्तीय गवर्नमेंट ने हम योजना में कुछ प्रान्तीय आवश्यकताओं के अनुसार उलट-फेर करके अपने प्रांत के लिये स्वीकार कर लिया है और हमें केविक शिक्षा का नाम दिया है, जिसको विद्येपठार्थे निम्नलिखित है।

बर्षा-शिक्षा योजना की अंशान्तरा यह है कि उद्योग-धर्मों की शिक्षा को केन्द्र बनाया जाय और अन्य विषय सभी के समान वसते हों। उद्योग-धर्मों की वास्तव-प्रणाली विद्यार्थी वैज्ञानिक दृष्टि में हो। प्रयोग-शिक्षा पढ़ते हों, फिर धर्मों का ज्ञान कराया जाय। बर्षों की विद्यार्थी सरकार ३ वर्ष की अवस्था में दिया जाय और १४ वर्ष की अवस्था पर तक हाई स्कूल के समस्त शिक्षा समाप्त हो जाय। शिक्षा का माध्यम हिंदी भाषा-भाषा हो, अंग्रेजी भाषा को उपर्युक्त को देखा न हो। शिक्षा परितः और निःशुद्ध हो। बर्षों का वातावरण देखा रखा जाय जिसमें उनके समस्त मानसिक भावनाएँ विकसित हों। शिक्षा समाप्त करने पर जो लोकरों के लिये दूर-दूर भेजना न पड़े। यह राष्ट्र का समस्त संप्रदाय बर्षों जीवन-क्षेत्र में उभरे। वैयक्तिक शिक्षा में नागरिकता की शिक्षा को विशेष महत्व दिया गया है। देश की नागरिक शिक्षा की कितनी आवश्यकता यह बात किसी से छुपी हुई नहीं है। वर्तमान शिक्षा में मनुष्य का अधिकार है ? देश के प्रति हमारा क्या कर्तव्य है ? हमका किंचित भी नहीं कराया जाना। कहने का अभिप्राय यह है कि वैयक्तिक शिक्षा सर्वप्रथम नहीं आती शिक्षा है। बेकारी और निरक्षरता की समस्या हमसे बड़ी मुश्किल से हल हो जानी है। कक्षा कौशल और उद्योग-धर्मों को विकसित होने पर पूरा अवकाश मिश्रता है। बर्षों की स्वाभाविक क्रियाशीलता से पूरा लाभ उठाया जा सकता है। सब से बड़ा लाभ वैयक्तिक शिक्षा में यह है कि वास्तविकता को ज्ञानवाना नहीं समझते। उन्हें स्कूल अपने घर से भी अधिक प्यारे लगते हैं। ऐसी उन्नत शिक्षा से हमें पूर्ण लाभ उठाना—वाह्य से उसके प्रचार में मन, मन और धन में प्रयत्नशाली रहना चाहिये।

सन् १९३८ ई० को हरिपुरा कांग्रेस में इस शिक्षा-योजना का प्रस्ताव रखा और उसे सर्व सम्मति में अपनाया गया। यन्त्रणा की रूपरेखा निम्नलिखित थी —

- (१) समस्त देश में प्राथमिक शिक्षा ३ वर्ष तक अनिवार्य की निश्चय कर दी जाय।

- (२) शिक्षा का नाभ्यन मात्रमाया हो।
- (३) शिक्षा उपयोग-धन्यों को केन्द्र बनाकर दी जाए, पहले विषय-ज्ञान कराया जाए, बाद में माहिर बनाया जाए।
- (४) नागरिक शिक्षा पर पूरा बल दिया जाए।

इसके परचाद सद कांमिसेसी प्रांगों में वर्धा-शिक्षा योजना के अनुसार शिक्षक तैयार करने के लिए प्रारम्भिक स्कूल खोले गये। आज इन स्कूलों में शिक्षा पाये हुए अध्यापक महानों प्रारम्भिक स्कूलों में शिक्षा दे रहे हैं। सभी बेसिक-शिक्षा योजना का क्षेत्र बहुत परिमित है। यदि गवर्नमेंट उसे पर्याप्त महत्ता देती रही तो हमने योजना का अपेक्षित अभिप्राय सिद्ध हो जायगा। विगत वर्षों की यदि रिपोर्ट सत्य है, उनमें किसी प्रकार का गोलनाह नहीं है तो निस्सन्देह बेसिक-शिक्षा का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है।

ऊँची शिक्षा के विषय में वर्धा-शिक्षा योजना में बताया गया है कि कावेज की शिक्षा केवल राष्ट्र की आवश्यकता की पूर्ति का साधन बनाया जाए। अर्थात् राष्ट्र को जिन उपयोग-धन्यों की आवश्यकता है अथवा जिन व्यवसायों से राष्ट्र को लाभ होता है, उन उपयोग-धन्यों और व्यवसायों की पूर्ति के लिए वह कावेज शिक्षा को प्रचलित करे अन्यथा उसकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं है। महाना जी का कहना है कि जिस व्यवसायों को जिन प्रकार के मनुष्यों की आवश्यकता है वह अपनी अपनी आवश्यकता के अनुसार विद्यालय खोले और विद्यार्थियों को शिक्षा देकर अपने जिम्मे तैयार करे। यदि कावेज स्वावलम्बी हो। कला-कौशल और साहित्य के कावेज उनका अपनी उदारता से बढ़ाये। महाना जी ज्ञान की अधिकता को व्यय का बोध समझते हैं जिस में व्यवहारिक जीवन हो हो नहीं सकता। फिर प्रश्न बनता है कि महाना जी की स्कीम के अनुसार राष्ट्र में योग्य अध्यापकों का अभाव हो जायगा। उनका मनाधान यहाँ है कि किसी विषय में शिक्षक नहीं रखने वाले स्थानों को ऐसे ऐसे केन्द्रों में भेजा जाए जहाँ वे कोई उपयोग-धन्या सीख सकें। वर्तमान सुविधासिद्धियों को बन्द कर दिया जाए और वर्तमान एजुकेशन का



अपने सिरे से परिवर्त्तन कर दिया जाय ।

अक्टूबर सन् १९३२ ई० से काँग्रेसी-मंत्रियों ने अपने कपने से इस्तीफा दे दिया है । जिसके कारण वर्धा-शिवा योजना का कार्य मर पड़ा है अथवा जिस सीम गति से कार्य आरम्भ हुआ था वह उस गति निधि से चलता रहना तो विस्मयदेह राष्ट्र की व्यवस्था बहुत ! सुन्दर जायी ।

अन्त में हमें यही कहना है कि देश को वैसिक शिक्षा को अत्यन्त चाहिये और हमको देश के कोने कोने में फैलाना चाहिये अथवा पड़ना ही हाथ रह जायगा ।

## श्रुतुराज वसन्त

विचार-शक्ति —

- (१) प्रजापति—सिंहार चक्र की समाप्ति पर वसन्त आग और धृति की व्यवस्था ।
- (२) वसन्त में वन उपवन की शोभा ।
- (३) वसन्त का मनस्व के हृदय पर प्रभाव ।
- (४) होमिकोन्मय और मानवी स्वभाव पर वसन्त का प्रभाव ।
- (५) वसन्त और कवि ।
- (६) उपसंहार—सारांश ।

पृथ्वी में केवल कक्षारण में कुछ अन्न में,

व्यारिण में कश्चित् कश्चीन विकस्यमान है ।

कहे 'पद्माकर' वराण हूँ मैं पौन हूँ मैं,

पल्लव में पौकृत पञ्चाक्षर पाल्म है ।

हृत्त म विद्यान म बुद्धि म वस वसन्त म

वसन्त म वसन्त म वसन्त म वसन्त म

वसन्त में वसन्त में वसन्त में वसन्त में

वसन्त म वसन्त म वसन्त म वसन्त म 'पद्माकर'

शिशिर की सरदी से ठिठुराई हुई प्रकृति ने एक अंगड़ाई की और जगत को एक नवीन स्फूर्ति का अनुभव होने लगा। शीत की भीषणता का अन्त हो गया। पशु पक्षियों का भय दूर हो गया। गृध्र लतादि धानन्दिता हो, पल्लवित होकर खिलने लगे। कोयल मनवाली हो गई। उसने अपना मस्ताना राग अलापना आरम्भ कर दिया। दक्षिण पवन अपनी मधुर मनवाली चाल से चलने लगा। वृष और पौधों ने नवीन पक्षियों से अपना शरीर टक लिया और वह अतुराज वसन्त के स्वागत में फूलों के उपहार लेकर खड़े हो गये। आन मंजरियां अपने प्रीतम वसन्त की आवाज देखकर प्रेम में पुलकायमान हो गईं और पुलकायलि के भिम इधर उधर झूमने लगीं। वन उपवन पुष्पों के द्वार ले लेकर अतुराज वसन्त के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। सूर्य ने भी अब अपनी तिरछी चाल छोड़ दी और ये अब उत्तरायण हो गये और सीधे सिर पर आने लगे। जाड़ा वसन्त का आगमन सुन हिमालय की चोटियों पर जा दिया। वसन्त का भी बाल्यकाल समाप्त हो गया। वह चंचल गति से इधर उधर दौड़ता फिरता है। दक्षिण पवन पुष्पों से पराग का सौरभ लेकर वसन्त के शरीर पर टबटन करती फिरती है। सूर्य की किरणें पीली हो गई हैं। सेतों में पीली पीली सरसों फूल रही हैं। वन उपवन विविध प्रकार के पुष्पों ने लदे चित्रकार की चित्रशाला में दिखलाई पड़ रहे हैं।

प्रकृति का रूप अनुपम है। चारों ओर आनन्द ही आनन्द उमंगित हो रहा है। और आसों की सुगन्ध ने भौरों को उन्मत्त बना डाला है। वह उन्मत्त हो फूल फूल पर भागे फिर रहे हैं। तनिक प्रकृति के मनोज्ञ आंगन का तो अवलोकन कीजिये। कैसा आकर्षक और कैसा उन्मादकारी दृश्य है। विकसित कुसुम हृदय को आकर्षित कर रहे हैं। समस्त वनस्थली में पवन ने ऐसा सौम्य बखेरा है कि बेचारी कोयल और भौर अपने हृदय पर अधिकार नहीं रख सके हैं। कोयल कुहू कुहू करके गला फाड़े काजती है। भौर अपनी मधुर गुंजन से सुरली का मनोहारी स्वर निकाल रहे है। पर्याहा पान्-पान् की रट लगा रहा है। गायक का भी सिर हिलने लगा,

हमने भी बसन्त की रागनी देख ही । कवि का हृदय बसों लुनने का प्रेम सन्वाधी माधवी और चम्पा लगे मिश्र रही हैं । राक का रूप बिजरा ही पड़ता है, हमने हर्षानिक से सारी बन्धुमि को पूर्ण से दिया है । चन्द्रमा की प्रसर दिग्गों ने समिको क हृदय में धारें का रूप कर दी है । मिमिमा ने तारों में अपेक्षाकृत आकषण बढ़ गया अनेक जीवन नेतनामय हो गये । सब में जीवन गति प्रवाहित हो उ कवि मानुष और प्रेमी व्यक्तियों के हृदय का र में नहीं रहे, वे पृथ्व होकर मण्डलने छगे ।

अहा ! हम समय प्रकृति ने अपना कैसा अनुपम रूप बनाया खल और देखे फूलों के बोझ से खर रही है । ताजवा में विकसित कु अपनी मनोहारी छवि से हृदय को आकर्षित कर रहे हैं । गुजरा की मन्वात्रे भीरी से भरा पड़ी है । जिनका कञ्चित कल-गान हृदय में अनुपम आनन्द उत्पन्न कर रहा है । उपवन और वाटिकाओं के लीले, गुलाबी और बैजनी फूलों को देख देखकर हृदय उसका पड़ता चम्पा, अमोही और भेंटकी की सहक ने समस्त वनस्थलों को सहका है । आमों के घाग आम-मंत्रियों से खर रहे हैं । मन्त्रियों की मधुर म ने सारे मानव-जगत् का मन मोह लिया है । अमराद्यों में कोयल का क गान प्रत्यक्ष दिवा हुआ है जो परम मानव-हृदयों को अपनी ओर ख रहा है । बेल और पिटप फूले हुये हैं जो अपने हृदय के उल्लास प्रदर्शित कर रहे हैं । शोज, सुगन्धित पवन अपनी मधुर गति से चक्र कोयलाधियों पर अपना प्रसार काज रहा है । चन्द्रमा प्रकृति की उ नुमादकारिण छटा को सबलोकन कर जिराना सतधन क साथ उ हो रहे हैं । चन्द्र की चरकीली छटा अपना प्यारा प्रेम का चूर्ण क अन्तर्लोक से दूनी हो गई है । आमों से छिपटा मुद्रा गीता मानव-जगत् ऐसा फूल है कि उसके पल तक नहीं दिखना पड़ता । उज्ज गुलाब का नद सुन्द कलियों पर भीमों के मुण्ड आ आ कर गिर रहे हैं और न जान क्या सोच हुए गुलाब की चुकीली कलिया पर गुनगुनात फिरते हैं । शामद वह गुला

ने महकता झूँदते हैं। अहा! तनिक मधुकों को मधुर तान की तो अवश्य  
 हीजिये, कैसा हृदयाकर्षक स्वर है? मोहन की मोहनी वंशी के मधुर स्वर  
 ने भी मात कर रहा है। गुलाब के ताँपल कटि बेचारे मधुकों को शंकर  
 की कंठिशूल से भी अधिक दुखदायी हो रहे हैं। प्रेमातिरेक के वशीभूत  
 ने भी मधुकर प्राणों की चिन्ता न करके शिशूज रूखाती काँटों के चारों ओर  
 घबर लगा रहे हैं। अरने अनन्य प्रेमां को ऐसा तड़ोना देख गुलाब भी  
 अपने प्रेम की न चुरा सके और लिजलिजाते चेहरे से अपना विशाल हृदय  
 अपने प्रेमास्पद के आलिंगन के लिये खोल दिया, अहा! कैसा मनोहारी  
 दृश्य है?

इस सहज सुहावनी श्रुति के आते ही मानव-हृदय की तो बात ही  
 क्या पूछते हो? मानव-हृदय हर्षातिरेक के वशीभूत हो शीशों उछलने  
 लगता है। सबके हृदय में एक नए प्रकार की दिव्य स्फूर्ति का अनुभव  
 होने लगा है, न जाने क्यों? मानव-हृदय किसी दूमेरे नापी के लिए तड़पने  
 लगा है। उसके हृदय में एक प्रेम का टोम उठता है। उसे फूटते हुए वृष  
 ज्वादि में चारों तरफ कुसुम-घनुर्धारी श्री मन्मथ जी का ही धामाय  
 दृष्टिगोचर होता है। शीतल सुगन्धित पवन, रंग-विरंगे कुसुम, मौलों की  
 गुंजार, आनन-मंत्रियों की महक, कोयल की मनोहारी एक मानव-हृदय  
 में उथल-पुथल मचाए बिना रह जायें यह कथ संभव है? इस समय  
 हृदय पर विजय पाना क्या साधारण काम है? इस समय वह अपने हृदय  
 की उछालों की नहीं राह सकता। उसे चारों तरफ वसन्त ही वसन्त नज़र  
 आता है। चित्र में वसन्त, काव्यों में वसन्त, गीतों में वसन्त, कहीं तक  
 कहे वसन्त का अपूर्व लुटा ने मानव हृदय का विनशित का दिया है।  
 उन्मुक्त और उत्साह में ऐसा मनन हो जाता है कि उसे आनन्द-मूर्ति  
 का न ज्ञान नष्ट रहा। उसका सरसता आनन्द आनन्द-मूर्ति अनेक  
 मातों के स्वर में फूट निकला है। कभी गाना है, कभी गुनगुनाता है, कभी  
 उन्मत्त मनाता है और कभी भाव-विभोर होकर नाचने लगता है।

वसन्त का स्वागत मानव-समाज वसन्त-पंचमा ही में आरम्भ कर



नृपते हैं। उनकी सृष्टियों मानव-हृदय में छोड़ोतर आनन्द उत्पन्न करती हैं।

कवि लोग समस्त को श्रुताब्द कहते हैं। निरमरुद्द समस्त का वैभव लक्ष्मणों का सा है। पृथ्वी का वह मुकुट पहनता है। कोकिल उसके द्वार पर स्वीकृत करता है। वन जी/ उपवन राजमहलों की भांति शोभा सम्पन्न हो जाते हैं। लटकती आग-मंजरीयाँ और झरने का काम करती हैं। पुष्पों का पराग ही हृदय की तरह काम देता है। बिघर देखो उपर शोभा ही शोभा दिवाई पड़ती है। बिघर देखो, बिघे देखो, सब आनन्द में मग्न हैं। सबने सदैव जाना, सदैव स्फूर्ति और नया जीवन आ गया है।

कनित मृदु घण्टाघण्टी, झरत दातु मधुनी ।

मन्द मन्द आवन चरयो, कुंजर कुंज कुटीर ॥

### प्रातःकाल घूमने के आनन्द

विचार-तालिका :—

- (१) प्रातःकालीन प्रकृति का सुन्दर रूप ।
- (२) सूर्योदय में पहाड़ उठने वाले प्रकृति की समस्त दृश्य का लाभ उठाने हैं "सोरे सो सोरे, जागे सो पावे"
- (३) प्रकृति की मनोरम सृष्टि, पक्षियों का कड़ मगन ।
- (४) प्रातःकाल घूमने में लाभ—

एक सुन्दर होता है यह प्रकृति का स्थापान होता है, प्रातःकालीन स्थापितों में एक होता है, प्रकृति में परिवर्तन प्राप्त होता है इन्द्रिय नृप होता है प्रकृति के सादृश्य में कोमल नृत्य का उदय होता है प्रकृति में स्फूर्ति आता है, प्रातःकालीन प्रकृति होता है ।

- (१) प्रातःकालीन सुन्दर प्रकृति का स्थापन ।
- (२) इस काम, प्रकृति का विकास ।
- (३) प्रातःकालीन कोकिल-हृदय ।

चन्द्रदेव ने उषा की आकाश में अवता, सौन्दर्य और प्रकाश प्रतिनिधि रूप में घोषा । मगधान भारक के भागमन के स्वागत में रिष्ट अनुपम सौन्दर्य से सुसज्जित हो गई । पक्षियों का कल-गान-स्वागत-हुँ-हुँ-सा सुनाई देने लगा । विकसित कुसुमों का सौरभ शीतल समीर के साथ मिलाकर स्वागत के कार्य में संलग्न हो गया । अनुदिक एक महीन हल्की का मधार होने लगा । पूछ प्रसन्नता से पूछ सटे । ओम विन्दुओं ने सुकम-कलादि पर कदना कमीका सौन्दर्य म्भीदावर कर दिया । विषर देकें उपर बसन्त-सा जिल रहा है ।

प्रहृति करण साकी पदम कर हृदयाली फिरती है। हमने कमल से ही का दीर्घकाली बरही। कमल प्रेमी का कोमल स्पर्श पा मित्रित्व कर हंस पड़े। और भी कदमे हृदय पर काबू न रख सके, उन्होंने पूछ पूछ का रसास्वादन आरम्भ कर दिया और अब भी यह मधुर वाग्नु बजाई कि समस्त मन उपवन गुंजायमान हो गया। पक्षियों से भी यह हृदय का भाव न छूक सका, यह गला काक काक कर कलंगान में लगे हो गये, रसाज की दाज पर बैठी कोकिल ने यह पंचम स्वर में रा देना कि मागी अमराइयां भात होकर झुमने लगीं। मधुरों की संध्वनि से आकाश गूँस रहा। त्रिपर देखो ऊपर प्रहृति का समिप हो रहा है। समस्त दिशाओं में आनन्द और प्रसन्नता का एक स साश्रान्व है।

इष्टि के ऐसे मनोमय समय में जो आनन्द स्पृष्ट है वही उत्तम है। जो-जो मूर्खों-द्वारा से पहले ब्रह्म-वेदा में उठकर इष्टि के सम्मुख समय का आनन्द उठाने हैं वही वास्तव में शौचिक आनन्द अनुभव करते हैं। 'मोरे मो मोरे, राग या रागे' निम्नोक्त इष्टि इस सम्पूर्णित दल से वही आनन्द प्राप्त होता है जो बहुत ही उठने के सम्मुख है। इष्टि का सम्मुख आनन्द आनन्दों पर संतोष आनन्द का लीन का सम्मुख आनन्द आनन्द है। आनन्द इष्टि निम्नोक्त सम्मुख से सम्मुख आनन्द आनन्द है। आनन्द आनन्द, विनि

सो स्वतंत्रता और प्रकृति की सी प्रसन्नता आ जाती है। हमारा प उत्पाद में भर जाता है और दिन भर काम करने की स्फूर्ति आती है।

शहर और गाँव का वातावरण मनुष्यों, पशुओं, कार्मिकों आदि कारण प्रायः गन्दा हो जाता है। नाज़ियों, पागानों और श्वासोच्छ्वास कारण हमारे लिए रहने सहने के कमरे और मकान की वायु विषैली हो जाती है। अतः हम विषैली वायु से बचकर जंगल में स्थायी वायु सेवन करने को जाते हैं। प्रातःकाजीन वायु सेवन से रक्त शुद्ध हो जाता है और उसमें रक्त-बीजाणुओं की वृद्धि होती है। गुब्बारा हवा में धूलि अथवा अन्य प्रकार के विकारी कीटाणु भी नहीं होते। यह वायु पूर्ण लाभदायक होती है। इस समय प्रकृति शान्त होती है। शान्त प्रकृति को पवित्र वायु जीवन के लिये बड़ी शारीरिक प्रदत्त होती है, टहलने में यह ध्यान रखना चाहिये कि घूमने की गति जितनी अधिक होगी उतनी ही यह अङ्ग-प्रत्यङ्गों को अधिक चल देने ली होगी।

प्रातःकाजी घूमने से हमारी इन्द्रियों को प्रकृति का साहचर्य प्राप्त होता है जिससे उन्हें पूर्ण तृप्ति प्राप्त होती है। कोमल भावनाओं का दय होता है। दिन भर काम करने के लिये हमारा हृदय ध्यान में भर जाता है। पर्यटन करने में शारीरिक अवयवों को पर्याप्त संख्या में हिलना चलना पड़ता है। इस कारण अजीर्ण रोग, जो हमारे जीवन को कम्मा बना देने हैं, पास तक नहीं आते। मस्तिष्क में एक नवीन स्फूर्ति अन्वेषण होता है और शरीर के मे कड़े कान करने के योग्य तैयार हो जाता है। हृदय का गति ठीक हो जाता है। धार्मिक और अध्यात्मिक स्फूर्ति के अनन्त निरन्तर हो

प्रातःकाजी पर्यटन में जो प्रकृति में पूर्ण साहचर्य प्राप्त कर लेते हैं वह प्रकृति के प्रत्येक अङ्ग-प्रत्यङ्ग से परिचित हो जाते हैं। इस प्रकार जीवन का ज्ञान हो जाता है। प्रकृति की स्वच्छन्दता का देख कर मानवा











हैं। वही नहीं उठ सकती। वह सदैव 'अधोगति' के गर्त में पड़ी रहती है। हमारी अधोगति के समूचे निम्न भाग देस रहे हैं।

अन्त में हम यही कहेंगे कि उपर्युक्त साधनों पर चढ़कर देश उन्नति के मार्ग में अग्रसर हो सकते हैं। हमें चादिये कि हम अपने देश में उन्नति के साधनों को लुटाएँ। शिक्षा और दस्तकारी का प्रचार करें। कुरीतियों को समूह नष्ट करें। प्रेम और एकता को बढ़ाएँ। सचरित्रता को स्थान दें। तब ही हमारा देश अधोगति के गर्त से निकल सकता है। शिक्षा और धार्मिक प्रवृत्ति ने भी कुछ राष्ट्रोन्नति में बाधा डाल रखी है उन्हें भी उठाकर दूर करने की चेष्टा करें, कुरीतियों को नष्ट करें। कष्टों से प्रेम करें। राष्ट्रनाशिनी घूट को अपने देश में फलने फूलने न दें, तब ही देश उन्नति का आनन्द उपभोग कर सकते हैं।

## शिक्षा और आचरण

विचार-शालिका :—

- (१) प्रस्तावना—शिक्षा का उद्देश्य।
- (२) शिक्षा और मानसिक विकास।
- (३) आचरण और धार्मिक-शक्ति।
- (४) क्या वर्तमान शिक्षा-प्रथाओं आचरण को पुष्ट करती हैं ?
- (५) शिक्षा से ज्ञान प्राप्ति।
- (६) शिक्षा और सार्वजनिक जीवन।
- (७) शिक्षा और आधुनिक-उत्थान की समस्या।
- (८) कुछ महापुरुषों के उदाहरण।
- (९) भाव की परिस्थिति।
- (१०) उपसंहार—प्राप्ति।

शिक्षा का उद्देश्य मानवीय शक्तियों को विकसित कर जीवन को सुखवर्धित रूप में पूर्ण बनाना है। सम्मुख शिक्षा मनुष्य को जीवन-



वर्तमान शिक्षा केवल हमारी मानसिक शक्तियों को विकसित करती है। यह हमें जीवन-संग्राम के लिए तैयार नहीं करती और न आध्यात्मिक शक्तियों को विकसित करती है। यह मनुष्य जीवन को डोम नहीं बनाने का प्रयत्न करती है। हमारी वर्तमान शिक्षा हमें धार्मिक शिक्षा नहीं देती, न दया और करुणा का मार्ग सुझाती है और न ईश्वर के दिव्य गुणों को ज्ञात करती है। यह हमें ऐसे मनुष्य नहीं देती जिन्होंने विश्व-इत्यादि का सा दृष्टि हो। अतः वर्तमान शिक्षा प्रणाली किसी प्रकार से हमारे आचरण को सुध नहीं करती। जिसका अधिक मत हो सके जगत् ही शीघ्र ही शिक्षा-प्रणाली को बदल देना चाहिए। शिक्षा हमें मानव प्रकार के विषयों का ज्ञान करानी है, हमें विविध भाषा का मनोवृत्ति का ज्ञान होना है, विज्ञानों की विचार-धारा से परिचित होना है, बने न महापुरुषों के साहित्य आदर्शों का ऐसा ही ज्ञान होना चाहिये कि वह मानव हमारे समक्ष ही उपस्थित है। मूल्य तुलना से ही वे साहित्य, शास्त्र और अन्तर्गत से राष्ट्रप्राप्ति सुध और ईश्वर प्रकाश ज्ञानी हमको जिज्ञा द्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं।

महापुरुष ही मनुष्य जीवन की मूर्ति है। महापुरुष के सामने ही का मनुष्य विभूति हो सके है। एक धर्मोक्ति कहती है—धन चक्रा, जो नष्ट नहीं गया, धर्म चक्रा चक्रा गया तो कष्ट चक्रा गया और महापुरुष चक्रा गया तो सर्वज्ञ चक्रा गया।" निम्नोक्त जीवन में आकाश मनुष्य बनने है। "आकाशः परमा धर्मः" अर्थात् महापुरुष ही परम धर्म है। धर्म इतने मनुष्य साहित्य पर ही उसके अनुभव आचरण से बनता है। यह मानव स्वभाव से ही है। ऐसे कि निम्नोक्त पाठ पर आकाश का ज्ञान जिज्ञा विषय वह शीघ्र से ही मानव साहित्य के ज्ञान से ही बन सके। महापुरुष का स्वभाव हमारे आध्यात्मिक जीवन से है। निम्नोक्त, इत्यादि नैतिक और विवेक के सिद्धान्तों को वास्तव बनने से ही बन सके। ईश्वर ही महापुरुष है। ईश्वर शिक्षा का मूल्य है। निम्नोक्तों का उचित बनना है। आकाश, चक्रा और निम्नोक्तों का ही है।





की अपेक्षा को उत्सर्जन करने वाले बड़े-बड़े शिक्षित ही मिलेंगे। वे समा का चार्ज करना नहीं जानते। उनके यहाँ उत्पन्न हुल्लाह का नाम ही मनुष्य है। उनमें और पशुओं में भेद नहीं रह गया है।

मनुष्य को चाहिये कि वह अपनी शिक्षा के साथ अपने भावों को भी ठीक रखने का प्रयत्न करे, क्योंकि चरित्र-निर्माण का वास्तविक समय बाल्यकाल ही है। यद्यः पाठशालाओं में शिक्षा और सदाचार की शिक्षा साथ ही साथ होनी चाहिये। सारा बेपथारी सदाचारी विद्यार्थी केन्द्रोपरि स्वभिचारी विद्यार्थी से कितना ही गुना अच्छा है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली ने सदाचार का दिवाळा निकाळ रक्खा है। जहाँ सदाचार निवास करता है वहीं शान्ति निवास करती है।

सारंग यह है कि हमारी शिक्षा ऐसी हो जो हमें जीवन-संग्राम लिये तैयार करे और हमें आध्यात्मिक शान्ति भी प्रदान करे। तब ही शिक्षा का उद्देश्य पूरा हो सकता है, अन्यथा नहीं।

## पुस्तकों के अध्ययन के आनन्द

विचार-संग्रहिका :—

- (१) प्रकाशना—मानव-जीवन और आनन्द।
- (२) पुस्तकें मनोरंजन का साधन हैं।
- (३) पुस्तक पढ़ने से चारित्र्य-संस्कार और आनन्द-वृद्धि होती है।
- (४) अरबीज साहित्य जीवन को मजबूत करता है।
- (५) पुस्तकें साम्यवत्ता देती हैं और मित्र से अधिक आनन्द उत्पन्न करती हैं।
- (६) ज्ञान-वृद्धि होती है।
- (७) सन्-साहित्य मानव-जीवन को उत्तम बनाता है।
- (८) पुस्तक-अध्ययन ही वास्तव में सच्चा आनन्द है।
- (९) उपसंहार—पुस्तक-अध्ययन और हमारा कर्तव्य।



हमारा संलग्न मिलनी ही उत्तम पुस्तकों के साथ होगा, उतना ही हमारा जीवन उत्तम और आदर्शपूर्ण बनेगा। नैतिक पुस्तकें हमारे आचरण में सुधारती हैं। जब हम रामायण पढ़ते हैं तब हमारे जीवन पर आत्म-पावन, आत्म-भाव, पातित्व-धर्म, नम्रता और शिष्टाचार के भाव उत्पन्न होते हैं। कबीर साहब के ग्रन्थ हमें सच्चरित्रता को और बरबस सीखते हैं। सूर के पद हमारी हृदय-गत मलीनता को धोने में साधुन से भी अधिक कार्य करते हैं। पुस्तकें निस्सन्देह हमारे जीवन को वृद्धि प्रदान करती हैं। हमारे हृदय की मलीनता कभी मैल को काटती है, हृदय में शान्ति का बीज बोध करती हैं।

आपत्ति-काल में पुस्तकें सन्धि मित्र की भांति सामर्थ्य प्रदान करती हैं और हमारी मानसिक चिन्ताओं को दूरका करती हैं। कभी हमारे हृदय में अपार साहस भर देती हैं और हमें कठिन से कठिन कार्यों करने को तैयार करती हैं। आपत्ति की घड़ियों में और कठिन समस्याओं के उपस्थित होने पर जब हमें चारों तरफ से मानसिक चिन्ताओं घेर लेती हैं और हमारा हृदय व्यथित होने लगता है, ऐसे अवसर पर महापुरुषों की चेतावनियाँ और उपदेश बड़ा उत्तम कार्य करते हैं। वह चेतावनियाँ हमारे धीरज को बचाती हैं और हमें आगे बढ़ने को उत्साहित करती हैं, जिनमें हमें उत्साह और आश्वासन मिलता है। वह हमारे हृदय के धाँव पर पड़ियाँ बाँधती हैं और हमें दुखी नहीं होने देती।

पुस्तकों के अध्ययन से ज्ञान-वृद्धि होती है और मस्तिष्क विकसित होता है। विद्वानों के विचारों से परिचय प्राप्त होता है। नित नये और उत्तम विचार-देशने को मिलते हैं। हमारा निर्याद वरीष्ठ होता है। हम विविध आचरणों से अपने आचरण का समन्वय करते हैं। अपने में गुणों का अभाव पाने पर वैसा ही अपने में गुण लाने का प्रयत्न करते हैं। हमें उत्तम और भद्र आचरण का अनुभव होता है। स्वयं और अस्वयं के ज्ञान का भाव होता है। हमें मृदुम निरीक्षण का बान पाना है। हमें अपनी सकलताओं और विफलताओं स्पष्ट प्रकट होन लगती हैं।



## विद्यार्थी में कौन-कौन गुण होने चाहियें ?

विचार-मालिका :—

(१) प्रवृत्तता—विद्यार्थी का मूल्य ।

(२) विद्यार्थी के विशेष गुणः—

परिचयी और स्वात्म-सेवी, साम-संवर्दी और हार्मि  
निष्ठ, निमग्न और मग्नता, साक्षा-वाचन, अपने गुरुओं के  
अच्छ और बुर, शिक्षा-गुण और श्रेष्ठ, स्वाभाव और  
में तत्त्व, मित्रव्यवस्था का व्यवहार ।

(३) उपसंहार—हमारे देश के विद्यार्थी ।

प्रत्येक देश और समाज की उन्नति उसके छात्र-समुदाय के हाथ  
निर्भर है । विद्यार्थी अपने मजिद और शरीर की शक्तियों को विविध  
राष्ट्र और समाज का दिन कर सकते हैं । प्रत्येक सम्यक् राष्ट्र को उन्नति  
वर्षों के अनुरूप समाज ही के साम-वर्ग और बलिदान ने कार्य किया है ।  
अपने विद्यार्थियों की शारीरिक, मानसिक और साध्यात्मिक उन्नति  
विद्यार्थियों की सम्माननाओं और उच्च गुणों ही पर अवलम्बित है । विद्यार्थी  
अपने देश की सामाजिक कुलियों और सामिक स्वाध्यायों का ध्यान कर  
सकते हैं । शारीरिक और शैक्षणिक उन्नति कर सकते हैं ।

विद्यार्थियों को समाज-सेवा में प्रवृत्त होने के लिए आवश्यक है  
कि वे अपने को इस योग्य बनाएं कि उन्हें जीवन में कभी किसी का साधन  
न कोठला न दे । वर्तमान शिक्षा में विद्यार्थियों को प्रामुख्यता होने  
चहता है । विद्यार्थियों का कठिन परिश्रम होता है, चाहे, वह कभी कभी  
कामों में चलाकर न देते । वही वे अपने प्रिय विचारों में उन्हें एक योग्य  
आपन ही । वही वे एक आनन्दमय कर । आनन्दमय करने में उन्हें  
आनन्दमय का आनन्द न जानें । वही कही भी उन्हें ज्ञान का जीवन  
की रक्षितकर है, वही उन्हें अपने में कभी एक साधन और उन्नति न की  
कभी कभी उन्हें उन्नति-मार्ग का मार्ग ही न दे । वे समाज का ध्यान करते हैं



विषय उनके जीवन को सुखी बनाते हैं। विद्यार्थियों को विनय और प्रदक्ष करनी चाहिये। ये दोनों मुख्य विद्यार्थियों के अग्र हैं जिसके बड़ से ग जीवन संग्राम में विजय प्राप्त कर सकने हैं।

आज्ञा-पाठन मनुष्य का सबसे उत्तम गुण है। संसार में अनुग्रह के बिना कोई कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता। आज्ञा पाठन अनुग्रह का ही रूपान्तर मात्र है। विद्यार्थी में आज्ञा-पाठन का गुण होना चाहिये वह अपने अध्यापकों की आज्ञाओं का हमी भाँति पाठन करे जैसे कि अपने माना पिता की आज्ञा का पाठन करता है। आज्ञाकारी विद्यार्थी अध्यापक अधिक प्रसन्न होते हैं और उनकी सारी महानुभूतियाँ विद्यार्थी साथ हो जाती हैं। अध्यापक आज्ञाकारी बालकों को बड़े प्रेम से शिक्षा की शिष्याएँ देते हैं और उसे जीवन संग्राम के उपयोगी मनुष्य बनाते हैं। गुरुओं की कृपा से सरस्वती की भी कृपा उन्हें प्राप्त हो जाती है। सरस्वती के आशीर्वाद से मनुष्य संसार में अपनी जीवन लीला को खेले समर्थ हो जाता है।

विद्यार्थी में उपर्युक्त गुणों के अतिरिक्त एक गुण वह भी होना चाहिये कि वह अपने गुरुजनों के प्रति आदर और सम्मान के भाव रखने की गुरु हमें अनेक उपयोगी शिक्षा देकर पशु से मनुष्य बनाता है उस के प्रति हमारा बहुत कर्तव्य नहीं है कि हम उसके लिये मस्तक नवाते उसके प्रति अर्पण रखें ? उसके दुःख-दर्द में उसका हाथ बढ़ाएँ। कि विद्यार्थी अपने अध्यापकों की श्रवणा करते हैं और उनकी आज्ञा का उपाय और सर्वत्र उनका दृष्टि में लक्ष्य रहता है, समान गतिव, सम विद्यार्थी कभी अपने जीवन में सकल नहीं हो सकते। उनका कभी कल्याण प्राप्त नहीं हो सकता। सम विद्यार्थियों में कभी सरस्वती प्रसन्न नहीं होती। वह कभी पराजिता में दलाल नहीं होत। उनका जीवन सर्वत्र आनन्दानुभूति में विराज रहता है, सम विद्यार्थी अपने घर, समाज और राष्ट्र लिये बड़े फलक सिद्ध होत हैं।

नई नई बातें सोचने की प्रवृत्ति हृदय विद्यार्थियों में सर्वत्र बनी





प्रमोद की वस्तुओं को अपने से दूर रखना चाहिये, तब ही वह सा विद्यार्थी कहलायेगा और जीवन-संग्राम में सफल विप्राही सिद्ध होगा।

एक नीतिकार ने बताया है कि विद्यार्थी में कौवे की सी चेष्टा, श का सा ध्यान, कुत्ते के समान निद्रा होनी चाहिये। कहा है:—

काष्ठचेष्टा वक्रस्थानं श्वान-निद्रा तथैव च।

अवसाहारी गृहस्थानी विद्यार्थी पंचलक्षणम्॥

क्या उपरोक्त गुण हमारे देश के विद्यार्थियों में पाये जाते हैं? हाँ मिथ्या है 'नहीं'। हाँ, स्वतंत्र देशों के विद्यार्थियों में यह सारे गुण मिलते हैं। उन देशों के विद्यार्थी निर्व्यग्रह में रहते हैं। स्वतंत्र देशों के विद्यार्थी भारतीय विद्यार्थियों की भाँति घरका-मुश्की और गाँधी-नाचोच नहीं करना अपने अध्यापकों की अवहेलना करते हैं। अमेरिका और जापान विद्यार्थी स्वयं उद्योग-धर्मों में अपनी वढ़ाई का स्वर्ण न्यायित्व लेते हैं, जिनसे उनकी शिक्षा का बोझ उनके माँ-बाप पर नहीं पड़ता। भारत के विद्यार्थी अपने माँ-बाप के ऊपर भार-रूप होकर रहते हैं और देश के बनाव-बिगार में घर की आर्थिक दशा को सोचता देखते हैं। वे स्वास्थ्य का बिल्कुल विचार नहीं रखते। किन्तु स्वतंत्र देश के विद्यार्थी स्वास्थ्य का दिनरा ध्यान रखते हैं इतना किमी अभ्यस का नहीं रखते।

## विज्ञान के चमत्कार

### विचार-नैतिकता

(१) विज्ञान का लक्ष्य विचार।

(२) विज्ञान का उद्देश्य सत्यता —

साधन स योज्यं ज्ञानं हि, परिश्रम और समय की क रणी है, मानका अभिलाषाओं की पूर्ति होती है, रोग-निवार दाता है, विद्या-प्रचार और मनोरंजन में सहायता प्रदान करता है। विज्ञानिकता और ध्यान की पूर्ति होती है।



मनुष्य की शरीर-रचना पर बड़ा मूल्य से मूल्य अध्ययन हो रहा है। इंजैक्शन के नये से नये तरीके खोजे जा रहे हैं। त्रिपु नई-नई औषधियों की आंच-पड़नाछ होकर चिकित्सा-विज्ञान में उन्नति हो रही है। किरणों के द्वारा शरीर के भीतरी भागों का परिचय प्राप्त किया जा रहा जिससे रोग का मूल कारण ज्ञान हो जाता है। और उसकी चिकित्सा नियमानुसार हो सकती है। राजवस्त्र, कोर आदि रोगों का निदान डॉक्टर के ही द्वारा होने लगा है। सर्जरी के कामों में विज्ञान ने पर्याप्त मात्रा में उन्नति की है। मूल्य से मूल्य नाड़ी तक की चीर-काट की उन्नति है और उसमें पूरी सफलता प्राप्त होती है।

विज्ञान से मनुष्य के निरर्थक व्यवहारिक कामों में बड़ी सराहीर सहायता पहुँचाई है। दिवाभलाई, सुइयाँ, बरत, कागज, पेंसिल, त्रिपु आदि निरर्थक व्यवहारिक वस्तुएँ हमें कम मूल्य में विज्ञान ही की सहायता से प्राप्त होती हैं। चायकल तो विज्ञान की उन्नति की चरम सीमा हो रही है। चाय वायुयान पर सवार होकर विशाल आकाश की सैर कीजिये। अथवा प्रशान्त महासागर के विशाल वस्तुस्थल पर जहाजों द्वारा यात्रा कीजिये। रेडियो पर बैठ कर दुनिया के समाचार सुनिये अथवा गाथा सुनकर अपने चित्त को बहलाइये। विज्ञानी के पंखों की सुन्दर समीर में प्रगाढ़ निद्रा का सुख लूटिये अथवा मूल्य के प्रकाश को ललित करने वाले विज्ञानी के प्रकाश का सुख लूटिये। कदा तक कहें यदि आपको अपने सुख की सोचा बढानी है तो श्रीम पाउडर लगाइये, मित्र-मण्डली का आकर्षक फोटो केमरा से खिंचवाइये। यदि आप गान-ध्रिय हैं तो भाँति भाँति के वाद्य-यन्त्रों की श्रिया करके अपने आनन्द को बढा लीजिये। यदि दिल भर के परिभ्रम से थकान आ गई है तो आइये किमी मिनेसोटा-दाख में बैठकर अपनी मनोरंजन कीजिये।

साक्षरता-प्रचार में अधिक शिक्षा-प्रचार से उन्नति विज्ञान ने की है अथवा आपको द्वारा शिक्षा-प्रचार रेडियो की अवेधा सहाय पढता है। ही मध्य देशों ने रेडियो द्वारा जनता को शिक्षित बनाया है। भारतवर्ष में



को सद्बुद्धि दे कि वे इन वैज्ञानिक आविष्कारों को नर-संहार में न लायें । गत महायुद्ध में परमशक्ति के द्वारा 'एटमबम' का आविष्कारके आचान के नगरों का जो संहार किया गया वह घातक शक्ति का बड़ा निदर्शन है ।

संसार में बेकारी बढ़ रही है, उसका एकमात्र कारण वैज्ञानिक उन्नति है । मशीनें सहस्रों मनुष्यों का भोजन छीन लेती हैं । संसार के कच्चा-कौशल और घरेलू उद्योग-धन्यों को यह मशीनों का प्रचार चौरा किये देता है । यही कारण है संसार की बेकारी सुरमा के चरन की भाँति बढ़ती ही जाती है ।

वैज्ञानिक उन्नति ने संसार में बड़ी हानि यह की है कि मानवी मनोवृत्तिवां बहिर्मुखी हो गई है, जिसके कारण उनकी अक्षुप्त आकांक्षा बनी ही रहती है । वैज्ञानिक ढंग से बनी हुई वस्तुयें ऐसी आकर्षक हैं जो मानवी-इच्छा को बरबस अपनी ओर खींचती हैं । वैज्ञानिक वस्तुओं के मनुष्य की विद्याभिलाषा और सौन्दर्य में अभिवृद्धि की है । चाय का संसार 'स्वामी' पीपी और मौज करो' के सिद्धान्त पर चढ़ा जा रहा है । वह किसी सम्य बात को सुनने तक को तैयार नहीं है । धर्म के बन्धन ढीले पड़ गये हैं । धर्म की सुल्ले खजाने हँसी उड़ाई जा रही है ।

निष्कर्ष यह है कि विज्ञान ने जहाँ मानवी-जीवन को मजबूर बनाया है वहाँ उसको कटु भी बनाया है । जहाँ सुख के साधन जुटाये हैं वहाँ उसके गल्ले की काँपी भी तैयार की है, किन्तु मनुष्य दुःख को नहीं दख रहा । एक युग ऐसा आयेगा कि मनुष्य इन आविष्कारों की प्रज्ञा की दृष्टि से दम्बेगा ।

## मनोरंजन के साधन

विचार-नालिशायें —

- (१) मनोरंजन जीवन का क्या आवश्यक है ?
- (२) समयानुसार मनोरंजनों में परिवर्तन ।
- (३) रेडियो द्वारा मनोरंजन ।



मनोरंजन और मनोविमोह में बड़ा आगिनकारी परिणाम कर दिया है। विज्ञान ने हमारी मनोवृत्ति को बदल दिया है। जो सैकड़-सालों हमारे लक्ष को गुरु बखाले थे अब उनमें बड़ा आकर्षण नहीं रह गया। जो दरब हस्त बहुत ध्यारे लगते थे अब आज उनके इतिहास हो रहे हैं।

मनोरंजन की सामग्रियों में सबसे ऊँचा स्थान आवाजक रेडियो को है। इस यन्त्र ने संसार का इतना उपकार किया है कि संसार के सभी से अपने गायक का गाना या ध्वनि घर के कोने में बैठकर सुन सकते हैं। रेडियो के आविष्कार ने मानवी गायन-कला की पूरी निवृत्ति कर दी है। अब कहीं आवाज भटकने की आवश्यकता नहीं रहने ली। संसार के विभिन्न भागों पर प्रत्येक समय और प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध हो सकते हैं और अपनी गायन-कला से संसार को मोह सकते हैं। रेडियो परवाह, प्रामोदक और हारमोनियम आदि बाजे मानवी-आवाज को प्रतिस्थापित कर सकते हैं।

मनोरंजन का दूसरा उपयोगी साधन सिनेमा है, जिसमें प्रत्येक समाज का व्यक्ति लाभ उठा सकता है। दिन भर की मानसिक वृत्तान्ति मिलने के लिये सिनेमा से सुख और सस्ती मनोरंजन कोई नहीं है। चित्रपट पर प्राकृतिक दृश्य बड़ी सुन्दरता से प्रदर्शित किये जाते हैं। दूर-विमान और संगीत-कला के समस्त आकर्षक और मनोहारी दृश्य चित्रपट पर अवलोकन करके घर भर के लिये संसार को सुखाया जा सकता है।

कार्मिका और सरकस के क्षेत्र भी मनोरंजन के साधनों में कम उपयोगी नहीं हैं। मोटर-साइकिल का गोले के चक्कर घूमना, चक्कर का साइकिल चढ़ाना और मनुष्य का अग्नि में कूटना, भागत हुए घोड़ों पर सवार होकर चलना, मिट्टी और बजरा का साथ-साथ खेल करना मनुष्य के हृदय में कम कौतुहल उत्पन्न नहीं करते। मानवीय स्वभाव है कि वह नवीन और विचित्र वस्तुओं को अवलोकन कर सुख अनुभव करता है। मट, बाजीगर, मैग्नेटिक आदि के खेल देखने-बूझने लोग को जी नहीं चाहता। चौक, नाक, शतरंज आदि ऐसे खेल हैं जो घर में ही





बन्दर का नाव और कहीं पशु-पक्षियों के विचित्र खेल हो रहे होंगे ।

अभिप्राय यह है कि इस वैज्ञानिक युग में मनोरंजन के साधनों का अभाव नहीं है । मनुष्य अपनी रुचि के अनुसार कोई-न-कोई खेल ऐसा चुन सकता है जिसमें उसका जीवन आनन्दकारी बन सके । प्रायः देखने में आता है कि गिन मनुष्यों के जीवन में कोई मनोरंजनकारी वस्तु नहीं, उनका जीवन कुछ अधिक सुखरही देखने में आता । अतः मानवी जीवन में कोई-न-कोई मनोरंजन की वस्तु होना आवश्यक ही नहीं बरंच बड़ी आवश्यक है ।

## सच्चरित्रता

विचार-शालिका :—

- (१) सच्चरित्रता मनुष्य-जीवन की सर्वोत्तम वस्तु है ।  
चरित्रहीन व्यक्ति देश और समाज दोनों का कर्षक है ।

- (२) सच्चरित्र कैसे बने ?

सत्य, दया, नम्रता और उदारता के नियमों का पालन करके बुरे कामों से अपराध सेकर और परचाताब करके । अपनी आत्मा के आशीर्वाद का काम करके । समाहित्य का अध्ययन और भेदगुरुत्वों की संगति करके ।

- (३) सच्चरित्रता में आनन्द —

आत्म-विकास उत्पन्न होता है और उसमें आनन्द उत्पन्न होता है । भद्र-समाज चरित्रवान् व्यक्ति को सम्मान की दृष्टि से देखता है । सच्चरित्रता जीवन में शान्ति और सुख उत्पन्न करती है । सच्चरित्रता मानवी जीवन को ईश्वर की दृष्टि से दृढ करता है । बुराई के प्रति सम्मान के भाव उत्पन्न होते हैं । आत्मा विकास का अवसर पड़ता है । व्यक्ति कामों की श्रेणी में दृढता से चलता ( चलता ) उत्पन्न होता है ।



## (१) सारांश:—

अपेक्ष व्यक्ति को चरित्रवान् बनने की चेष्टा करनी चाहिए। समाज में सच्चरित्रता का बाहुल्य हो सुख, शान्ति और सद्बुद्धि उत्पन्न करना है। सच्चरित्रता का पाठ भेद पुरुषों की सक्ति, बलम सादृश्य और असमर्थों की सेवा ही में मज्जा-मोति प्राप्त हो सकता है। अपने चरित्र को ऊँचा उठाने के लिए 'कठशर्ष' जैसे पत्रों और गोता, रामायण आदि कोटि को पुस्तकों को अध्ययन करना चाहिए। सत्य, अहिंसा, अज्ञान, अल्प, अचरित्र, अस्वादि और असय आदि मत देने हैं किन पर चढ़ने से अनुप्य स्वर्ण ऊँचा उठता जाता है। तीन पुरुषों पर सदैव दृष्टि रखना भी सच्चरित्रता की भावनाओं को जगृत करता है। अपने गुरुजनों के प्रति सम्मान और आदर के भाव तथा उनकी आज्ञा-पालन एवं सेवा आदि देने सुख है जिससे अनुप्य भुम्बर आचरण पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।



## मित्रव्ययता

## विचार-सामिका :—

- (१) प्रस्तावना—मित्रव्ययता की आवश्यकता और उसकी महत्त्वा।
- (२) मित्रव्ययता की दानियाँ।
- (३) मित्रव्ययता में लाभ।
- (४) मित्रव्ययता का महत्त्व।
- (५) मित्रव्ययता में हानि।
- (६) मित्रव्ययता का चरित्र पर प्रभाव।
- (७) मित्रव्ययता का व्यवहारिक उपयोग।
- (८) प्रस्ताव - इस मित्रव्ययता होना चाहिए।

अनुप्य अपने जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए



अपमर्यादी होती है। वे जो कुछ उपार्जित करती है उसे वह तुल्य तथा देती है किन्तु सम्बन्ध आत्मियों में ऐसा नहीं होगा। वह आत्माभी भावस्वरूपों के लिए अन्तर्य कुछ-न-कुछ बचाती है।

यह मनुष्य जाति के विकास का युग है। समाज में अब निम्न से व्यवस्थित और शिक्षात्मक प्रवृत्तियों विकसित हो रही है। मनुष्य में अब पाने की अपेक्षा विचारशीलता, दूरदर्शिता और कर्तव्य-बुद्धि पर्याप्त मात्रा में विकसित हो रही है। आज मनुष्य अपने लिए ही नहीं ओचित रहता बल्कि वह अपने परिवार, अपने समाज और अपने राष्ट्र के लिए भी ओचित राष्ट्र है। यदि वह अपनी सामर्थ्य को बिना समझे ही व्यय करता चला जाए तो वह अपने उत्तरदायित्व को पूरा न कर सकेगा। ऐसी परिस्थिति में वह स्वयं ही कष्ट उठावेगा ही किन्तु वह अपने आत्मियों को भी दुर्लभ बनाने में समर्थ न हो सकेगा। वही देश शान्तिशाली होने वाले है जिनमें मिताचारों, मित्रविहारों और मित्रमयी व्यक्तियों की संख्या अधिक होती है। माना, पितामहों की चाहे कि वह यादव-काज ही से अपने बच्चों के मित्रमयी बनाने की चेष्टा करें। बाजकों में मित्रमयता के विकास होने में आत्म-विराग की मात्रा बढ़ती है। मित्रमयता का गुण अभ्यास से प्राप्त है। निरन्तर के अभ्यास से अपमर्यादी मनुष्य भी मित्रमयी बन सकता है। मित्रमयता की जान मनुष्य जीवन को संयत बनाती है और सद्गुणों के विकास करती है, दुर्गुणों को रोकती है। कल्पित मनोवृत्तियों को नष्ट करती है। सादगी और स्वावलम्बन का पाठ पढ़ाती है। सकटों को सहन सामर्थ्य पैदा करती है। सद्-असद् का ज्ञान उपलब्ध करती है। मानव मनोवृत्तियों को सम्मार्ग में ले जाने की विवश करता है।

मित्रमयता एक कठोर समय है। इसमें आत्म-निषेध और आत्म-शासन की प्रवृत्ति बनती है। इससे आत्म प्रतिष्ठा और स्वतन्त्र स्वावलम्बन का विकास होता है। दया और करुणा को पनपने का पूरा अवकाश मिलता है। धर्म की स्थिरता मित्रमयता ही में हो सकती है।

मित्रमयता जीवन में सख्ती और सादगी उत्पन्न करती है। यह

दोनों गुण ऐसे हैं जो मनुष्य में देवत्व का गुण उत्पन्न करते हैं। मित्र-व्ययी कभी किसी का गुँद नहीं ठाकता, वह अपना काम गुप्ताह रूप से खड़ा लेता है। राष्ट्र और समाज भी मित्रव्ययी के आश्रित जीवित रहते हैं।

मित्रव्ययता के अभ्यासियों को चाहिए कि वह कभी अपनी आमदनी से अधिक व्यय न करें। सदैव अपनी आमदनी को \* आवश्यक कामों में ही व्यय करें। आवश्यकता से अधिक व्यय करना किङ्कर्ण्यो कहलाती है और आवश्यकता से कम व्यय करना कंजूसी कहलाती है। मानव-जीवन में कंजूसी एक भयंकर रोग है। कंजूसी से रोगों और परनाशें कुप भी प्राप्त नहीं होते। बुद्धिमान् व्यक्तियों को इस रोग से दूर रहना चाहिए।

मित्रव्ययता राष्ट्र और समाज को जब हो तब लाभकारी है तब तक मित्रव्ययता द्वारा संचित धन से राष्ट्र और समाज को सेवा हो। यदि मनुष्य मित्रव्ययता के साधन बतने में सावधान न रहे तो यह मित्रव्ययता कृपणता में परिवर्तित हो जाती है। कृपणता राष्ट्र और समाज दोनों के लिए बड़ी हानिकारक है। धन का वितरण राष्ट्र के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

मित्रव्ययता की उपलब्धि के लिए मनुष्य को बहुत सावधानी से काम लेना चाहिए। मनुष्य को चाहिए कि वह अपनी दैनिक आय व्यय का हिसाब रखे। दैनिक आय-व्यय का हिसाब रखने से यह लाभ होगा कि व्यय की आवश्यक और अनावश्यक मदें ज्ञात हो जायेंगी जिससे अनावश्यक मद को बन्द करने का साधन मिल जायगा। जहाँ तक सम्भव हो मनुष्य को अपना आमदनी और व्यय का लेखा स्या हो लिखना चाहिए, नौकरों के भत्ता कमी न रहना चाहिए। यदि नौकरों के बिना काम न चले तो हिसाब-किताब का चौकमा रखना बड़ा आवश्यक है। नौकरों को बढ़त-बढ़त रहने से नौकरों को धोखा देने का अवसर कम मिलता है। खाप-भण्डारा का प्रबन्ध कभी नौकरों के भरोसे न छोड़ना चाहिए।

तनिक-भी आपरवाही करने से सचों अधिक बढ़ जाता है। दैनिक जीवन में मनुष्य कपड़ों पर अधिक व्यय करता है। कपड़े बढ़ी वैचारिकता के जिनकी जीवन में आवश्यकता है। शोचमेय की शोभा बढ़ाने के लिए कपड़े बनवाना आवश्यकता की निमिती में जाता है। सैर-सपाटे और बाग़-बगीचों के लिये ऐसे हैं जिन पर प्रायः निश्चय से अधिक व्यय हो जाता है, इसमें समुचित कमी कर देनी चाहिए। यदि प्रयत्न बढ़ते ही जाते तो खेद तथा शोच बख़्त-घरों के सचों को कम कर देना चाहिए क्योंकि यदि सभी मर्दों पर दिख कोट कर व्यय किया जायगा तो एक दिन कुत्ते का घा भी खासी हो जायगा। प्रायः देखने में जाता है कि निम्न-वर्ग के लोग बाजारों पर खोले अधिक व्यय कर देते हैं कभी-कभी ऐसा भी देखने में आता है कि कष्ट लेकर खोले बाढ़ ! बाढ़ !! लूटते हैं बाजारों में जीवन व्यय के बोझ से दब जाते हैं, यह कार्य बड़ा निन्दनीय है। हम प्रकृति से मानवी-जीवन में कमी सुझ नहीं मिल सकती। हम तो बाजार पर बढ़ी कहेंगे कि — “कष्ट” लेकर सुस्तमान आराम करने का प्रयास प्रयासही बेहतर है”। मनुष्य को चाहिए कि वह व्यय के बंधन में कभी न पड़े। कष्ट मानवी शक्ति को बढ़ करता है।

प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह बहुत सोच-समझ कर व्यय हम बाजार का पूर्ण ध्यान रखने कि हमारे समय से समाज और परिवार कुछ कहना हो रहा है क्या नहीं ? जिन कामों में व्यय करने से लाभ और समझना न हो, ऐसे कामों में व्यय कभी न करना चाहिए। जीवन में इन्हीं वस्तुओं को खरीदना चाहिए जो जीवन को आनन्द और सुखदायक हो। निम्नवर्गीय वस्तुओं को खरीदना समय को बर्बाद करता है और वास्तव में ही अप्रत्यक्षता है।

हम चाहते हैं कि हम निम्नवर्गीय वर्गों और अपने कुपात्रित वर्ग को कष्टों से व्यय को प्रत्यक्ष रूप से और समाज का बर्बाद हो।





नित्य स्नान करें। सोने, बिड़ाने तथा पहनने के वस्त्रों को साफ़ रहने का कम्परा और मकान गन्दगी से दूर हो। मरीर के प्रत्येक अंग गन्दगी से दूर रहने तथा वातावरण ऐसा रहने जिसमें किसी की गन्दगी और बेचैनी न हो। निजातों को सदैव दूर रहने। नि की रुद्धि से भारी शुद्धि का बड़ा सम्बन्ध है। शुद्ध हृदय बाहरी मल को परमन्द नहीं करते।

दीर्घ-जीवन का दूसरा साधन है उत्तम भोजन। दीर्घ-जीवन की अभिलाषियों को चाहिए कि वह भोजन को स्वच्छता और सादगी विशेष ध्यान रखें क्योंकि जीवन का आरामदार उत्तम भोजन। ऊपर निर्भर है। हमें सदैव शास्त्र पढ़ने वाला और पुष्टिकारक भोजन करना चाहिए। मस्तिष्क की शक्ति बढ़ाने और रुधिर की गति ठीक रखने के लिए दाढ़, भात, रोटी, दूध, तरकारी, हरे फल और से बढ़कर दूसरा भोजन नहीं है। भोजन सदैव रस युक्त और मधु ही करना चाहिए। ऐसा भोजन कभी नहीं करना चाहिए जिसको से घृणा उत्पन्न होती हो। सदैव शाका भोजन करना चाहिए। भोजन आवश्यक उत्पन्न करता है और स्मरण-शक्ति को बढा करता है। भोजन देश, काष्ठ और परिस्थिति के अनुकूल होना चाहिए। अनु भोजन के अनुसार भी भोजन होना चाहिए। हरे शाक और दूध को भोजन में अधिक महत्व देना चाहिए। भोजन में शाक, मिर्च, अचार, मुरम्बे इत्यादि का बाहुल्य सर्वथा स्वास्थ्य को हानि पहुँचाता है। भोजन में जितने ही कम पदार्थ हों उतना ही अच्छा है। भोजन जितना ही सादा और निम्न मूल्य से रहित होगा उतना ही वह अधिक स्वास्थ्य बढ़ाकर होगा। भोजन में समस्त पदार्थों का होना आवश्यक है क्योंकि शुष्क भोजन हमें मरवाता है और अनेक रोगों को उत्पन्न करता है। भोजन में विषम पदार्थों का मात्रा भी अच्छा नहीं है। सदैव भोजन ऐसा करना चाहिए जो आसानी से पच। फल मात्र और अधकचे विशेष उत्पन्न होते हैं। अधिक पके और गुले फल स्वास्थ्य को हानि पहुँचाते हैं।



में प्रगाढ़ निद्रा का भोग करो । स्वस्थ पुरुष को प्रगाढ़ निद्रा चाही गहरी नींद लेने वाले पुरुष दीर्घ-जीवी होते हैं ।

दीर्घ-जीवी बनने का पौर्वार्थ साधन है नियमित जीवन । चरित्र जीवन में स्वास्थ्य का साधनागार हो जाना है । दीर्घ-जीवन के चरित्र को प्रत्येक काम सावधानी से करने की आदत हाजिरी चाहिए । काम नियम-बद्ध होना चाहिए । यदि कोई काम करना हो तो पहले समय लेना चाहिए, तब उस काम को आरम्भ करना चाहिए । पुरुष यह है जो काम को सोच समझ लेने के बाद आरम्भ करे जो खोग चपने काम को नियत समय पर नहीं करते वह कभी और सफल नहीं हो सकते । जो काम करने हो उन्हें कभी राख दूख न ब उस काम में फौरन लग जाओ । किसी काम को इमजिए न पका कि वह भविष्य में हो जायगा ।

दीर्घ-जीवी होने के लिए बड़ा साधन है ब्रह्मचर्य । ब्रह्मचर्य से शक्ति बढ़ती है, दीर्घ-जीवन प्राप्त होता है । स्वास्थ्य ठीक रहता । और बल बढ़ता है । संसार में यश प्राप्त होता है । सुन्दर वंश चलाता । रोगों का नाश होता है । मद्यचारी की मेधा-शक्ति इमजिए नीच हो जाती कि वह वीर्य की रक्षा करता है । सदैव उसके मस्तिष्क में चपे-विचार प्रवाहित होते हैं । वीर्य की रक्षा से मस्तिष्क पुष्ट होता है मजि पुष्ट होने से मेधा तीव्र हो जाती है । संसार में जितने बड़े काम हुए हैं सब ब्रह्मचर्य के बल पर हुए हैं । ब्रह्मचर्य के बल पर ही देवताओं ने पर विजय पाई है । कहीं हमारे वीर्यवान्, सामर्थ्यवान तथा प्रतिभा पूर्वक और कहीं वीर्यहीन, शकर्मण्य और निस्तन उनका मन्त्रान हम जो आकाश पालाश का अन्तर है । हमारे इस पवन का कारण वीर्यवान् की ब्रह्मचर्य-नाश ने हमारा मुख, गोल, आरोग्य, बल, विद्या, मानस्य और सब मिट्टी में मिखा दिया है ।

“मरुत विन्दुपालेन जीवम विन्दुधारणम्”

मगवान् ने कहा कि वीर्य एक रूई नष्ट करना मरण है ।



(४) दुग्धपादन ।

(६) उपसंहार—उत्तम भोजन का महत्व ।

हमारा शरीर प्रत्येक समय कुछ-न-कुछ काम करता रहता है। जब बेमुश्किल होते हैं तब भी हमारा हृदय और केन्द्रे तथा अन्य अंगों का कार्य पूर्णतः चलते रहते हैं। काम करने से शरीर थका हुआ होता है। चलने, शब्द बोलने, तनिक भी सोचने विचारने का थकावट करने से प्रस्तुत स्थापित होने से भी शरीर में कुछ-न-कुछ ह्रास है। यदि किसी व्यक्ति को लीजकर किसी कड़े परिश्रम पर लगा दिया। और काम के परिणाम उसे फिर तोड़ा जाय तो उस व्यक्ति का मार पाव बढ़ेगा अथवा कम हो जायगा। स्पष्ट है कि काम-धमधा करने से थकावट होता है। थकावट की दशा में भी शारीरिक थकावट बढ़ती जाती है और शरीर का मार कम हो जाता है। यह शारीरिक थकावट और थकावट केवल आहार से ही दूर होना है। आहार ही से शरीर के दृढ़ हृदय (Cells) के स्थान पर नए तैल बनते और उनकी मरम्मत होती है।

अब समझना पड़ती है कि हमारा भोजन कैसा होना चाहिए।  
आहार ही शरीर का सर्वस्व है किन्तु आहार के महत्त्व को लोगों के मन  
ही नहीं है। इसी कारण से संसार में तुल्योक्ति मात्रा निरवध, बर-  
बानी है। आहार जीवन प्रकाश का होना है—मानसिक, राजनसिक और सामाजिक  
हमारी आत्मा, बाल, शरीर और मूल्य की दृष्टि से एक आहार पर ही निर्भर है।

सांनिक मोक्ष में हमारी बुद्धि सांनिकी, सामयिक मोक्ष में हमें  
और सामयिक मोक्ष में सामयिक बननी है। अतः हमें चाँदिए कि हम  
सदैव सांनिक मोक्ष करें। ताजा, रसयुक्त, हल्का, सदा, मोदक  
अथवा और जिस सांनिक कहलाता है। तर्क, भाव, मूर्ता, दूर, है  
और, जो कि ताजा रस सांनिक मोक्ष की रचना में आता है।

सम, अथवा कदाचिन्मिदं भवतीति चेन्नैकमुक्तम्, तत्राह ह्येता  
नानुमानाद् वा 'अतएव' इत्यादि, अथवा, आत्मा हि च, हीन व्यापार, अथवा,



घोरे ७, ८ बजे शाम को भोजन करना अधिक है। शाम को भोजन करने के बचते मर जाइ बीबी बड़ा हुआ गर्म दूध पीना चाहिए। दूध में मरैव घीरे-घीरे पीना चाहिए। एक मोल ही में दूध को पीना स्वास्थ्य के अधिक लाभ नहीं करना। भोजन कमो अधिक गर्म न करना चाहिए। अधिक देर का रक्ता हुआ भोजन भी न करना चाहिए क्योंकि ऐसे भोजन में अनेक प्रकार के विचार उत्पन्न हो जाते हैं। भोजन करने के एक बचते तक कोई शारीरिक और मानसिक परिश्रम न करना चाहिए। भोजन में समय नहीं तक हो सके, बाकी कम रिचे गो बहुत बचता है। भोजन के बटे बाद हवाधुमार बानी को खेना स्वास्थ्य के लिए अधिक दिगजर होता है। भोजन के परचार कुछ दूर समे समे रहना बड़ा उपरोक्त और स्वास्थ्य-वर्द्धक है। भोजन करके आरपाई पर एक आना बच नहीं है।

भोजन में कछाड़ार का खान अधिक महत्व का है। कछाड़ार को कछाड़ार करना आवश्यक आवश्यक है। कछो में संशोधनी शक्ति बुरा होती है। भोजन करने के दो बचते बाद कच खाना उत्तम है। कछो में भोजन स्वास्थ्य, शक्ति और बुद्धि को बढ़ाता है। शरीर प्रसन्न को हककर रहता है। हस्त माफ़ होता है। मन में कुपामनाएँ नहीं उत्पन्न होतीं, कछो में मूर्ख-मेरू और विजली अधिक होती है, हम कारक कचारी कभी बीमार नहीं हो सकता।

भोजन करनेवाले पदार्थों में दूध से बचकर कोई दूसरी वस्तु नहीं। सबसे अधिक गुणकारी भोजन दूध है किन्तु धारोप्य दूध ही में से सारी विशेषताएँ हैं। दूध बल और जीवन को बढ़ाता है और मन को शान्ति देता है। दुग्धाहार से बुद्धि पवित्र होती है और विचारों में पवित्रता आती है। दूध मरैव कपड़े से धान कर पीना चाहिए। दूध के स्वास्थ्यवर्द्धक कीमती गर्म करने से मर जाते हैं। अतः दूध ताजा और धारोप्य दिया जाय तो बहुत ही अच्छा है। नेर के रखने हुए दूध को बिना समे किए कभी न पीना चाहिए।









का प्रबन्ध न होने के कारण चाहे वर्षे छात्रों मानवर-मौल के बच-उत्त  
हैं। समता और सरकार को सहयोग करके चाहे चरगाहों का भू  
करना चाहिये। चरगाहों के साथ ही साथ उत्तम नमक के-सोडो का  
प्रबन्ध करना चाहिये जिससे मवेशियों की मलज की तरफ को हो। तबसे  
हर पाँच मील के फास पर मवेशियों के ठहराने को छोड़ दें। जो  
चाहे-चाहे बहुतमयी बावलों की निर्गुण हो और कभी कभी कभी  
प्रबन्ध हो।

हमारे गाँव गन्धगी के कारण मकदुस्य बन हुए हैं। जगह-जग  
हृदा-करकट पड़ा रहता है। स्थान-स्थान पर देशाव और कोरक को म  
बहुती रहती है। लोग आम बावलों पर ही बैठकर पाकाना करते हैं।  
मवेशियों की भी गाँव के-निबर हो बाहर देते हैं। बावों तरफ से हुए  
ही दुर्गन्ध-मालूम होती है, जिस पर जनगिनत मवेशियों-मिश्रित  
रहती हैं। गाँव के अन्दर और बाहर ऊँचे-ऊँचे पानी के गढ़े भरे होते  
हैं, जिनमें छात्रों मगदुर उत्पन्न होते हैं। वर्षा ऋतु में तो गाँवों की गन्धों  
का ठिकाना ही नहीं रहता। अनेक छोटे छोटे ठाण्डा भर जाते हैं, जिनमें  
मलेरिया उत्पन्न करने वाले म दूर उत्पन्न होते हैं, जो गन्धगी और गाँवों  
की चारों तरफ फैलाती है। बस मरक के सहोदर गाँव वर्षा ऋतु ही में  
बनते हैं। सारी बातों का कारण गाँव बाजों की पठिया है। गाँव-मुखा  
आर्गन्धर्जस को चाहिये कि वह गाँव बाजों की सफाई के काम सम्मान  
और गन्धगी की युवाइयों को उनके सामने रखें।

गन्धगी के कारण गाँवों में अनेक प्रकार के रोग फैल जाते हैं, जिनमें  
प्रत्येक वर्ष गाँव-निवासी काल-रुधिर होते हैं। मलेरिया बुखार तो छात्रों  
की जान लेकर ही हम लेता है। योग्य क दिनों में हैजा फैलता है। इस  
आवश्यक है कि गाँव-गाँव में दूधा और बावटों मिश्रित का प्रबन्ध हो,  
जिससे बचने आम-निवासी कुत्ते का मौत न मों।

गाँवों में साफ पानी मिलाने का कोई प्रबन्ध नहीं है। गाँवों-बाजों का  
तो कच्चे कुत्ते का मक्का पानी पीते हैं अथवा नालाबों का पानी पीते हैं।







लिये सरख, सुखन और सस्ते मनोरंजन होने चाहिये । ग्रामीण भागों में मनोरंजन के लिये गाँव-गाँव रेडियो बनवा रही है, बिजु पद मनोरंजन गाँव बाजों की रद्दि से बहुत ही महंगे पड़ेगे । सरकार यह है कि यदि मैं देखी, देखो, को रोकने की योजना की जाय । हमकी प्रतियोगिताएँ बर्तमान में, हमको पुरस्कार, दिये जायें । नगर की कामोद्-प्रमोद की रोज की गाँवों में व्यवस्था करना ठीक नहीं और न ऐसा मनोरंजन गाँवों के अनुकूल ही हो सकता है ।

गाँव की गम्भीर को दूर करना भी गाँव-मुधार का एक प्रयत्न है । गाँव की गम्भीर प्रादेशिक वर्षे छाड़ो, प्रादियों की जान लेती है । गाँवों में, गाँवों-और गाँवों की गम्भीर होती है जिन्हें देखकर घिन आती है । गाँव भागों के बच्चे और स्त्रियाँ बड़े गम्भीर होते हैं । ग्राम-मुधार को गाँवों को चाहिये कि वह सजाई का पूरा ध्यान रखें । गाँवों को और दुष्टों । सजाई पर विशेष ध्यान दें । उनके मकानों की आकृति बदलें, उन रहने और दुष्टों के बॉम्बे के घर सजग-सजग बनवायें, घर वैज्ञानिक से बने हुए हों, मकानों में सिबकिनी और रोशनदान पर्याप्त संख्या हों । जगान की दर बहुत अधिक है, जगान जहाँ तक सम्भव हो सगवर्गों को कम कर देना चाहिये । वर्तमान कानून भी कुछ ऐसे दोषपूर्ण हैं, जिनमें काफ़ी संशोधनों की आवश्यकता है । सरकारी अधिकारियों को चाहिये कि वह अपनी रीय-दाय बाकी नीति को दिवसुख बदल दें । गाँव बाजों में प्रेमपूर्ण वातावरण बने, जिससे उनका भय दूर हो जाय ।

अंग्रेजी मानवों से लेती को बड़ी हानि पहुँचती है । अंग्रेजी मानवों का प्रथम सरकारी तौर पर होना चाहिये ।

गाँवों में कक्षा-कौशल के लेते और प्रदर्शनीय होनी चाहिये, जिनमें प्रतियोगिताएँ होनी चाहिये । प्रतियोगिता में जीतने वालों को पुरस्कार भी मिलने चाहिये । इस प्रकार रक्त के पथ पर बहुत बड़ा गाँव आदर्श गाँव बन सकते हैं । इस राष्ट्र-निर्माणकारी नेतृत्व को चाहिये कि वह अपनी सारी शक्ति को ग्राम-मुधार में लगा दें । हमारा सौभाग्य है कि जनता और





संमेली दूहमा की वष मज्जुन हो खरी। मरदम मुर-कहर में  
 गये और चरनी प्राण रचनग्रन्थ को दे डीरे। विदेशियों की इस  
 और आचार-विचार ने भारतीय हिन्दू मुसलमानों की और-मित्रा को जो  
 दोनो जानियों को हो शत्रुमा और दोनो जानियों ने मित्रकर मन्  
 में सयुक्त बनान किया। इस संयुक्त बनान को ही हम स्वयं-राज-  
 के नाम से पुकारते हैं।

त्रिम समय की परमा आप के सामने रखी जा रही है, उनका दो-  
 सा परिचय देना उचित जान पड़ता है। भारत में संमेली  
 वंशे वर्षाण महाराई में गढ़ चुके थे, उनका उल्लासना साधारण ब्रह्म  
 था। विजयी का अन्तिम बादशाह बहादुरशाह बादशाहों और कवि  
 धिरा दूमा अपने जीवन की अन्तिम पक्षियों गिन रहा था, हिन्दु  
 हुई रहस्य की भाँति साधारण की पैँड उठों की रचों खरी हुई थी। का  
 के बातिदयसीशाह को इन्द-ममा को अफगानों ने घेर रक्खा था। ग  
 मकान की सीढ़ियों पर चढ़ने के त्रिभु भी सुन्दर मुसलमानों के कब्रों  
 आश्रय तक रहा था। पञ्चाह की स्वयंग्रन्थ की भी पर वर्षाण सन्ना  
 पानी बालकर चुम्पाया जा चुका था। मरहटों का हिन्दू-साधारण-रक्त  
 का स्वयं संमेली दूहमत ने त्रिभु-भिन्न कर दिया था।

भारत का एक एक देश क्रमशः विदेशी शक्तियों के हाथ में ख  
 जा रहा था। लोगो में शक्ति था किन्तु संगठन नहीं था। देश में नेता न  
 बुद्धि था, प्रतिभा था किन्तु मर म बनना अपना दावसी और अपना-अप  
 राग अनापन की धुन था। मराठारण का यह दाव था कि परस्पर  
 हमारे का किया का विचार न जा। त्रिभु पर नये शासकों को चतुरवी  
 जनता में और भी अस्मन्तोप का नाया क यह रही थी।

उधर उन्नीसवीं का एक एक पुन निरप नोति ने भारतीयों के इरा  
 अन्त अकसा पटुबाया। इस नाति क उल्लास होकर कितने ही राजपू  
 अधिकार पुन कर दिये गये। मन् १८५८ ई० में मिहारा संमेली रा  
 में मित्रा किया गया। लक्ष्मीबाई का राज्य बख्शीजी में एक छोटे



हमका करते, मरती करने पर पड़ने विद्रोह का बीड़ा बुझा रक्षपात होगा। धीरे-धीरे अंग्रेजों को भारत से बाहर जाने का दस्ता पकड़ गया। स्वतन्त्रता की भावना जो पिछाईयों द्वारा हुई थी, वही हिन्दू सुवर्धित जनता में फैली। सबने समझ लिया कि अंग्रेजों को देश से बाहर किये बिना हमारी आदीवासी जनपद सफ़ली।

भारतीय हृदयों में जो अग्नि भीतर ही भीतर सुझा रही थी, एकएक १ मई सम् १८५८ ई० को मेरठ छावनी में चक उठी। उसकी चिंगारियाँ क्रमशः एक एक कर भारत के कोने कोने में पहुँच आग प्रवर्धित करने लगी। सर्वप्रथम गिर्गियों के निरुद्ध पक्षी बग़ल उड़ खड़ा हुआ। दिवली के मुसलमान बहोले से ही-अंग्रेजों चुम्ब बैठे थे। ११ मई को वहाँ ही मेरठ के क्रांतिकारी मिर्जा उ के हिसारे पाये, सहसा दिवली में हत्याकाण्ड की धूम मच गई। बहादुरशाह की अपना मन्नाट धोपित कर दिया गया और उसी के पर दिवली में सर्वप्रथम अग्निहोत्र और हत्याकाण्ड का तावड़-जुल स्थित होने लगा। जहाँ जो कोई अंग्रेज अथवा अंग्रेज का बच्चा उसे तुरन्त लक्ष्यार के धात उलाग गया। विद्रोह की यह विकराल लहर मरवा भाग में फैल गई। इनमें से कानपुर का हत्याकाण्ड सर्वप्रथम चर्चित रहा। कानपुर पर नाना साधन का आधिपत्य था। इसमें आगरा, बनारस, जयपुर आदि स्थानों पर यह अत्यन्त अग्नि फैली लड़ी और लगभग २ लाख भारत में यम की शायन का अस्तित्व फैल गया। सर्वप्रथम अत्यन्त छोटे छोटे राज्या ने अन्त लिया, अन्त अस्तित्व था वरु जलने की निजता है।

भारत में सारा विश्वास टूट गकिया रहा है। इन विश्वास टूट शक्ति ने कभी मित्रकार सफल शक्ति का निमाण नहीं किया। यही कारण है भारत में अनेक आक्रमण हुए और अन्त केवल किसी एक सामन्त का और वह पराजित हो गई। दूसरा शक्तियों के कानों पर



प्रागल्भ्यन कहें, हम तो हमें एक जीवित जाति की राय दोगे ।  
 वह राष्ट्र का संयुक्त प्रयास था, उसमें राष्ट्र की संयुक्त भागावट को और  
 परवन्त्रता के खवादे को देश में हटाने का प्रथम प्रयास था ।

## मित्र के कर्तव्य

विचार-तालिशायें:—

(१) प्रस्तावना—सामाजिक जीवन में मित्र का स्थान ।

(२) मित्र के कर्तव्य—

मित्र की प्रापसिकाव में स्थिरता । मित्र को सम्मान  
 खाना । मित्र को संकट में साम्यता और महादुर्भूति । मित्र  
 दिन-विचरण ।

(३) कृष्य सुश्रमा की मित्रता ।

(४) मित्रता कैसे मनुष्यों में होती है ?

(५) मित्र का चुनाव ।

(६) मैत्री और स्थाप-साधन ।

(७) उपसंहार—हमें कैसा मित्र बनाना चाहिये ?

मनुष्य के संसार में मिलने वाले हैं, उनमें मित्रता का नाम ।  
 महत्व का है । मित्रता में मानवी जीवन की शक्तियों और मनुष्यता  
 विकसित होता है । मनुष्य सामाजिक प्राणी है, वह चाहता है कि  
 मित्र-भुक्त कर रहे । मनुष्य क्या पशु-पक्षी भी मिलकर रहने को प  
 करते हैं । मनुष्य जान यह है कि मित्रता से ज्ञान में एक प्रकार की प्र  
 या जाता है, जीवन मारमर प्रभाव नहीं होता । मित्र-गोष्ठी में व  
 खड़ाकर मन बहलता रहता है । इसी कारण विद्वानों ने मित्रता की शुभ  
 से समाजता का न । गानाट नृत्तमानास का न मित्रता के मद्रा की  
 सुलभता से वजन दिया है —

‘ज न मित्र दुःख शान्ति दुःखाना । तिनहि विप्रोक्त पालक मा  
 निज दुःख गिर सम रज क जाना । मित्र क दुःख गिर मेह समाप्त’



सत्ये मित्र की स्थापना करते हुए भूतद्वि में एक स्थान :  
 बख्शाया है कि—'मित्र वह है जो मित्र को पाप से बचाता है, मित्र  
 की शोभना करता है, वह दोषों का विनाश है और मित्र के  
 वकाशिल करण है, वह विपत्ति में मित्र का साथ नहीं छोड़ता। शास्त्र  
 में ऐसे गुणों से विभूषित मित्र तो साक्षात् कुंभ का मणिकार ही है।  
 काष्ठ में धोरज, घर्म और तारी चाहे भले ही साथ जोड़ जायें किन्तु वह  
 मित्र साथ नहीं छोड़ सकता।

मित्र का धर्म है कि वह दुःख के समय हमें साहाय्य दे, हमारे दुःख  
 मूल को घटना ही दुःख मुक्त समझे, हमारे गुण से उसे शुद्ध हो, हमें  
 दुःख से दूरे दुःख हो, जब हम साहस्य लो रहे हों तब वह हमें सामर्थ्य  
 द और सर्वत्र हमें आश्रयित करता रहे, हमें कभी हताश न होने दे,  
 हमारे कर्तव्य-भूति को उत्तेजित करे, हमारी आसुरी के साथियों के  
 नरायण वहुंवाये, जीवन-संसार में कभी वह पीछे न हटे और न हमें लगे  
 रहने दे, हमारी कर्मज के मागों को परिहर करे, हमें ऐसे क्षणों में बला  
 विमये छोड़ और परबोध में गुण शामिल मित्र।

सब मित्रों की कहानियों में संगार का इतिहास भरा पड़ा है। कुछ  
 और मुराना की मैत्री का धारण बहुत ऊँचा है। कुछ मुराना है  
 मित्रता की दृष्टि से जब तक संगार मन्त्रायमान हो रहा है, वह  
 किशोरीनाथ श्री कृष्णचन्द्र आनन्दचन्द्र और कदा दाने-दाने को लगे  
 बाबा दान मुराना ? धातना पाताउ का धर्म है, परन्तु धर्म  
 कर्मा स्थिति लूककर मुराना का दान दाना दाना स्थिति ही लगे  
 हैं। दुःख दान कर्मा से मजबूत की जाता है। उ चाने दान के  
 'मन्त्र-द्वारा' को नहीं लगे मकर। मकर मन्त्र चाने के रूप में लगे  
 करता है व मुराना कर्मा को लगे उन द और मुराना हो  
 कर करते हैं—

—देव दिव्य मुराना म ... कर्मा मकर मने मन कोय।

मुरा मकर : दान मकर मकर दान मकर दान मकर दिव्य कोयें ।





काज में सरा साबित न हो तब तक उसमें कोई गुण मिश्र करने दे है । सच्चा मित्र वही है जो दुःख में हमारा साथ दे और सुख में आनन्द को दूना करदे । जहाँ स्वार्थ है वहाँ मित्रता नहीं है परन्तु और निःस्वार्थ मित्र की परीक्षा करना कठिन है । नवयुवकों को इस का विशेष ध्यान रखना चाहिये, क्योंकि नवयुवक तनिक मोड़ी चक्कर में पड़े और उनका जीवन पतन की ओर गया ।

कहा भी तो है "सुर, मुनि, नर सबकी यह रीति, स्वार्थ का सब प्रीति ।" यह कथन अचमत्स्य सत्य है, यतः हमें मित्र के निर्वा पर्याप्त सचेत रहना चाहिये । प्रत्येक परिचित व्यक्ति मित्र नहीं हो स

चाञ्चल तो स्वार्थी मित्रों का प्राधान्य है, जो सुख के समय आनन्द देने हैं और दुःख के समय हमें छोड़कर भाग्य हो जाते हैं तब हमारे पास पैसा है तब तक वो मित्र साथ ही साथ रहते हैं, जब पास नहीं रहता तब मित्र भी-दो-नवारद हो जाते हैं ।

अन्त में कहना वही है कि सच्चे मित्र वही है, जो हमें सदा-सदायता दें और सामर्थ्य का बंधाये । कबीर ने कैसा सुन्दर कहा है:—

'कहि रहौम सम्पति सगे, बनत बहुत बहु रीति ।

विपति कसौटी जे कमे, सोई सोखे मोत ॥'

## महात्मा बुद्ध

विचार-तालिका:—

- (१) प्रस्तावना:—बुद्ध जी के जन्म से पहले की स्थिति ।
- (२) जन्म-काज (२९८ ई० पू०) ।
- (३) माता-पिता और साधन पावन ।
- (४) माना की मृत्यु, मौसी द्वारा पावन ।
- (५) जीवन पर बाहरी वस्तुओं का प्रभाव ।
- (६) वैवाहिक सम्बन्ध और राष्ट्र का जन्म ।



काफ़ में सरा साबित न हो तब तक उसमें कोई शुष्क मित्र रहने के है । सच्चा मित्र वही है जो दुःख में हमारा साथ दे और सुख में लोचान्द को दूना करे । जहाँ स्वार्थ है वहाँ मित्रता नहीं है । वास्तव में और निःस्वार्थ मित्र की परीक्षा करना कठिन है । नवयुवकों को इन का विशेष ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि नवयुवक तनिक भी कठिनायियों में पड़े और उनका जीवन पतन की ओर गया ।

कहा भी तो है “सुर, सुनि, तर सबकी यह रीति, स्वार्थ का सब धीनि ।” यह कथन अचरित साध है, अतः हमें मित्र के विशेष वर्णन करने चाहिये । प्रत्येक परिचित व्यक्ति मित्र नहीं हो सके ।

आपकड़ तो स्वार्थी मित्रों का साधारण है, जो सुख के समय काम करने के और दुःख के समय हमें छोड़कर चला ही जाने है । जब हमारे पास पैसा है तब तक वो मित्र साथ ही साथ रहने है, जब पास नहीं रहना तब मित्र भी-दो-ग्यारह हो जाने है ।

अतः में कहना चाहती है कि सच्चे मित्र वही है, जो हमें संकट-काल में छोड़ सात्वतता बचाये । कबीर ने कैसा सुन्दर कहा है—

‘कहि रहौस लागति सते, बनन बहून बहू रीति ।

रिगति कसौटी ते कम, सोई साँचे सीत ॥’

## महान्या पृष्ठ

विचार-सामग्री —

(१) महान्या — पृष्ठ को के अन्त में पृष्ठ की स्थिति ।

२. महान्या — पृष्ठ १०० — १००

३. महान्या — पृष्ठ १०० — १००

४. महान्या — पृष्ठ १०० — १००

५. महान्या — पृष्ठ १०० — १००

६. महान्या — पृष्ठ १०० — १००



के भी नहीं होने पावे। ये कि इनकी माता का देहान्त हो गया। आपका भरण-पोषण आपकी विमाता माया ने किया। माया के गर्भ एक पुत्र उत्पन्न हुआ था जिसका नाम देवदत्त था।

सिद्धार्थ बड़ा सुन्दर था, उसका शरीर-गठन बड़ा उत्तम था, बड़ी प्रशंसा थी। सिद्धार्थ ने अपने शैशव-काल में 'होनहार शिशु' होने की वजह से 'पात्र' वाञ्छी लोकोक्ति परेतार्थ का था। आपकी बड़ी सावधानता-रूढ़ि हुई। बड़े-बड़े सम्प्रतिष्ठ और विद्वान् आचार्य शिष्य के विषे विद्युक्त हुए। आपने मगधकाज हो में अगाध विद्या, जिसे देस आचार्य योग चक्रिण होने थे।

क्षुद्रक उनका भ्राता, सखा और मित्र था, जो चौबीसों बरों की मति सिद्धार्थ के साथ रहता था। वह सिद्धार्थ का मनोरञ्जन करने साथ जाता, उसको विचार-धारा में अपने परामर्श देता। कुमार ने क्षुद्रक के साथ कपिलवस्तु नगर की मेर और नगर से एक का भी निरीक्षण किया। सिद्धार्थ ने उस भ्रमण में एक रोगी, एक एक मृगक और एक क्षत्रिय सङ्गत न्यायी को देखा। सिद्धार्थ का इन सांसारिक दुःखों को देखकर व्यथित हो गया और महसूस उनके में विचार उठे कि संसार दुःखों का कन्द है। इन दुःखों से बचकर क्या मिल सकता है ?

विद्धार्थ का मन ज्ञान चिन्तन में निरत हो गया। उन्हें यह आसने लगा कि संसार में राग, मोह और दुःख हैं, इससे किस मनुष्य मुक्त हो सकता है ? सिद्धार्थ का इस विचार-धारा ने अज्ञान का विनिर्मुक्त कर दिया। वे सोचने लगे, कहीं सिद्धार्थ मगध न हो जाय। अतः पिता ने एक परम सुन्दरी विधवा कन्या वसुधार्थिका को विवाह कर दिया। विवाह हो जाने पर कुछ काल के सिद्धार्थ के मन का आनन्दानुत्था शाश्वत रहा और एक पुत्र का उत्पन्न हो गहुड़ के नाम से नामद हुआ। सिद्धार्थ ने पुत्र का समाह्वय करी बड़ी समझा। अतः इनके दृश्य में एक दृष्टि निरवयव हो।



निकल सकेगा। अपनी बीधा के तारों को अधिक मत कम, घरे! अपने भी स्वतः न निकलेगा और यह दूर जायेंगे।” इस गीत ने विद्वान को घोर तपश्चर्या से रोका और उन्होंने सोचा कि घोर तपश्चर्या से वास्तविक शान्ति नहीं मिलेगी और न शरीर को कष्ट देने से आत्मा सबल होती है। उन्होंने तप करना छोड़ दिया। उनके साथी भी एक-एक करे भी दो-चारह हो गये और कहने लगे कि विद्वान को साधना श्रुत हो गया है।

एक दिन गौतम ने नदी में स्नान किया, स्नान करने के परचाए पर पुनः पुनो वृक्ष के नीचे विस्तृत में निवास हो गये। सहसा उन्हें आसने लगा कि उन्हें मृत्यु के दर्शन हो गये हैं। जीवन-मरण का समस्या ही हो गई और साधारण रोगों की उन्हें भीरुपि मिल गई। अब वे प्रसन्न हो गये। यहीं से अब आपका नाम गौतम बुद्ध हो गया। आपको जो सत्य प्रकाश हुआ था, उसको वह वितरण करने चल पड़े।

अब गौतम ‘बुद्ध’ हो गये और संसार को दुःखों से छुड़ाने की निकल पड़े। अब उन्होंने उस पीपल के वृक्ष को छोड़ दिया, जिसके नीचे उन्हें सत्य का प्रकाश हुआ था। उन्होंने पहले उन पाँचों शिष्यों की सोच की जो इन्हें तप-भ्रष्ट समझ कर छोड़ गये थे। बुद्ध जी ने सर्व-प्रथम उनके सामने सत्य-प्रकाश को रक्खा और वे इनके अनन्य भक्त हो गये। बुद्ध जी ने बताया कि दुःख सात है—जन्म दुःखमय है, जगत दुःखमय है, रोग दुःखमय है, मृत्यु दुःखमय है, जिसे हमारा हृदय नहीं चाहता उसे समर्पित होना ही दुःख है, अनृप्य आकांक्षा दुःख का कारण है, प्रिय वस्तु के विछाग में दुःख है।

बुद्ध जी का विद्वान्त था कि मनुष्य का वामनाथ जन्म-मरण चक्र में घुमाये फिरता है। मनुष्य का विरिध अनिच्छावाय और वामनाथ उसे भव-बन्धन में बाँधता है। उसकी इच्छित वस्तु का इच्छा मरण पागल बनाये रखता है। वह जगत में इच्छित सुखापभाग के लिये जितनी आकांक्षित रहता है, इतनी किसी अन्य वस्तु के लिये नहीं रहता, हमका

















सुधारक थे। सरय और अहिंसा के पुजारी थे। आपका चरित्र और उज्ज्वल था। भारत को एक राष्ट्र बनाने वाले भी आप ही। भारत की सूखी नदियों में रक्त का संचार करने वाले भी आप ही थे। भारत के हृदय सज्जाद थे। आपके जन्म से भारत का गौरव रहेगा, जब तक संसार में सूर्य और चन्द्रमा वर्तमान हैं। हिन्दु कि ३० जनवरी १८४८ को नाथूराम गोडसे ने आपकी हत्या कर दी। भारत को आपकी अभी बड़ी आवश्यकता थी।

## भारतीय इतिहास का प्रसिद्ध पुरुष ( छत्रपति शिवाजी )

विचार-तालिका :—

- (१) शिवाजी के जन्म के समय भारत की परिस्थिति ।
- (२) जन्म और माता पिता ।
- (३) शिवाजी की शिक्षा-दीक्षा ।
- (४) प्रारम्भिक जीवन ।

संगठन और आसपास के घातें । बीजापुर के मुग़ल से छेड़-छाड़ और अफ़जलख़ान की मृत्यु । मुग़लों से छेड़-छाड़ शाहूस्तानी का भागना । आगरे में बन्दी होना और बग़ुराई में निकल आना ।

- (५) राज-स्थापन और प्रबन्ध ।
- (६) व्यक्तित्व ।
- (७) शिवाजी शासक के रूप में ।
- (८) आचरण ।

(९) मृत्यु ।

(१०) उप-हार—शिवाजी का महत्त्व ।

मुग़लों का साम्राज्य प्रारम्भ शत्रु के मृत्यु के समान प्रखरतर हो रहा था। इस्लामी धर्म और उसके अनुयायियों के विरुद्ध कोई जागरण नहीं हो सकता था। इसलिये लोगों के अनुयायियों की साम्राज्य नहीं रही थी। सारी हिन्दू जाति निराशा में डूबी हुई थी। धार्मिक भावनाओं के बलीपुत्र





गाथाओं मुन-मुन कर शिवाजी परम उत्तेजित हो गये और अग्रज्वर हताश हो मर गया। दादा कोंकणेश शिवाजी का अधिक विकास न कर सके। पर हाँ, उन्होंने शिवाजी को व्यावहारिक शिक्षा पारंगत बना दिया। आलोट करना, अस्व-शस्त्र बखाना, आदि-आदि करना सब कोंकणेश ने हथौड़े पिला दिया। शिवाजी में निपुण हो गये। शिवाजी के बचने शौर्य और बुद्धिबानुष ने सरहटा जाति को अपनी तरफ आकर्षित कर लिया और शिवाजी शौर्य और साहस निरूपक बनता ही गया। उसने सरहटों में संगठन की मूर्त फूँक दी।

शिवाजी के हृदय में शूरवीरों के आदर्श थे। वे प्रसन्न पराजयी को बनने के अभिलाषी थे। समर्थ रामदास के राष्ट्रीय उपदेशों का प्रभाव शिवाजी के हृदय पर पड़ा। एक तो शिवाजी स्वयं महात्माओंकी, दूसरे रामदास के उपदेशों का प्रभाव। शिवाजी कार्य-क्षेत्र में हठा से स्वतन्त्रता की हमें शिवाजी के हृदय में तरंगें मारने लगी। शिवाजी की स्वतन्त्र भावना के साथ ही साथ समस्त सरहटा जाति में स्वतन्त्रता की भावना गूँज उठी। शिवाजी की संगठित सेना ने ऊपर-ऊपर हमले मात्र आरम्भ कर दिया। उन्होंने पुण्डर, लोमन, जुनैर आदि जिलों पर अधिकार जमा दिया। बीजापुर का नवाब शिवाजी को इस बकली को न सह सका और मन ही मन कुड़ने लगा और चाहा कि शिवाजी को पकड़वा दिया जाय, किन्तु वह इस कार्य में सफल न हो सका।

जब बीजापुर का नवाब शिवाजी को न पकड़ सका तो उसने शाहजी को कैद कर लिया। शिवाजी ने शाहजहाँ को लिखा। शाहजहाँ के आलोक में आनन्दित होकर बीजापुर के नवाब ने शाहजी को छोड़ तो दिया, किन्तु उसे शान्ति न मिली। शिवाजी उसकी आत्मा में चुभने लगा। उसने अपने सेनापति अफजल खाँ को एक बड़ा सेना देकर शिवाजी को पकड़ने के लिए भेजा कि यदि शिवाजी मुझको बिना हथियार के अकेले मिले तो मैं उसके साथ अपना प्राण बलि दे दूँगा। शिवाजी ने उसके प्रस्ताव को और











































आता है। इधर-उधर घूमने की छुट्टी अभिखाया बनी रहती है।  
 की शिक्षाया रहती है कि यह अधिक-से-अधिक ज्ञान संविद को  
 एक स्थान पर रहने की दशा में यह कभी सम्भव नहीं हो सकना।  
 कारण हम आदिषों में देशादन-विषया के भाव पाने हैं। संसार के  
 देश देशादन-विषया के कारण उद्यम हुए हैं।

पुराने समय में देशादन करना बड़ा कठिन कार्य था। मार्ग  
 दुर्गम थे। मार्ग बहुत और लुटेरों से भरे थे। मार्ग में बड़े बड़े गाँवों  
 मरिचों को चार करना बड़ा कठिन था, क्योंकि उधर पुग में पुगे  
 का अभाव था। थोड़ी-थोड़ी दूर की यात्रा में बड़ा समय लगना  
 लोग पैदल, घोड़े अथवा बैलगाड़ी पर यात्रा करते थे। मार्ग में बड़े-बड़े  
 कारनिचों का सामना करना पड़ता था, किन्तु यात्राकर विज्ञान के ज्ञान  
 के कारण देशादन करने में बड़ी सुगमता होगई है। यात्रा रेल, वाहन  
 वायुवाहन, मोटर आदि के द्वारा मनुष्य कहीं से कहीं जा सकता है।  
 वैज्ञानिक साधनों ने संसार को एक छोटा सा घर बना दिया है जो  
 देशों के भिन्नगी कटुम्बी से हो गये हैं। अब यात्रा करना साधारण  
 हो गई है। यात्रा में अब कोई मय लटकता नहीं रहा है। अब का  
 कोविन आभास हो गया है।

देशादन ज्ञानवर्धन का सबसे बड़ा साधन है, इसी कारण  
 मनुष्य को देशादन विषय में शिक्षा देनी चाहिए। देशादन का मुख्य हम पुस्तकों  
 का अध्ययन का अध्ययन है किन्तु हममें प्रत्यक्ष देखने का  
 बड़ा फल

देशादन ज्ञानवर्धन का सबसे बड़ा साधन है, इसी कारण  
 मनुष्य को देशादन विषय में शिक्षा देनी चाहिए। देशादन का मुख्य हम पुस्तकों  
 का अध्ययन का अध्ययन है किन्तु हममें प्रत्यक्ष देखने का  
 बड़ा फल









की भौगोलिक परिस्थिति के विरुद्ध विपरीत है । वर्तमान शिक्षा कियों को भी आसामी, विद्यापी और अकर्मव्य बना रही है । इनकी मति कैशन का भूत लक्षकों पर भी सवार हो गया है । शिक्षा के अति भयंकर हो रहा है, किन्तु भारतीय जनता अभी उसे बचेबा भी से देख रही है । स्वामी स्वामन्द की भावना, जो भारत में मार्ग, उत्पन्न करने की थी, वह आज पेरिस और लन्दन की संस्कृति के रंगी दृष्टिगोचर हो रही है । आज उनकी आत्मनिरीक्षा, देख-पुछे के और क्षीम-पाठकों से भरी पड़ी है । स्वाभाविक सौन्दर्य के स्थान पर कृत्रिम सौन्दर्य स्थान पकड़ता जाता है, भगवान कुशल हो करें !

सहस्रिका का भूत भारतीय जनता के सिर पर अलग छत्रा ल था रहा है । हम सहस्रिका के विरोध में तो नहीं हैं, किन्तु हम उस अवस्था तक लड़के और लड़कियों की शिक्षा साथ-साथ हो इससे बच अवस्था बीतने पर लड़के और लड़कियों के पुष्क-पुष्क स्कूल होने चाहिए ऐसा प्रयत्न करने से राष्ट्र को अधिक स्वयं न करना पड़ेगा । किन्तु वह बालक और बालिकाओं का साथ-साथ पढ़ना सामाना के गहरे गहरे में बिना नहीं रह सकता । हाँ, छात्र और छात्रियों पर कड़ा नियन्त्रण से कोई सुलभ साधन निकल आवे, किन्तु वह अभी सम्भव नहीं क्योंकि धार्मिक शिक्षा का अभी अभाव है । राष्ट्रीय गवर्नमेंट के बिना गवर्नमेंट कोई राष्ट्रीययोगी नियम नहीं बना सकती ।

भारतीय स्त्रियों में परिश्रम-प्रियता का गुण होता है, किन्तु वर्तमान शिक्षा के कारण महिला-समाज का यह गुण भी मिटता जाता है । परिश्रम प्रियता के स्थान पर आलस्य और विश्राम पैर फैलाता जाता है । हमारा शिक्षित बालिकाएँ पर के काम-काजों से घबराती हैं और उनकी पृथ्वी की दृष्टि न दलती है । व्यवहारिक जीवन की वह कल्पनाओं के व्यक्तान करने में अपना गौरव समझती हैं । इन लक्ष्यों के देखते नहीं सिद्ध होता है कि इनकी शिक्षा लाभ के स्थान पर हानि ही कर रहा है



सुपमें विशुद्ध भारतीयता नहीं है। विशुद्ध भारतीय शिक्षा के बिना  
में संशय माना सम्भव नहीं।

## सफाई

विचार-तालिका:—

- (१) प्रस्थापना—स्वच्छता आत्म-शुद्धि की द्वितीय सोपान है।  
प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ में सफाई है। पशु-पक्षी भी स्वयं  
परामर्श करते हैं। कुत्ता अपनी पूंछ फटककर कर बैठा है।  
मानव-जीवन में स्वच्छता की बड़ी आवश्यकता है।

सफाई के दो प्रधान भेद—बाह्य सफाई जिसका तात्पर्य शरीर,  
निवास-स्थान, जलवायु और भोजन की स्वच्छता से है। आन्तरिक  
से तात्पर्य मन और हृदय की सफाई से है।

मानव-जीवन का तारोमदार उसकी आन्तरिक स्वच्छता पर।  
मनुष्य जिनका ही आन्तरिक शुद्धि में बाध-बन्धा है, कुत्ता ही उन्-  
मूल्य अधिक है। संसार सभी व्यक्ति की पूजा करता है जिसका चरित्र  
शुद्ध होता है। शुद्ध आचरण वाले व्यक्ति समाज में चारु और  
की दृष्टि से देखे जाते हैं। समाज उनके चारुता का अनुकरण करती है।  
समाज का सम्पन्न सर्वत्र सदाचारी व्यक्ति कहिये मन रहता है। चात्र  
सदाचारी सभी आन्तरिक शुद्धि के कारण ही भाग्यवश के द्वारा  
कर हुए हैं।

बाह्य सफाई का भी उचित मानव जीवन पर अधिक पड़ता है।  
बाह्य सफाई समाज सम्पन्न को बना बनाती है। वह मनुष्य की शक्ति  
मही एक सफाई का भवन प्रिय। कुत्ता रहता है वह सभी कुत्तों की  
दुर्गन्धपूर्ण गालियाँ उठाने वाले व्यक्ति को सभी स्वरूप मही एक सफाई  
का सम्पन्न सफाई के कारण से समाज में सफाई सफाई सफाई है।

आन्तरिक सफाई का भी जीवन पर पड़ा उचित पड़ता है।



जिससे उनकी मनोवृत्ति बढ़े । ऐसी व्यवस्था होने पर ही गन्दगी दूर हो सकती है अन्यथा नहीं ।

## जीवन में अहिंसा का महत्व

विचार-तालिफा :—

(१) प्रस्तावना—अहिंसा की व्याख्या ।

(२) अहिंसा से लाभ—अहिंसा मनुष्य-जीवन को उत्कृष्ट करती है, मनुष्य-समाज का दिन-माधन करती है, मानव-जैव को सुख शान्ति देती है, अहिंसा ही शान्ति ला सकती है, ला नहीं । अहिंसा और सत्याग्रह-संग्राम ।

(३) अहिंसावादी महापुरुषों की जीवन-गाथाएँ ।

(४) उपसंहार—अहिंसा का महत्व ।

संसार में सर्वत्र हिंसा का साम्राज्य है । एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र का खाया हो रहा है । साम्राज्य-खोलुर आतिथी सम्पाद्यमान करके आतिथी और राष्ट्रों को मिला रही हैं । स्वार्थ-परायण राष्ट्र स्वार्थ-परायण को मिला देने के लिये अनेक राष्ट्रों का रक्त शोषण करते । यूरोप के रोमांचकारी दरज किस्के हृदय को नहीं छिछाते ? स्वार्थ-परायण आतिथी स्वतन्त्रता के नाम पर कैसा तर-संसारकारी छड़ रही हैं ? महाजन लोग अलग कर्मचारों की ग्राह्य शीघ्र से पुंजीपति महापुरुषों का लून घूमने में मस्त हैं । मालाकारी बनने में अक्षय की वाचना की वृत्ति के लिए महत्त्वों प्राणियों को मार-मार खा रहे हैं । जिधर देमिने उधर हिंसा ही का एकमात्र साम्राज्य दृष्टिगत रहा है । निम्न लये जिधर और घातक धर्मों का आविष्कार होता रहा वहाँ वहाँ जहराली गैरे बनाई जा रही हैं । बड़ बड़ बमबपेक खोजने लैया हो रह है, बड़ी-बड़ी बिकलात लाय लयाय हो रही हैं ओ सैकड़ों देश पर जाकर अपना काम करे । इस बिकलात हिंसा के अत्यन्त बरबारी अहिंसा को जान करना अहिंसा का ईसा उदानी है ।









(४) समय की वाकम्प्री करना ही हमका मनुष्यवश है ।

(५) समय के मनुष्यवश से लाभ :—

गौरव प्राप्त होगा है, विना को शक्ति मिले।  
आत्मिक उत्थान होगा है और लोक में वर और  
होना है ।

(६) मनोऽन्तः और समय ।

(७) उपसंहार—हमारा कर्मस्थ ।

काय करे जो आन कर, आज करे गो आन ।

पक्ष में वरमै होगी, बहुरि करेगा कर्मस्थ । “कवीर”

जो देश और समाज समय का आन करे हैं, वही देश  
समाज उत्थान के गिम्बर पर विराजते हैं । जो राष्ट्र समय को अपने  
और आत्म-प्रभार में स्वीकार करते हैं, वह संसार में अपने  
मिठा कर हैं । वही आनिता संसार में अपना गौरव स्थापित करती  
हैं। जो समय के मूल्य को समझते हैं । परिचयी होंगे वे समय के  
का समझते हैं । उन आनी के पास काम है, किन्तु समय नहीं है।  
समय समय है, मगर काम नहीं । हमारा समय गणना हीको हम  
आत्म-प्रभार में स्वीकार हीना है । वही कारण है कि हमारा देश  
बनता जा रहा है । हमें आर्थिक कामों में स्वमायन करना है, किन्तु हमें  
आधी राष्ट्र आर्थिक कामों का काम में अपना गौरव समझते हैं ।

उत्थान जिस आनिता समय का लाभ करती है और अपने काम  
में काम में काम नहीं करती । समय का मनुष्यवश करने वाली  
मनुष्यवश समय को मूल्य होता है । हमें विचारना चाहिए कि  
आनिता (१) समय को (२) काम में लगे रहना है ।

समय के वर और (३) समय का मनुष्यवश करना ही  
करना होता है और (४) समय के वर और (५) का समय वर ही  
समय वर ही वर और (६) समय वर और (७) समय वर ही  
है । समय वर और (८) समय वर और (९) समय वर ही



जब यह मुझे आज्ञासी बनाकर हम खेगा। आज्ञास्व हमारे कर्तव्य मानसिक और आत्मिक पतन का मूल कारण है। समय के सगुणों आज्ञास्व ही सबसे बड़ी बाधा है।

ओ काम तुम्हें करने हैं, उन्हें निर्धारित समय पर ही समाप्त करने में तात्पर्य है। यदि काम को पूरा करने में समय न मिले तो काम को पूरा करने में असमर्थता होगी। यदि काम को पूरा करने में समय न मिले तो काम को पूरा करने में असमर्थता होगी। यदि काम को पूरा करने में समय न मिले तो काम को पूरा करने में असमर्थता होगी।

मित्रने-जुझने वाले लोग प्रायः भाते-जाते रहते हैं। मित्रने-जुझने वाले में बात-चीत में बड़ा समय व्यतीत होता है। अतः हमें चाहिए कि हम मित्रने-जुझने वालों का समय निरिक्त कर दें। यदि हम ऐसा न करें तो हमें काम करने का समय ही न मिलेगा। ऐसी वृत्ता में मनोद्वन्द्व में सम्मन हो नहीं है। सबसे व्यवहार निष्कारक इसकी। जो कुछ करना है उसे स्पष्ट कह दो, सहज-बाजी में मन रहनी। बात-चीत में गये कुछ काम को भी। बात-चीत में निष्कारक में वादे-प्रकारो। चीज चीजे मिली-जुखी जाओ-जना करना प्रथम नहीं है। आओ-जना ही करनी है तो मित्रने-जुझना। सहज-बाजी के ज्ञान पर काम, प्रियम आता सीर बना रहने काय है। बात-चीत में आता की अनिश्चिति देकर ही करनी चाहिए। अतः मित्रने-जुझने वालों का समय बचाव होना है।

१. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 २. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 ३. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 ४. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 ५. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 ६. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 ७. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 ८. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 ९. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।  
 १०. जल नाला गलत स्थिति में है। जल नाला गलत स्थिति में है।



## होली

विचार-सालिदा :-

- (१) परमात्मना—स्वीकारों का महत्त्व ।
- (२) ब्रह्मण्य के स्वीकार और होली ।
- (३) होली क्यों मनाते हैं ?

ब्रह्मण्यगमन के द्वय में, ब्रह्म-परिवर्तन के कारण  
नवीन ब्रह्म द्वारा सगुण-पूजा के कारण ।

- (४) होली के सम्बन्ध में प्रचलित कृत-कथाएँ, प्रह्लाद का  
कथा और कृत्यावतार में काम और राम का स्थान ।
- (५) होली के सम्बन्धित विविध वर्णन :-
- (६) होली पूजा, परस्पर मँद और कुछ विशेष वर्ण ।
- (७) होली पुष्प के काम-दाजि ।
- (८) होली उगमन मनाते में आवश्यक सुधार ।

प्रत्येक समाज में स्वीकारों का विधान है । प्रत्येक  
जनने मित्रों के अनुसार स्वीकारों को मनाता है । स्वीकार उक्ति  
नीति को प्रकट करते हैं । स्वीकार समाज में सति, संगठन, सेवा  
सञ्जीवना सम्मिलित करते हैं । समाज में कुछ स्वीकारों के निहायिक  
दिनमें परम्परागत इतिहास का सम्बन्ध होता है । कुछ स्वीकार  
के उगम-विषय की बात में मनाते जाते हैं, कुछ स्वीकार ब्रह्म-पूजा  
और नवीन ब्रह्म के आगमन की लुप्त में सम्मिलित होते हैं । इसी  
का स्वीकार विविध प्रकार के स्वीकारों की क्रम में से है । ब्रह्म  
ब्रह्मण्य के स्वीकारों में सम्बन्धित कथाएँ रहती हैं । ब्रह्म का उगम  
पुष्प का दिन सम्बन्धित होता है ।

होली (होली) का प्रथम सम्बन्ध स्वीकार है । इस स्वीकार  
वर्णों के कारण समाज में होली विशेष वर्णों की आवश्यकता होती है ।  
मे (होली) की भाँति यह स्वीकारों से बहकर होती है, इसी कारण  
स्वीकार विविध होकर है ।









अपनी पुरखोगिता है, अपना महान है । लोहारों से समाज और मनुष्य बना है । लोगों से परस्पर स्नेह बना है । मित्रके मृगने है, जिस से जनता को परस्पर निकट आने की शक्ति है । साथ ही लोग अपने पुराने दुःखों को भूल कर फिर नये गिरे से स्थापित करते हैं । यदि होली के लोहार में पर्याप्त संशोधन और धर दिने जाँच तो निरालयेद भारतीय जनता को निकट सम्पर्क से ही और एकमेव मेल-मेल में बाँधने में हमसे बढ़कर कोई लोहार नहीं है नचना । अभी तक होली का एक बादरी खादम्भों और कड़े भावों से घिरा हुआ है ।

हम लोहो, रसाय और धवीर की कर्षा करो । गांधी-कलाओ, हम गांधीवों पर हम कमर बांधो । लोहो-धुरो, मगर तुम हम लोहो लोहो लोहो, मगर लोहार और गाँव दोकर गांधीवों से मेल केने । निरालयेद लोहारों को मृगुर मेल देना ही राष्ट्र-सेवा है । हमें बुलेने कल्पना की शक्ति इस समय के लिये कोई बलु नैवार कभी चाहिए, तो हमें होम, महामुमुनि और महात्म के मूल में बाँधकर राष्ट्र को हमसे निकट हो ।

होली की सम्मेली की मिटाया जाय । पैसाच और बीचव सबों के कर क कर बाधना बुझन कार्य है । गांधी-गांधीव बचना बीचना है । लोहो-लोहो का मिटाया जा देना कार्यवच है । हम चाहिये कि हमसे होली को दूर करें, तब ही हमारा बचना है ।

## लोहार का मित्रता

लोहार का मित्रता

१. लोहार का मित्रता का अर्थ है कि लोहार

२. लोहार का मित्रता का अर्थ है कि लोहार

३. लोहार का मित्रता का अर्थ है कि लोहार



सुमेर महाशय को प्राप्त हुआ था। भारतवर्ष में इसका प्रवेश दार्दा फावके बतलाये जाते हैं, जिन्होंने १९१३ ई० में भारतीय सिक्कम निर्माण किया था।

विद्युत् दिनों से सिनेमाघों में बड़ा विकास हुआ है। ये दिन सर्वप्रिय होने लगे जा रहे हैं। घण्टे-घण्टे सिक्कों की शिप बढ़ती चली जा रही है। महलों भर-भारी इस व्यवसाय में हैं। करोड़ों रुपया इस व्यवसाय पर खर्च हो रहा है। सिनेमा के कमरा: दूर किये जाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। सन् १९१८ ई० में दूर चित्रांशों में केवल एक चित्र ही दिखाये जाते थे, किन्तु अब तो चित्रों का भी प्रयोग हो गया है। यही नहीं, अब तो रंगीन चित्र भी बनने लगे हैं। प्रकृति का रंगीन सौन्दर्य भी हमें आनन्द देने लगा है।

वर्तमान सिक्कम-निर्माण में केमरे का स्थान सबसे महत्व का है। चक्र-चित्रों के खेने का केमरा एक विशेष रंग का और बहुमुखी होता है। इसके द्वारा छिपे हुए चित्रों को हमी कमरे में सिनेमा के पर्दे पर घुमाने से इन चीजों की वास्तविक परिचित हो जाती है, जिन्हें चित्रित करने से। यही चित्र कभी-कभी बदलते हैं और मानकों को देना भी होता है मानों वह स्थिर हैं। कार्य में किसी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न नहीं होता।

चित्ररट दिखाने में विद्युत्-शक्ति से काम लिया जाता है। सिक्कों विविध आकारों के होंगे का एक-एक करने के लिए महलों चित्र घटित होते हैं। एक आकार का या एक-एक दिखाने के लिए महलों का चित्र निर्माण करने पड़ता है। इसी प्रकार कभी एक कलात्मक या आनन्ददायक चित्ररट का दिखाने के लिए एक-एक करने की आवश्यकता होती है। इस लिए का आनन्ददायक नाम हो सकता है। एक मानकों 'चित्ररट' करने में हमें बहुत ध्यान देना है।

आनन्ददायक सिक्कों के दिखाने का एक नया नया कलात्मक और चित्ररट



के लिए यह बड़े महत्व की वस्तु है। हमारे देश में शिक्षा के जिने माघों का प्रयोग किया जा रहा है। इतिहास, भूगोल और विज्ञान शिक्षा जैसे विनेमा द्वारा की जा सकती है, जैसे किसी अन्य माघ, नहीं दी जा सकती। भूगोल के अनेक प्राकृतिक दृश्य, मानने और का बहाव जैसे सिनेमा में देखने आता है, जैसे इसे दृश्य को जाकर देखने में भी नहीं आता। ऐतिहासिक घटनाएँ विजय पर भाँति दृश्यक्रम कराई जा सकती हैं। विविध स्थानों की रहन-सहन की परिस्थिति का ज्ञान विनेमाओं द्वारा ही भली प्रकार होता है। ज्ञान विनेमाओं की अनेक दृष्टि में भूगोल का ज्ञान कराने में बड़ी असमर्थ रहते हैं।

सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक सुधार भी सिनेमा की इस प्रकार से करते हैं। कुछ फिल्म अद्वितीयता का कार्य करते हैं, कुछ तो कुछ विवादों के निपटार के लिए लेखने हैं। कुछ रसी-जाति के ही व्यवहारों का ही दिग्दर्शन कराते हैं। इसी प्रकार के लेख समाज। पृथित कार्यों के प्रति प्रेरणा उत्पन्न करने हैं।

विज्ञान और सुधार के लिये भी सिनेमाओं का उपयोग बड़ा रूप है। व्यापक ज्ञान सिनेमा के चित्र-पटों पर अपनी वस्तुओं का विज्ञान हैं, ताकि उनका वस्तुओं का बिक्री बढ़े। प्रचार-कार्य में सिनेमा से एक कई साधन नहीं हैं। चित्र द्वारा उन वस्तुओं के पृथित चित्र दिखा जायें, जिस हम समाज से दूर करना चाहते हैं। दर्शक लोग पृथित का से प्रेरणा और उनका बदल करना सीखेंगे।

सिनेमा जेदा उपयोग वस्तु है, बड़ा इससे हानि भी बहुत अन्य है। जब से सिनेमा का प्रचार हुआ है, तब से देशों के लोगों की जीव कम हो गयी है। जो लोग सिनेमा देखने के आसपास हैं, लगभग अपनी आँखें बंद हैं। सिनेमा के अरखीज और गन्दे चित्र मानवी जीवन पर बुरा प्रभाव डालते हैं। आखिरी फिल्म कंपनियों ने ऐसे अरखीज लोगों को फिल्म नकार करती है। कुवासमा-पूर्ण लेख

















भारतीय हरिजन-सेवा-संघ की स्थापना की है, जिसका कर्तव्य है कि हरिजनों के रहन-सहन को ठीक बनाये । उनको हम प्रकार की शिक्षा दी जाये कि उनमें और उन्नत करे जाने वाली दिम्बु जनता में कुछ भी भेद न रहे । महारमा जी ने १९३४ ई० में हरिजन-आन्दोलन को आरम्भ देने के लिए सारे देश में दौरा लगाया । महारमा जी को हम कर्तव्य आशावादी सफलता मिलेगी ।

हरिजन आन्दोलन बड़ी शान्ति में चल रहा है । मन्त्रिमन्त्र से हरिजन आन्दोलन से काफी आशाओं की जा रही है । हरिजन-आन्दोलन अपने असुरक्षितता निवारण तथा हरिजनों की समानता का पद दिखाने का प्रयत्न कर रहा है । हरिजनों में भी विकास की भावनाएँ जागृत हो रही हैं । भद्रों में सफाई माने लगी है । भद्रों में संगठन के भाव जागृत हो गये हैं । भद्र जातिवादी अपने दायित्व को समझने लगे हैं ।

पं० मदनमोहन मालवीय और पं० सावरकर भी भद्रोद्धार के कार्य में बड़ी तत्परता दिखा गये हैं । घन भारता है कि दिम्बु जनता में पुष्पादूत के भाव सदैव की निर्मूल हो जायेंगे । जब पुष्पादूत की भारता समूह नष्ट हो जायेगी, तब ही भारत के मातृ का सूर्य उदय होगा हमारी महत्त्व-कामना ऐसी ही है ॥

## स्वावलम्बन

### विचार-तालिका:—

- (१) प्रस्तावना—स्वावलम्बन की व्याख्या ।
- (२) स्वावलम्बन की आवश्यकता ।
- (३) स्वावलम्बन से लाभ—समाज में सुख, शान्ति और भावना वृद्धि होती है । धर्म-सुधार जाता है और कीर्ति मिलती ।
- (४) स्वावलम्बन और समाजिकान्ति ।
- (५) स्वावलम्बन धर्मियों में समाज का अहित होता है ॥









समावेश करें । अपने कष्ट-कीटाक्ष और लघोण-बन्धों को हारें  
अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को स्वयं निर्माण करें ।



## आलस्य

विचार-शालिका—

(१) प्रस्तावना—आलस्य की व्याख्या । (२) आलस्य से  
—जीवन-शक्ति का हान, पराधीनता का उदय, दूसरों का आश्रय  
पतन और स्वास्थ्य हानि । (३) स्वावलम्बन का महान । (४)  
इसे आलसी न होना चाहिये ।

आलस्य एक प्रकार का रोग है, जो मनुष्य को शरीर, हृदय, पुं  
कोड़े की भांति नष्ट करता रहता है । समाज में अज्ञान, अधिवा  
अवगुण केवल आलस्य के ही कारण प्रवेश करते हैं । आलस्य  
अवयवों को कुण्ठित करता है । शारीरिक शक्ति को नष्ट कर मस्तिष्क  
निकम्मा बनाता है । विद्याविना, अकर्मव्यता और पराधीनता आलस्य  
रूपान्तर मात्र है । किसी कवि ने आलस्य के सम्बन्ध में क्या ही पुनः  
कहा है—

आलस्य बैरी बसत तन, सब सुख को हर लेत ।

उषों ही लघन बन्धु सों, मिले परम दुख होत ॥

आलसी आदमी भाग्यवाद की भाव में अपना जीवन नष्ट  
करता है । इसका जीवन धर्म-विवाद और मपश्य में प्र  
होता है । आलस्य के साथ ही साथ रोग, विनाश और दरिद्रता भी उ  
घर में पदार्पण करने हैं और इनको चाया हुआ देखकर मज्जितता  
पराधीनता स्वयं आकर अपना अधिकार जमा लेती है । जब आल  
ध्वनि पर अपना पूरा अधिकार जमा लेता है, तब उसकी हृष्या शक्ति  
को नष्ट करता है तत्पश्चात् इसके भोज और मादक को नष्ट कर  
है । अज्ञानता और रवेना उसको बड़ प्रेम से आलस्य करती है  
दरिद्रता आलसी को अपना प्यारा मक्का बनाती है । पुनर्प्राप्त और







कुछ भाग आवश्यक दान करें। दान वही उत्तम है जो वाक्य हुआ रहे। दान पाकर वाचक में बड़ शक्ति आ जाय, जिसमें मंगल की आवश्यकता ही न पड़े। इसी कारण विद्या-दान को बढ़ा गया है, क्योंकि हमसे वाचना का सर्वदा मूल भाव हो उक्त अतः विद्या-संस्थाओं को दान देना धन का सदुपयोग करना है।

मानव-जीवन में केवल रोगी रूपसे ही मे काम नहीं जीवन को मधुर और सरस बनाने के लिये आवश्यक है कि प्रमोद के लिये भी कुछ धन व्यय किया जाय अर्थात् अपने मधुरता जाने के लिये आवश्यक है कि वह मनोरंजन और भी कुछ व्यय करे। इसी प्रकार आकस्मिक घटनाओं के स्वरुप के लिये व्यय करना भी धन का सदुपयोग है। ऐसे सभी समय धन व्यय करने में आगा-बीड़ा न करना चाहिये। सड़कों, पोशाकों और रोगों के लिये अपनी आमदनी में स बचाव ही पुष्टिमाना है।

देश के उद्योग-धर्मों और कला-कौशल को उन्नति देने अपनी सम्पत्ति को खगाना धन का सदुपयोग करना है। इन का उपयोग देश की आर्थिक दशा के सुधारने में सहायता करता है। का तथा उपयोग वही है, जो देश की उन्नति शक्ति को बढ़ा दे।

लोकोपकारी कार्यों में धन व्यय करना अथवा लोक-हितकारी को दान करना ही धन का सदुपयोग नहीं, बरन् अपने हित करना भी धन का सदुपयोग है। अच्छे इलाक़ा मकान में रहना को अच्छी शिक्षा देना, अच्छा भोजन करना और अच्छे वस्त्र को अपने आप ही को आनन्द नहीं दता बरन् देखने वाले के हित को आनन्द का भुक्ता करना है। अपने ऊपर व्यय करना समाज के सदस्य पर व्यय करना है, किन्तु सद्व्यय वह धन रहना चाहिये कि धन विज्ञानिना प्रती व्यय नहीं हो रहा है। विज्ञानिना पर व्यय हुआ धन हमारे ऊपर विशुद्ध प्रभाव डालता है परन्तु हमारी



- प्रचार और सुधार-योत्रना । (४) मराठक धारणाओं का ।  
 (५) आक्रमण काल में रेडियो का उपयोग । (६) रेडियो का ।  
 (७) उपसंहार—रेडियो द्वारा प्राम-सुधार ।

जब मनुष्य शारीरिक और मानसिक परिश्रम से थक जाता है, स्वभावतः उसके हृदय में अभिजाता उठती है कि वह अपनी शक्ति और मानसिक बलान्ति किसी प्रकार दूर करे । इस बलान्ति को दूर करने के लिये वह मनोरंजन के साधनों को ढूँढता है । कोई संगीत-गाँव जाकर संगीत का ध्यानन्द लेता है, कोई सिनेमा-हाल में जाकर प्रसन्न होकर रहता है, कोई प्रकृति की मन-भावना छुटा कर अवशोषण कर लेता है, कोई नदियों के किनारे की सुरम्य भुवन मोदित होकर निरस्त हो जाता है, कोई बल्लभ-घरों में जाकर अपने मनोरंजन के लिये ध्यानन्दानुभव करता है, कोई बल्लभ-घरों में जाकर अपने मनोरंजन के लिये ध्यानन्दानुभव करता है, कोई बल्लभ-घरों में जाकर अपने मनोरंजन के लिये ध्यानन्दानुभव करता है, और श्रेष्ठों द्वारा अपना मनोरंजन करता है, कुछ मनुष्यशास्त्रियों में ही बलान्ति दूर करते हैं और कुछ रेडियो द्वारा अपनी स्वाभाविक शक्ति दूर करते हैं ।

मनोरंजन के साधनों में रेडियो का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है । इसके द्वारा बिना तार की सहायता से किसी दूर की स्वनि सुनी जा सकती है । रेडियो का उपयोग मन्देश, स्थानीय और संगीत सुनने के लिये किया जाता है । किसी बड़े नगर में रेडियो स्टेशन होता है जहाँ से समाचार, व्याख्यान और संगीत आदि कास्ट (कॉस्ट) किये जाते हैं ।

सन् १९२१ में मारकोनी नामक इटली के एक वैज्ञानिक ने रेडियो का आविष्कार किया । संसार में सबसे प्रथम इंग्लैंड में माइक-कॉस्ट (मन्देश भेजने का) स्टेशन स्थापित हुआ, जब से अब तक निरन्तर इस आविष्कार में ही रही है ।

माइक-कॉस्ट स्टेशनों पर समाचार के समाचार स्थापित और प्रसारित रहते हैं । प्रत्येक कार्य के लिये पहल से ही प्रोद्योग बना दिया जाता है, जिसकी सूचना पंद्रह दिन पहले ही सर्व-साधारण को दे





कच्चा-कौमल्य की बातें सुनाई जा सकती है, जिससे सर्व-सामान्य काम उठा सकते हैं।

प्रचार कार्य में तो रेडियो ने समाचारण काम शुरू किया है। स्वयं से भाषा सुगमता से किसी भी प्रकार को उभराना बना सकते हैं। जनता में इसका प्रचार कर सकते हैं।

ग्राम सुधार का कार्य जैसा उलम रेडियो द्वारा हो सकता है किसी दूसरे माध्यम द्वारा नहीं हो सकता। रेडियो द्वारा गाँव व्यापार, कृषि और पशु-प्राशन सम्बन्धी अनेक बातें बताई जा सकी हैं। यह है कि अब भारतभर में भी इसका प्रचार हो रहा है और इसमें काम उठा रही है।

रेडियो द्वारा मवेशियों की बीमारियों के सम्बन्ध में गाँव बहुत कुछ समझाया जा सकता है। इनके सीधे-साधे नुस्खे उन्हें जा सकते हैं। सेती के कीड़ों के निवारण के उपाय भी बहुत से बताये जा सकते हैं। साथ देखने में आता है कि गाँव बाड़े अनेक रोगों के शिकार हो जाते हैं। इन्हें स्वस्थता परिषद कराकर अनेक रोगों से बचाया जा सकता है। सकारण बचने के लिये उन्हें अनेक चेतावनी और सावधानी दी जा सकती है। मामूली औषधि उपचार भी बताया जा सकता है।

रेडियो द्वारा जनता का सम्मान्य धारणाओं का निर्मूलक है। जनता में अनेक कुरीतियाँ फैली हुई हैं। गाँव में और गवर्नमेंट में पचास कड़ुता फैल जाता है, किन्तु रेडियो द्वारा निवारण बड़ा आसान हो सकता है और उसकी धारणाओं मिटाया जा सकता है।

सरकार इसमें अधिकार है विचार है। यह रेडियो बड़ा काम करते हैं। जब गवर्नमेंट जनता का कोई कुछ अपराध रियायत देती है तो बचारे के उपायों को गाँव गाँव इस सूचना से रह जाते हैं। धनी, शिक्षित और अधिकारी लोग ही इस निर्देश



समय में हम यही कहेंगे कि रेडियो का मविष्य बड़ा हमारा ।  
आततपर्यं कैसे विद्युदे देश को उठाने के लिये इनका उपयोग का  
आवश्यक है ।

## आज्ञा-पालन

विचार-शालिका :—

(१) प्रस्तावना—आज्ञा-पालन की व्याख्या । (२) बर्तों की आज्ञा-पालन । (३) आज्ञा-पालन में उचित अनुचित का विचार (४) आज्ञा-पालन के लाभ—सुख-शान्ति और वृद्धि होती है, विचारों पर नियंत्रण रहता है, प्रेम और सहानुभूति बढ़ती है, मिश्रित जीवन बनता मानविक शक्तियों का विकास होता है । (५) आज्ञा-पालन के उपाय (६) आज्ञा-पालन का मोक्ष । (७) उपसंहार—आज्ञा-पालन हमारा बर्तन्य ।

मनुष्य-जीवन में आज्ञा-पालन का गुण भी बड़ा महत्व रखता । जिस व्यक्ति और समाजों में व्यवस्थाओं के पालन करने की बला रहने हो वह व्यक्ति और समाज ऊँचे हैं । प्रत्येक मनुष्य की प्रति प्रति है कि जो कुछ मैं कहूँ अथवा बखूँ, उस समाज माने और अनुसरण करे । यदि उस समाज नमक कथन के अनुसार कार्य करता है तो उस मनुष्य के मानस का विकास नहीं रहता । यदि उस समाज का मान्यता का काय करना है तो उसका निरमोह मान्यता बन गई है । यदि उस समाज में मान्यता है कि आज्ञा में रहने को तो वह मनुष्य भी उस समाज के सदस्य बनना चाहिये । दूसरे शब्दों में, जो आज्ञा-पालन के व्यवस्थाओं का पालन करता है वह मनुष्य ही समाज का सदस्य बनता है । यदि वह आज्ञा-पालन नहीं करता तो समाज का वह मनुष्य ही समाज का सदस्य नहीं बनता ।



विचारों पर पूरा नियन्त्रण होता है। आशा-वाञ्छन समाज में प्रेम सहानुभूति उत्पन्न करता है। संगठन-शक्ति को बढ़ाता है। जातियों अन्तर्गत और अन्तर्गत कही जाती है। जो परिवार अपने की आशा की अवहेलना करता है, जो मेना अपने सेवाशक्ति का दुरुपयोग करती है, जिस समाज की कोई व्यवस्था नहीं है, वह नहीं तो कल अवश्य ही नष्ट हो सकती है। जिस समाज के बहुत हैं और 'हमों सुनो दीगरे नेम' के सिद्धान्त वाले होते हैं, वह प्रायः नष्ट हो जाती है।

सम्यक् राष्ट्र एक ही नेता के आदेश पर चलने में अपना कर्तव्य समझते हैं। अपनी व्यवस्था को ठीक रखते हैं। सब अनुशासन के नियमों को पालते हैं, यह राष्ट्र समगामी होते हैं और हमें का संसार मान्यता है। व्यवस्थित परिवार जो अपने स्वामी की आशा का प्रचार करते हैं, प्रायः वही परिवार सुखी देखने में आते हैं। आशा-वाञ्छन और दुराग्रह कभी न जाना चाहिये। हठ और दुराग्रह ऐसे अवगुण जो मनुष्य को उठने से नहीं देते। हमें चाहिये कि हम समाज की सहायता और नियमों का पालन कर अपने को आशा-वाञ्छन करने का इच्छा बनाएँ। हठ और दुराग्रह प्रायः अंग्रेजी जातियों ही में अधिक देखने में मिलता है, सम्यक् जातियों में यह अवगुण प्रवेश ही नहीं कर पाता। आशा-वाञ्छन के गुण से मानव जीवन में निम्न गुण विकसित होते जाते हैं। प्रायः अनुभव करने में आया है कि मनुष्य में उत्तम गुणों का विकास तब ही हुआ है, जब वह आशा-वाञ्छन के मूल में व्यवस्थित रहता है। आज पाकिस्तान मित्रादी हो अनुर मेना-नायक बनने देखा गया है। पाकिस्तान अन्तर्गत कला और पत्रकारिता की समानता केवल आशा-वाञ्छन करने के कारण ही कर सका था।

आशा-वाञ्छन वांछित ही मित्रादी ने राष्ट्रपति हो सका था। तब कहे मानवो हृद्यों में सद्वृत्तियों का विकास के लिये आशा-वाञ्छन



घर निर्माणक । (२) कुटुम्ब के लोग की  
 वेशियों की सुरक्षा, रण-शोधन, मनोरंजन, मनकंठा और  
 परायणता, भैतिक बलशक्ति और प्रेम और महाबुद्धि की अभिवृद्धि  
 (३) कुटुम्ब की अन्य खेदों से मुक्ति । (४) उपमार्ग—लेख का

कुटुम्ब का लेख हमारे देश में चमकी संस्कृति के  
 माया है । अन्य चमकी लेखों की अपेक्षा यह लेख सुख, सदा की  
 अधिक उपयोगी है । इस लेख में न तो अधिक संघट्ट ही है और न  
 अधिक सामान जुटाने की आवश्यकता । मैदानी लेखों में यह लेख सबसे  
 अधिक मनोरंजक और स्वास्थ्यवर्द्धक है ।

यह लेख समतल और सभूमि में खेला जाता है । इसके लिये १०  
 गज लम्बी और ६० गज चौड़ी भूमि की आवश्यकता पड़ती है ।

लेख की व्यवस्था इस प्रकार की जाती है । मैदान के चारों ओर  
 दो-दो पोल गाड़ दिये जाते हैं, यही स्थान गोल के सूचक बिन्दु होते हैं ।  
 इसके अनुरिक्त हम लेख में किसी सामान की आवश्यकता नहीं पड़ती  
 बस, एक गैर मय क्लैडर के होने चाहिये और क्लैडर में हवा भरने  
 एक पम्प । यद्यपि, हमने अधिक सामान इस लेख में नहीं जुटाया परन्तु  
 देशी खेदों को भी तब यह लेख सबसे सरल लेख है ।

लेख के मध्य में एक मध्य रेखा "Centro" रेखा होती है, जिससे  
 मैदान की भागों में विभाजित हो जाता है । इसके अनुरिक्त दो रेखाएँ  
 और मौखिक हैं, जिन्हें क्रमशः गोल लाइन "Goal Line" और  
 टच रेखा "Touch-Line" कहते हैं । ये समस्त लाइनें सकेद पर  
 चिह्नित करनी पड़ती हैं ।

इस खेल में दोहरी लय का भीति ग्यारह-ग्यारह खिलाड़ियों  
 को टोनिना आवश्यक होना है । ये खिलाड़ी ६ भागों में बंट जाते  
 दोहरे गोल के बीच "गोल गैर", इसके पीछे "केंद्र  
 गैर" और गोल लाइन के दूर होते हैं । जाने वाले खिलाड़ियों की संख्या  
 होती है इनका कत यह है कि यह "बाज" को विरोधी खिलाड़ियों





और निर्धारक । (३) कुशाग्र के क्षेत्र की उपयोगिता—मौल-  
देशियों की सुरक्षा, रण-सोपान, मनोरंजन, मनोरंजन और कर्म-  
परायणता, भौतिक बलदायि और प्रेम और महापुरुष की अभिवृद्धि ।  
(४) कुशाग्र की अन्य क्षेत्रों से गुजरना । (५) ट्रांसमिशन—क्षेत्र का मध्य ।

कुशाग्र का क्षेत्र हमारे देश में अंग्रेजी संस्कृति के साथ साथ  
आया है । अन्य अंग्रेजी क्षेत्रों को अपेक्षा यह क्षेत्र मुख्य, सस्था और  
अधिक उपयोगी है । इस क्षेत्र में न तो अधिक दृष्टि ही है और न  
अधिक सामान्य गुणों की आवश्यकता । मैदानों क्षेत्रों में यह क्षेत्र सबसे  
अधिक मनोरंजन और स्वास्थ्यदाक है ।

यह क्षेत्र समतल और मृत्ति में खोजा जाता है । इसके द्विप १००  
गज लम्बी और ६० गज चौड़ी मृत्ति की आवश्यकता पड़ती है ।

क्षेत्र की व्यवस्था इस प्रकार की जाती है । मैदान के आगे सामने  
दो-दो पोल गाड़ दिये जाते हैं, यही स्थान गोत्र के स्तंभ बिल्कुल होते हैं ।  
इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में किसी सामान की आवश्यकता नहीं आती ।  
बस, एक गैर मर स्टेडर के होने चाहिये और स्टेडर में हवा भरने की  
एक पम्प । अब, हमने अधिक सामान इस क्षेत्र में नहीं जुटाया पड़ता ।  
देशी क्षेत्रों की भाँति यह क्षेत्र सबसे सस्था क्षेत्र है ।

क्षेत्र के मध्य में एक मध्य रेखा "Centre" रेखा होती है, जिसमें  
मैदान दो भागों में विभाजित हो जाता है । इसके अतिरिक्त दो रेखाएँ  
और खींचते हैं, जिन्हें क्रमशः गोत्र-लाइन "Goal Line" और  
टच रेखा "Touch-Line" कहते हैं । ये समस्त लाइनें संचेद घूने से  
चिह्नित करदी जाती हैं ।

इस क्षेत्र में दाहिने क्षेत्र की भाँति ग्यारह-ग्यारह खिलाड़ियों की  
दो टोखिया व्यवस्थित होती है । ये खिलाड़ी ६ भागों में बंट जाते हैं ।  
आगे खेदने वाले "फील्डर", बीच के "हाल बैक", इनके पीछे "गुज-  
बैक" और गोत्र रणक कहलाते हैं । आगे वाले खिलाड़ियों की संख्या ६  
है । इनका कर्तव्य है कि वह "हाल" को विराम स्थितियों के

गोख में बड़ा है। बीच वाले तीन सिंहादियों का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण होता है। वे गोख की भी गन्ना करते हैं और आगे बढ़कर अमृतामियों के पीछे दूसरी टोली पर आक्रमण भी करते हैं। वे साधारणतया "बाज" की स्वेजने वालों की ओर बढ़ाते रहते हैं। पीछे खेलने वाले होते हैं। यह गेंद की आगे खेलने वालों के आगे बढ़ा देते हैं और अपनी ओर के गोख में विरोधी पार्टी द्वारा भेजी गेंद को रोकने की चेष्टा करते हैं। 'गोख-बीर' अच्छा खिलाड़ी होना चाहिये।

खेल के आरम्भ में दोनों पार्टियाँ "Toss" सिस्टम द्वारा यह निर्णय करती हैं कि पहले गेंद को लेकर कौन पार्टी आगे बढ़ेगी ? जिस टोली को बारी मिलती है, वह बाउल को मध्य रेंज पर रखती है और प्रहार द्वारा बाउल को आगे बढ़ाती है। जब गोल हो जाता है, तब फिर बाउल को इसी स्थान पर लाया जाता है। माध्यमिकता यह खेल :२ मिनट में खेला जाता है। दोष में १५ मिनट का अवकाश भी दिया जाता है।

गैद को कोहें निचाही हाथ से मही छूता। यदि किसी कारण से निचाही गैद को हाथ से छू ले तो गैद फिर नष्ट-रोग से दिवसी दख होनी पार्थी को चोर बनाना है इसे "Foul" या दोष कहते हैं। इसी प्रकार यदि किसी प्रकार रोगों के निचाही दूसरी रोगों के निचाही को पछा दे, पछे या बाधा पहुँचावे तो ऐसी दशा में भी दोष (Foul) माना जाता है।

[illegible]

हम क्षेत्र की हार-जीत गोत्र बनाने पर होती है। जो पार्टी अधिक संख्या में गोल बनानी है, वह विजयी पार्टी समझी जाती है। जब कोई पार्टी गोत्र न बना पाती अथवा दोनों पार्टियाँ समान गोत्र बनानी है तो दोनों पार्टियाँ समान समझी जाती हैं।

जितने क्षेत्र हैं, वह मनोरंजन और स्वास्थ्य-सुधार के विचार से लेने जाते हैं। कुदरत के क्षेत्र में मनोरंजन तो होता ही है, साथ ही शिक्षा-विद्ये की माय-बेसियाँ सबब होती हैं, रामोष्णाय की प्रिया शीघ्र होने के कारण एक भी शीघ्र गुड़ होता है, स्फूर्ति आती है, मनक और चौकड़े रहने की दृष्टि जागती है, शांता-पावन और कल'स्य-वरायणा की समता आती है, पारम्परिक प्रेम और महानुभूति की माया प्रबल होती है। एक मदान पुदग ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि किसी के चरित्र की परीक्षा करनी है तो क्षेत्र के मैदान में करो।"

मैदानी क्षेत्रों में हाथी, कबड्डी, टेनिस और क्रिकेट की अनेक कुदरत के क्षेत्र में कसरत (स्वायाम) अधिक होती है। अन्य क्षेत्रों की अनेक कुदरत का क्षेत्र सुखम, मरम और मरमा है। यह प्रत्येक ऋतु की प्रत्येक समुदाय में क्षेत्रा जा सकता है। अमेज़ी क्षेत्रों में हम क्षेत्र की सर्वप्रियता अधिक है। "दुर्दी अगे न फिरकी, रंग बोया आगे बाकी कोकोनि हम क्षेत्र पर पूरी चरितार्थ होती है। यही क्षेत्र ऐसा है जिसमें सदयोग की दृष्टि का जन्म होता है और आत्म-निदमन का काम बनती है। अतः मैदानीयों को यह क्षेत्र सर्वप्रिय होता निजला जानना चाहिये।

### त्रीण वस्त्र की आत्म-इहानी

एक दिन हमें सवित्र आचमन हुए और वस्त्र न पहनी आत्म-कथा का प्रकाश मलाई आन मग दूरजा और 'ले लोके दहा देवदर ईके होने। कुदरत अथवा ईसा वा'अव अगेन दया द कक से दिन नहीं रहने



बनाई कि हल्की-बलभी सब चूर चूर हो गई। मेरा प्यारा सखा विनोद मुझसे इमेला के छिपे चुपक हो गया। जिसको विरह-धमि छात्र भी मेरे कक्ष में मसुर बेरना चलाव कर रही है। कुछज इतनी ही रही कि महीन बाजो ने मेरे अस्तित्व की नहीं मिटाया। सौभाग्य से समय बड़ा अनुकूल था। मदा'मा गाँधी का आन्दोलन देश में सर्वत्र गूँज रहा था। विदेशों का बापकाट हो रहा था। विदेश को मात्र भेजने का भी बापकाट हो रहा था। अतः मुझे विदेश-यात्रा का कर्त्तक न होना पड़ा। देश में स्वदेशी-आन्दोलन ने जोर पकड़ा। स्वदेशी के छिपे लोग साम्राज्य हो रहे थे। इसी काव्य में तो मुझे लड़ाक्यावर और खम्बर, की हथान कापी बड़ी। मैं जिस से मारादेव देमाई के हाथों निककर सेवा-गाँव पहुँचा। मदा'मा जी के अख्यान में खंडो छोटा पुनर्दिवों से मेरा परिमार्जन हुआ। अब मैं स्व-के समान कागज होकर बसकने लगा। मदा'मा गाँधी के कोमल करो से मैं पुनर्दिवों की आहूति में परिवर्तित हो गया। मदा'मा जी का कोमल कर-स्पर्श, चर्चा का मसुर संगीत मेरे कक्ष में आज तक आनन्द उलान कर रहे हैं। ओह! मैं हम स्वतंत्र आनन्द को कभी न भूलूँगा।

अब मैं छात्रस के लुझादे विभाग में भेज दिया गया। वहाँ मेरे साथ कापी सखा और खोरो का गई। मा-नीर भी हुई, खीरा-नागो हुई और से एक मान की आहूति में बर दिया गया। मैं महीन द्वारा निकला, मुन्दर बना-दना एक सा, कोमल और आकर्षक हो या नहीं। मैं तो माँटा, मदा'मा जी कुकन था, किन्तु स्वदेशीयन मेरे में चूर-चूर कर मरा था। ऐसा दसा में भी पुनर्गति की की कृपा से मुझे एक अमेरिकन मुन्दा कुमाल ने खराता। मैं पुनर्दिव और मेरे मुख-मंदल पर एक आनन्दमय मुन्दराट्ट दा गई।

अब मेरा दृष्टिकोण बना हुआ है। हम कुमारी ने मुझे दोम-कोक के दर्शन कराए, दिने देमा'मा म स्वके हमने आँखों के पीछे से खरापना का। हमकी न मुख दुई की आहूति से बरत कर अपने



संसार का कौन-सा रहस्य है, जो मेरे द्वारा न सुझाया जाता हो ? संसार का ऐसा कौनसा काम है, जो मेरे द्वारा सम्पन्न नहीं होता ? संसार में ऐसा पर और उपाधि कौनसी है, जो मेरे द्वारा प्राप्त न की जानी हो ?

मानव-मनोवृत्तियों पर मेरा पूरा अधिकार है । आत्म-सम्मान और आत्म-रक्षा के भाव मानव-हृदय में हैं ही भरता हैं ।

बड़े-बड़े राज-मूखों को धर्मावतार और दयासागर की पदविषा में ही रिजाना हैं । सर, माहट और रायबहादुर आदि की पदविषों में ही प्रसाद के प्राप्त की जाती हैं । फिर शायद बनारस में ऐसा कौन-सा गुण अवशिष्ट है, जो मेरे में निवास नहीं करता ?

आप मेरे द्वारा मेरी प्रशंसा सुनकर किञ्चित् आश्चर्य में डूब होये, किन्तु आश्चर्याश्विन होने की कोई बात नहीं है । आश्चर्य, तनिक मैं आपको अपनी जीवन वृत्तात्म सुनाऊँ ।

मैं पश्चिमी ब्राह्मण की एक स्नान से स्त्री-रूप में उत्पन्न हुआ । मेरी अग्नि-परीक्षा की गई और मेरे साधियों को मुझसे पूषक कर दिया गया । मही की बालनाओं का कट अनिर्धननीय है । मैं भय से पानी-पानी हो गया और अपनी मृत्यु निकट आई जान घर घर काटने लगा; किन्तु प्रत्येक आपत्ति के परचाय अग्नि का आ जाना स्वाभाविक है । कारीगरों ने मुझे छम्मे-छम्मे बनवानों में हाजिर दण्ड कर दिया । अब मैं लक्षों की आर्ति में बरक गया और मेरा नाम बोही रख दिया गया ।

भारत-नाथसंघ ने उन लक्षों को लरीय दिया और चम्पई दण्डाक्ष में भेज दिया । वहाँ फिर दुबारा मेरी अग्नि-परीक्षा की गई, जिसमें मुझे पुनः अग्नि का नाम सहना पड़ा । मेरे गोख-गोख टुकड़े काटकर मुझे एक अजीब के चमुर दिया गया, जिसके एक तरफ छंदे औरों की मूर्ति का टूटा था और दूसरी तरफ में निर्माण की त्रिभुजा का टूटा था । वन में ही स्त्री-पुंजा छूट गई और मैं रह गया । नाम न पुकारा जाने लगा । इस समय मेरी चमक-दमक और चमुर खाने वाली ही चन्द्री है ।

मेरी स्त्री-पुंजा छूटने हो मुझ में-बनार की मूखी । मैं करने सबको









योग तब तक सम्भव नहीं, जब तक कच्चा-कौशल-सम्बन्धी कोई कानून पास न होजाये । विगत सन् १९१७ ई० में जब राष्ट्रीय सरकारों की भारत में स्थापना हुई थी, तब राष्ट्रीय सरकारों ने कच्चा-कौशल को उन्नति देने के लिए पर्याप्त धन खर्च किया था किन्तु उनकी समस्त योजनाएँ केवल कम्पना की वस्तु रह गईं ।

भारत का भाग्योदय हो और भारतीय नवयुवकों में कच्चा-कौशल और उद्योग धर्मों को रूचि पैदा हो, देश में राष्ट्रीय सरकार बनें, राष्ट्रीय सरकारें अपनी-अपनी आवश्यकताओं के अनुसार कच्चा-कौशल को उन्नति देने के लिए प्रयत्नियों का आयोजन करें, तब ही देश का भला है ।



## भारतीय किसान

सूर्य अग्नि वर्षा रहा है । धूपी तथे के समान जल रही है । चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ है । पशु-पक्षी गर्मी के ताप से घाकुल हो ठपड़े स्थानों में जा चुके हैं । छाया भी गर्मी की भीषणता को न सह सकी, वह सिमट कर धूप के नीचे हो गई । इस गर्मी की भीषणता में समस्त के समस्त प्राणी विधाम कर रहे हैं किन्तु अधिकांश किसान अब भी काम में जुटा हुआ है । गर्मी ने उसके शरीर को कुचला कर कोयला बना दिया है, जोले बैठ गई है, मुग झलान है, नंगे पैर और नंगे मिर है, बदन पर कपड़े का नाम नहीं, केवल कमर में एक लँगोटा मात्र है । मारा शरीर पसीने से भीगा रहा है किन्तु वह अपनी नपस्या को नहीं झोड़ता ।

मध्याह्न का समय है । कृषक बाका रोटियाँ लेकर झेत पर जा रही है । उसके बच्चे भी साथ-साथ जा रहे हैं । किसान अपने अनवरत परिश्रम में सज्जन है । सुबह चार घंटे का चाया है किन्तु अब १२ घंटे भी विधाम लेने का नाम नहीं लेता । अपनी मर्ती को चाया हुआ देखकर उसने हल धामा । रुम्मी रोटीयाँ खाने लगता, वह नहीं जानता कि मसारा में कपड़े मसारा की बदनी और तरकारियाँ हानो दे । बेचारी कृषक भार्वा भी अपने



समर के किसान अपना ऐश्वर्य और विद्यामय जीवन व्यतीत करते हैं, वहीं भारत का किसान तन बँकने को वस्त्र और घेठ की कृपा निवारण करने के लिये अन्न तक नहीं पाता ।

हमारे किसान का जीवन इस कारण भी संकटमय रहता है कि उसका अधिक समय बेकारी में व्यतीत होता है । गाछ में कई महीने वह बेकार रहता है । यदि उसकी बेकारी के समय को खगाने के लिये कुछ उपयोग-घण्टों का प्रयत्न हो जाय तो बहुत कुछ उसकी दशा सुधर सकती है । इन छोटे-छोटे उपयोग-घण्टों को पुनः जोड़ित कर देने से किसान पर्याप्त रीक्या में खरने को आगे बढ सकता है ।

अदिनार, कृष-मरहूकता और निरक्षरता हमारे किसान को पनपे नहीं देते । अशिक्षा उसकी मानसिक शक्तियों को विकसित नहीं होने देती । वह संसार की परिस्थितियों से भिन्नकुन्न अपरिचित होता है । कारिग्रा, पटकारी, चौकीदार, मिपाही, पानेदार और मुखिया उसकी अकरजता से जान बूझते हैं । उसे मनमाना लूटने-लपेटते हैं । दिमाक-कितान न जानने के कारण महाजन शोग उसे लूट डकतू बनाते हैं । महाजन उसे मर्दता देता और उससे मरना लेता है ।

गात्र के गाँव ईर्ष्या के पड्डे हैं, जिनके लसीभून होकर किसानों में लड़ाई-झगड़े बहुत होते हैं । मुकरमेबाजी बेइदर बढ गई है, जिन पर किसानों का घन अपरिमित खप जाता है । अशिक्षा के कारण किसान बड़ा अतृप्तगी रहता है । वह मरना, कटना और विवाद खाति खपसरो पर अमान-लाना खप करता है, अन्तः कारण वह अन्न अन्न हा पाता है । और बाजार-मन्त्र दुखा रहता है ।

किसान का अन्न खप अन्नकारमय है इन्तर्क इन्तर्क इन्तर्क इन्तर्क इन्तर्क का अन्न खप अन्नकारमय है इन्तर्क इन्तर्क इन्तर्क इन्तर्क इन्तर्क





ही जाती है तब इनका निर्यय कठिन हो जाता है, उसके धैर्य और संतोष पहले से ही छूट जाते हैं। संसार की चण्ड-भंगुरता जब तक हृदय में नहीं बैठती तब तक मनुष्य कस्तूरी के हरिण को भाँति वासनाओं में वशीभूत होकर इधर-उधर भटकता रहता है और उसको विनाश (नाशवान) वस्तुओं में आनन्द दिखाई पड़ता है। अतः आवश्यक कि लौकिक पदार्थों में विराग उत्पन्न किया जाय। उनसे विशेष अनुराग न बढ़ाया जाय। मन की प्रगतियों पर नियन्त्रण रखा जाय। जहाँ-जहाँ यह अधिक दौरे पहाँ से इन्हें रोका जाय सो वासनाओं पर विजय प्राप्त संभव हो जायगा, अन्यथा नहीं।

सांसारिक दुःखों का कारण मन है। यदि मन को संतोष के पथ पर डाल दिया जाय तो बहुत कुछ शान्ति सम्भव है, मन को नियन्त्रित किए बिना शान्ति सम्भव नहीं है, संसार में जितने संयम, नियम पथ, उपवास आदि कृत्य हैं, वह सब मन को नियन्त्रित करने के साधन हैं। अतः आवश्यक है कि अपने जीवन को संयम नियम आदि के नियमों से जकड़ दें और उन्हीं के तदनुकूल आचरण रखें तो बहुत कुछ सफलता प्राप्त हो सकती है।

संतोष की भी एक सीमा होती है। देश जाति और समाज का जहाँ तक प्रश्न है वहाँ तक मनुष्य संतोष को धारण करे किन्तु सेवा परोपकार और विद्योपाय के सम्बन्ध में असंतोष की माया ही अधिक दृष्टिग्रह है वही दशा 'हृत्तन्त्रा' प्राप्ति की अभिलाषा है, वहाँ भी संतोष की सीमाओं को लाँचने से ही अधिक धैर्य है।

मनुष्य जब आपत्तियों में गिर जाता है, विपत्ति परिस्थितियों में विषम करता है, तब वह घबड़ाना अथवा माहम हो बैठता है तब उसे कायात्मा के नाम से पुकारा जाता है। संतोष तो जीवन का बड़ा ठेका आदर्श है। जो पदार्थ और स्थिति के अनुसार माना जाता है मन प्रत्येक मनुष्य में उत्पन्न होता है और उसे नियंत्रित करना दुष्कर अपने जीवन को सफल बनाने के लिये मन को नियंत्रित रखना



मगत परिश्रमशील रहे और मनोर को अपने हाथ से न जाने दे। तब ही मनुष्य-जीवन सार्थक हो सकता है। मग्यधा नहीं, किमी ने सब कहा है :-

“मोघन, मात्र-घन वात्रि-घन, और रतन-घन ग्याव ।  
जो चाहे मंगोय-घन, सब घन भुरि समान ॥

## बालनर या बाय-स्काउट संस्था

विचार-मालिका:-

- (१) प्रस्तावना—बालनर संस्था का जन्म और उद्देश्य : विकास ।  
(२) बालनर संस्थाओं की वर्गीकरण । (३) बालनर और उनके  
पूनीकार्य । (४) बालनर शिक्षा-शिविर । (५) बालनरों के मानवकीय  
कर्तव्य । (६) बालनरों की सेवाएँ और देश की प्रगति में उनका स्थान ।  
(७) पुनर्माह—बालनर संस्थाओं का भविष्य ।

हमारे देश में बालनर संस्था एक विलक्षण नई चीज़ है। बीसवीं शताब्दि से पहले दुनिया में कहीं इसका नामोनिशान तक न था। बालनर संस्था का जन्म अङ्ग्रेजी अफ्रीका में बीयर बुद के समय हुआ। इसके जन्मदाता सर रीचर्ड वेडन पाण्डे से पहले किमी के प्रतिष्ठा से यह बात नहीं आई थी कि देश के छोटे बच्चे भी कोई सेवा का देना काम कर सकते हैं। सर रीचर्ड वेडन पाण्डे के हृदय में यह विचार मूल १९०० ई० में उस समय उद्भव हुआ जब बीयर बुद में सेवाओं की कमी पड़ रही थी। मग्यधा उनका ध्यान बड़े-बड़े मनुष्यक बालकों पर गया। उन्होंने बालकों का संगठित किया और उनसे सेवा का न दिवा। पहले-पहल जब बालनर संस्था संगठित हुई, इसमें १५-१६ और मग्यधा का काम किया गया। बीयर बुद समाप्त हो गया और वेडन पाण्डे ने पास कोई काम करने को न रह गया जब उन्हें यह बात मालूम की कि बालनर संस्थाएँ जालि



कार्य की भी शिक्षा दी जाती है, जैसे—गाँवें लगाना, पट्टी बाँधना, हप्ता बनाना और सिगनल आदि देना। बाज़ारों की थोमड पद, धुवन आदि परीचाये भी होते हैं। जिनको कमरा बाज़ारों का पाप का खेन पदा जरूरी है। अपनी धनुराई और बुद्धिमत्ता से कोई भी बाज़ार एक दिन थोफ स्काउट की पदवी तक पहुँच सकता है। इससे परचाय बाज़ारों की कठिन कामों की शिक्षा दी जाती है। साथ ही कनेक प्रकार के खेन भी सिखाये जाते हैं जो मनोरंजन के जिने आवश्यक है।

बाज़ारों की युनिकामें में अनिवार्यतः रहना पड़ता है, सबकी पोशाक एक सी रहती है, टोपी या साका बाधना आवश्यक है। एक छाटो, एक सोटी और भण्डो सबके पाप होती है। कमी-कमी बाज़ार आवश्यक औपधियाँ भी अपने साथ रखते हैं।

सेवा करना बाज़ारों का उद्देश्य है। वह निर्बल, दुःखी, अनाथ, और अथजायों की सेवा करता है। दूसरों की जीवन-रक्षा में अपने प्राण तक दे देने में बाज़ार अपना गौरव समझता है। बाज़ार सदैव अपने कर्तव्य-पात्रन में मगन रहता है, वह कभी किसी की पर्वाह नहीं करता। बाज़ार सदैव अपने हृदय की पवित्र और दयालु रहता है। भालू-भाव की ही मनोवृत्ति रहता है। निस्पन्देह बाज़ार संस्थाएँ देश के जीवन को परिवर्तन करने में पूरी सफल हो सकती है।

बाज़ारों के कर्तव्य और सेनाएँ भीड़-भाड़ और मैनों के अथमरों पर ही देखे जाते हैं। कहीं बाज़ार पट्टो बाँध रहे हैं, कहीं सोये हुए बच्चों की उनके मा-बाप के पाप पहुँचा रहे हैं। कहीं आग बुझा रहे हैं। कहीं लुवते हुएों को निकाश रहे हैं। कहीं लकाई के बीच शानि स्थापित कर रहे हैं। अभिप्राय यह है कि बाज़ार किसी रूप में मानव-जाति की सेवा करने को उद्यत रहते हैं। यही कारण है कि बाज़ार







(२) युद्ध से हानियाँ—(क) युद्ध में अग्रणीत नर-संहार होता है।

(ख) विजित राष्ट्र की स्वतंत्रता अपहरण कर ली जाती है और उसकी सामग्री की गलतफा में लूटकर दिया जाता है। उसके आदिम और दुष्प्रयोग-वस्तुओं का विकास विनाशक बन्द हो जाता है। देश में बेकारी और दरिद्रता का सर्वप्र साधारण स्थापित हो जाता है। देश में सर्वप्र अशान्ति और संक्षिप्तता छा जाती है।

(ग) युद्ध में भाग लेने वाले दोनों ही राष्ट्रों की आर्थिक क्षति होती है और दोनों ही को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

(३) युद्ध से लाभ—(क) विजयी राष्ट्र का इशारे और उत्पाद बढ़ जाता है। (ख) नये-नये देशों की प्राप्ति होती है। (ग) विजिता का राज्य-विस्तार होता है। (घ) विजिता आदि की संस्कृति विस्तार पाती है। (ङ) मनुष्यों के युद्ध में मारे जाने से देश में अवसंख्या कम हो जाती है; इसलिये बेकारी की अतिव्यवस्था स्वयमेव दूर हो जाती है। (च) युद्ध के बाद कुछ काल के लिये देश में शान्ति छा जाती है। देश में अशान्ति और सामर्थ्य कुछ काल के लिये बन्द हो जाती है। (ज) विजिता को विजित राष्ट्र की अपरिमित सम्पत्ति प्राप्त होती है।

(४) युद्ध से हानि अधिक और लाभ कम होने है। तनिक-तनिक से मनुष्यों के लिये मनुष्य का रक्त बहाये, वह बड़े दुःख की बात है। क्या सम्पत्ति यही चाहती है? ऐसी मनोवृत्ति मनुष्य में नहीं मिली जाती। ऐसे युद्धों का अन्त होना चाहिये। तब ही विश्व-शान्ति स्थापित होगी।

## हिन्दुस्तानी-खेल

विचार-तालिका —

प्रस्तावना—शारीरिक और मानसिक प्रकाशों का दूर करने युक्त स्फूर्ति और शक्ति सबसे कम के लिये मर आवश्यक है।





सोपानों होती है। यू० पी० गवर्नमेंट ने इस क्षेत्र के त्रिभे रूपक  
संस्थापना देने का निश्चय किया है। गाँवों में यह क्षेत्र प्रायः वर्षा और  
हरद ऋतु की चारों रातों में भेजा जाता है। दो पार्सियों बना की  
जाती है। दोनों दल सामने-सामने पंक्ति-बद्ध होते हैं। दोनों दलों  
के बीच में एक सीमित रेखा बना ली जाती है जिसे फाखा (पारी) कहते  
हैं। जब क्षेत्र शुरू होता है, तब एक पक्ष का आदमी कबड्डी, कबड्डी,  
कबड्डी.....कहता हुआ दूसरे दल में प्रवेश करता है और उसी दल  
के आदमियों को छूने का प्रयत्न करता है। दूसरे पक्ष वाले पैतरे काट  
काट कर इसकी तुमझें ले चलते हैं और उसको पकड़ने का प्रयत्न  
करते हैं। हमने जिसे छू दिया तो वह मरा, यदि वह स्वयं पकड़ा गया  
तो वह स्वयं मरा यदि किसी प्रकार वह छूट छूट कर अपने कोरे में  
जा गया तो वह जी मरा। नहीं तो मर तो गया ही। जब वह तब तक  
क्षेत्र नहीं सकता जब तक उसके साथी विपक्षी को मार कर इसे नहीं  
हटा लेते। क्षेत्र में कहीं क्रम जारी रहता है। जब एक पक्ष के समस्त  
खिलाड़ी मर जाते हैं, तब वह पक्ष द्वारा हुआ और विपक्षी विजय समझा  
जाता है।

गुल्मी दल के का क्षेत्र भी दोदियों में पारी-पारी में भेजा जाता है।  
इसे बावक बड़ी दल में भेजते हैं। हममें कम-से-कम दो व्यक्ति और  
अधिक-से-अधिक छिने ही आदमी हममें भेज सकते हैं। लुके मैदान  
में एक लहरा करता और गुल्मी गहरा मोड़ लेते हैं। इसे गुल्मी  
कहते हैं। इन्हीं में वह बकरी, जो बागमन में चंगुल की होती है, जिसे  
गुल्मी के नाम से पुकारते हैं, रक लेते हैं। फिर एक हाथ के दल के  
इस गुल्मी की बटते हैं। यदि गुल्मी बटते वाले खिलाड़ी ने पकड़ की  
तो बटते वाला खिलाड़ी द्वारा हुआ मान दिया जाता है। जब गुल्मी को  
पकड़ने वाला खिलाड़ी उसको मगद चलाता है। जब से बड़ी कम बनी  
रहता है। जब से बड़ा आश्चर्य होता है।

गुल्मी दल के खिलाड़ी-दलका दूसरा जब बीच लगता है। इसे

भी खड़े के घृताकार पंक्ति में खड़े होकर खेलते हैं। एक केन्द्र पर खड़ा होता है और एक दापरे के बाहर, भीतर का खिलाड़ी बाहर वाले खिलाड़ी को छूने का प्रयत्न करता है। दापरे की परिधि पर खड़े खिलाड़ी 'उमे छूने में बाधा डालते हैं। वह इधर उधर चोल की भाँति झपटता है। ज़रा धवसर मिला कि वह दापरे से बाहर ही बाहर वाले खिलाड़ी को छू लेता है। यम यम भीतर का स्थान बाहर वाले को लेना पड़ता है।

यहाँ के प्रसिद्ध खेलों में आँख-मिचौनी का भी खेल है, इस खेल को भी बच्चे टोलियों में खेलते हैं। इस खेल में एक बच्चा अपनी आँखें बन्द कर लेता है और दूसरे बालक जाकर छिपते हैं। जब सब छिप जाते हैं तब एक बालक चिह्नकार कहता है, "हमें ढूँढ़ लो।" यम आँख मीचने वाला खिलाड़ी इधर उधर घबरकर काटकर अन्य खिलाड़ियों को ढूँढ़ता है। जिसे वह ढूँढ़ के छू लेता है उसी को उसका स्थान लेना पड़ता है।

गेंद का खेल भी देशी खेलों में सर्वप्रिय है। यह बड़े तारद खेला जाता है। सब से प्रसिद्ध घो के खेल है जिसमें तमाम खेलने वाले खिलाड़ी चारों तरफ एक गोख दापरे में खड़े हो जाते हैं। बीच में घोर खड़ा होता है। गेंद घो के एक खड़े से दूसरे खड़े तक उछलती रहती है। जिसे खिलाड़ी से गेंद गिर जाती है वहाँ घोर बनता है। यम यही क्रम जारी रहता है और तमाम खड़े खेल में तपपर रहते हैं। जिस खेल में तमाम खड़े तपपर रहते हैं वह खेल बतान समझा जाता है।

किरकिर कोटिया का खेल भी दो पार्टियों में खेला जाता है। इस खेल में दो दल रहते हैं। प्रत्येक दल अपनी सीमा निर्धारित कर लेता है। समस्त पारों के खिलाड़ी अपना अपना सीमाओं में गुप्त स्थानों पर गुप्त गति से लड़ाई करता है। जब लड़ाई काट चुकते हैं तब पार्टियों का तबादला होता है, प्रत्येक दल अपने विपक्षी की काटो

खकीरों को काटता है। जिस टोखी को खीची हुई खकीरे कम करती है और उनकी खकीरों की संख्या अधिक होती है यही टोखी जोती हुई समझी जाती है।

बड़का टोखी (खरक बरदा) यह पेड़ों पर खेला जाने वाला खेल है। इसमें बच्चों को शीघ्र पेड़ पर चढ़ने का अभ्यास होता है। इस खेल में एक बरदा, जो लगभग एक हाथ लम्बी होती है, भूमि पर खड़ा हो जाती है। एक बड़का भंगी बनता है जो उस बरदा की रक्षा करता है। यह रक्षक भाग भाग कर खिलाड़ियों को घूमे का प्रयत्न करता है। दूसरे खिलाड़ी बरदा को आकर अपनी टोख के नीचे होकर बैठ जाते हैं। रक्षक बरदा खेने दौड़ता है। कंकने वाला खिलाड़ी भूख पर चढ़ जाता है। किसी विधि वह रक्षक खिलाड़ी दूसरे बाइक को छू पाता है तो घुमे हुए खिलाड़ी को रक्षक को झूठी देनी पड़ती है। वन, इस खेल में यही काम जारी रहता है। इस खेल में बड़ी बरके किन्तु समझे जाते हैं जो अधिक देर तक रक्षक का काम करते हैं।

इन खेलों के अनिच्छित कुल-कुल मूंगा, परा परी, कोड़ा अंगार खाही, कोड़ा मार, बैदा मार आदि देशी खेल हैं जो गाँव के गानों में बहुतायत में खेले जाते हैं।

घर के अन्दर खेले जाने वाले खेलों में सबसे बढ़िया शतरंज का खेल है। इसे दो आदमी खेलते हैं। दुर्गन्धी मुद्दे होते हैं जिनकी चारों नियत होती है। इन खेल में खिलाड़ी स्वाना स्वाना तक भूख जाते हैं।

भीतर के खेल को चार आदमी खेलते हैं। यह खेल भी बड़ा दिलचस्प खेल है। इस खेल में बड़ी लोग विवेकपूर्ण समझे जाते हैं जो अपनी गोदों की सबसे पहिले केन्द्र में पहुँचा देने हैं।

शतरंज और भीतर को मिला पच गुरु का भा खेल है। इस खेलों में बहुरि मानसिक खेलों का विकास होता है किन्तु इस खेलों का बड़ा धरा है। इसी कारण समाज के नर एवं नरिय इन खेलों का निरन्ध करने हैं।



## सर्वभौम कवि रवीन्द्रनाथ

भारतीय इतिहास की सदृशादिशों की परंपरा-परम्परा में सर्वभौम कवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म निश्चय ही एक अद्वैतिक एवं अपूर्व घटना है । विगत अनेक शताब्दियों से अपनी सभ्यता और सम्पत्ति, कला और विद्वता की देश-देशान्तर में फैला कर अपनी अपनी अन्तर्भूमि के प्रति गौरव-गरिमा तथा प्रतिष्ठा की भावना स्थापित करने वाले महान् युग-पुरुषों में सर्वभौम कवि रवीन्द्र का नाम सब से पहले लिखा जाता है और इसी आभास-भावना के साथ युग-युगान्तर तक लिखा जाता रहेगा । रवीन्द्र के व्यक्तिगत का निर्माण विराट् ने अपने कला-रूप कुशल हाथों से मानों स्त्रय ही किया था । इसीलिये हमने कवि के निर्माण के उपकरणों में मनस्वी सेवा, पारदर्शी प्रज्ञा, रहस्यदशीं मस्तिष्क, उदात्त आत्मा, कुशल कला और आशु-सहृदय का ही उपयोग किया था । कवि के इस घोरौदात्त ऊर्जस्विन् विराट् स्वकिमात्र की देखकर ही तो समस्त संसार विस्मयविभूष हो उस महान् कलाकर पर मोहित हो गया था । सचमुच ही सर्व-द्रष्टा कवि के सर्वाङ्गीण सर्वभौम विकास की पक्ष समस्त मानवता आरपस्त हो गई ।

कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म सोमवार, ८ मई सन् १८६१ ई० की कलकत्ते में अपने पैतृक मकान में हुआ । वे अपने माता-पिता की श्रीदृष्टी संगतान थे । इनकी माता श्रीमता शारदा देवी तथा पिता-प्राय श्री महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर बंगाल में अपनी पुरातन परम्परा तथा कुल-सर्वाङ्ग के लिये प्रख्यात थे । महर्षि देवेन्द्रनाथ का उदात्त चरित्र ही कवि रवीन्द्र के प्रतिभा-विकास के लिये प्रेरित था । महर्षि की कुल-क्रमागत अगुल सम्पत्ति के साथ आभिजात्य भावना का कवि को प्राप्त होता सहज स्वाभाविक था । कवि के पिताजी के ऊपर तत्कालीन ब्राह्मण-समाज का प्रभाव था किन्तु भारतीय अध्यात्म तत्त्व तथा दार्शनिक रहस्य का वातावरण ही मुख्य रूप से उनके चारों ओर विद्यमान रहता था जो कि मुख्यतः पूर्य भूमि के रूप राजक रवान्त का भा उपलब्ध हुआ । शेष में ही रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा-विकास के विनिर्मुक्त चिह्न दृष्टिगोचर होने



कलकत्ता विश्वविद्यालय से चायको डाक्टर चाय सैटर्स की उपाधि मिली।  
 मोनेज़ माहम के कारण कवि की प्रसिद्धि देश देशान्तर में व्याप्त हो गई।  
 सन् १९१६ में बाक़र की ओर से चायको 'सर' की उपाधि भी मिली।  
 जिसे बाद में चायने जज़ियावाज़ा बाग की घटना होने पर सरकार के प्रति  
 रोष प्रदर्शित करते हुये लौटाकर अपनी देश-नकि का परिचय दिया।  
 हमी विजयमित्र में १९२० में हंगलैंड जाने पर वही भारत-मंत्री से निवे  
 और चायने प्रयत्न किया कि बावर के सामान्यविक कार्य पर उसे दृष्टि मिले।  
 इसके परचाहू कवि खोन्द् ने अनेक बार संपाद के मायः सभी प्रमुख  
 राज्यों और नगरों का पर्यटन किया। रवि बाहू की इन यात्राओं का एक  
 मात्र उद्देश्य अपनी अतीत संस्कृति एवं सभ्यता का पुनरुद्धार तथा विदेशों  
 में प्रचार करना ही था, हमो जिये बाव हमेसा ही विभिन्न विश्वविद्यालयों  
 तथा सांस्कृतिक स्थानों में वदामयान तथा कविता पाठ करके जनता को  
 मंत्र मुग्ध करते थे। इस प्रकार अपनी विद्वत्ता और कला से अविश्व विर  
 की आलोचना करके ७ अगस्त सन् १९४१ की दिन के बाद ७ बजे २१ वर्ष  
 और चार मास की आयु की मूर्खीय यात्रा समाप्त करके चायने हृदय रोग  
 की व मरण की।

बावर की रक्तियों में हमने संघर्ष में उनके जीवन की प्रमुख  
 घटनाओं की तिथियों की तालिका मात्र दी है, उनके महान् कार्यों का इसमें  
 उल्लेख नहीं हो सका है। बोलपुर में स्थापित शास्त्रि निकेतन, ओ-निकेतन  
 तथा विश्वभारती चायके कार्यों के प्रतीक कहें जा सकते हैं। इस  
 सभ्यताओं की स्थापना के मूल में निरव कवयान का कामना के अतिरिक्त  
 और कुछ नहीं है। कवि के नाम विश्वात्मा का एक पुकार ही और उम्मी  
 पुकार के जिये कवि को विश्वात्मा का वैचारिक बनकर अस्तित्व होता  
 रहा।

कवि खोन्द् के सार्वभौम परिवर्ष के जिये इनका सभ्यतापुत्री  
 जनता और सभ्यताविकार के मायः इनके लालारव काय कला का भी  
 रक्तवत कामना आरम्भक है। कवि खोन्द् का सबसे मुख्य कवि का भावार्थ,





anxious to come in touch with Hindi speaking people. We are doing here what little we can for the spread of culture."— I wish to make Hindi a living language in the Ashram. कवि की यह चारुतरिह दृष्टि थी कि हिन्दी भाषा की साहित्यिक उन्नति हो ।

संक्षेप में; कवि के जीवन की मोड़ी वा खेने पर हम इसी परिधि पर पहुँचते हैं कि गुरुदेव मार्वाभीम है। इसीजिसे साहित्यिकों ने मोचा वे साहित्यिक हैं, दार्शनिकों ने उन्हें राजनीतिज्ञ कहाया, समाज-सुधारकों ने उन्हें सुधारक ही माना; विप्रकार उन्हें अपना गुरु और परमदर्शक समझने लगे, वैज्ञानिक उन्हें आलोचनात्मक अन्तरंग बन्धु मानने लगे। एवं ने उन्हें विश्व को अपनी भेट समझा और परिचय ने उन्हें विश्वात्मा का पैठालिक समझ कर स्वीकार किया। निराम्येह थी रवीन्द्रनाथ का स्थिति मानासुख था। उनकी प्रतिभा और कार्य-समता इसी जिसे विविध क्षेत्र में प्रकाशित हुई। रसानुभूति मय अन्तरादृष्टि एवं वैज्ञानिक अवलोकन, गंभीर चिन्तन और कर्त्तव्यिक मूल्यन राष्ट्रीयता और अध्यात्म ज्ञान का अद्भुत समिश्रण मानव संस्कृति के इतिहास में पहले नहीं देखा गया। इस विचार से साथ दृष्टि और चिन्तक-नेता रवीन्द्रनाथ को प्येडा, परस्पर, पतञ्जलि, गेडे और सुबरात की कोटि में रखा जा सकता है। रवीन्द्रनाथ के स्थितिगत महत्त्व ने भारतभूमि को घट्ट कर दिया है, उनके जन्म से निम्नम्येह 'कुल' पवित्र जन्मी आ जाताथी'।

## आदर्श जीवन की आधार-शिला

विश्व पर दृष्टि हाजिये वह चारों ओर शोकावृत्त तथा दुःख सीधण घमि से सतप्त मिलेगा। कारण का सोच कीजिये। पुस्तकों को देखिये किन्तु वे भी समोपजनक उत्तर न द सकेंगी। अपने अन्तःगत को दृष्टीजिये तो वही पर कारण के उपपन्न होने की वास्तविकता का



उपनिषदों में भी कहा है । “क्षिपमयेन पात्रेण सत्यवापिदितं मुनम्”  
मुन का मुख स्वर्ण के पात्र में रखा है, यही विरह-विश्वान मदात्म  
राजसदाय भी यही कह गये हैं:—What make a man good is  
having but few wants.

कुछ लोगों का विचार है कि घन-हीन व्यक्ति को शोकों के  
अतिरिक्त और मित्रता ही क्या है ? किन्तु वेने चाहियों को ध्यान  
रखना चाहिये कि विफलतायें वे सीढ़ियाँ हैं जिन पर होकर हम और भी  
उपयुक्त चढ़ावों की सिद्धि के लिये बढ़ते हैं । समय की पहचान पर ज्यों-ज्यों  
मनुष्य बढ़ता है उसकी प्रमत्तता भी उत्तरोत्तर बढ़ती है । जेम्स जेक्स नामक  
पाश्चात्य सन्यासी ने कहा है 'दुःख पवित्र परमानन्द के मार्ग तक पहुँचाता  
है । पवित्र विचार, कथन तथा कृत्यों के लिये मार्ग-प्रदर्शक बनता है । वे  
बादल, जो शोकोग्रपादक होते हैं और वे किरणें, जो जीवन-मार्ग में बराबर  
साथ देती हैं, दोनों चर्यों की प्रमत्तता है । हमारे मुख और दुःख तो जीवन  
के लिये अनिवार्य हैं । कविवर पत ने लिखा है:—

यह सांख्य-उपा का भागन, याज्ञिकन विरह-मिथुन का ।

विरहाम-अधुमय ध्यानन, रे इस मानव जीवन का ।

किन्तु मुख सांसारिक विषयों में नहीं रहता । यदि कोई गगन-धुम्की  
मनोहर के वृक्ष और सूमती हुई पतियों से लदे द्रुम-गुरुओं में होकर  
मुख का अनुमान करे कि मैं उसे अपनी पृथ्वी बना लूँ, वह भागता ही  
जायगा, तिरछी पर्यन्त-मालाओं, सरसों, सेतों, चरागाहों और सुनहली  
व्याहियों में होकर उमका पोछा करे दबकर मारती हुई मरियों में होकर  
उन निर्जन चट्टानों पर आकाश हो जहाँ गिर और उठने बोजन है और  
शीघ्रता से प्रत्येक समुद्र और स्थान पार करता चला जाय, तो भी मुख  
उसे सदैव पोछा ही देता रहगा ।

यह सब होने लगे भी क्या धन मानव को सुख द सकता । उसकी  
लाला तो कमल-पत्रों पर जल बिन्दु मम के मेघ-समागोद तथा इनसे  
भी चन्द्र मोहार-कणिकाओं की प्रभाव-लीला से भी अधिक अस्थिर है । अतः



सुखम नहीं पाया है। एक ऐसे सुगम मार्ग को निर्धारित करने की विनाशकारी आवश्यकता है जो सर्वमान्य एवं सर्वप्रिय हो। यही समस्या इसी विषय में विशेषतः विचारणीय है।

प्रत्येक राष्ट्र अपनी एक निरिच्छत राष्ट्र-भाषा रखता है और चात्र के इस लघुयुग में तो प्रायः भारत के अनिश्चित सभी देशों में उसकी निश्चित राष्ट्र-भाषा या राष्ट्र-भाषा है। भारत के लिये यह अभाव एक अनि कटु अनुभव है। इसकी पूर्ति के निमित्त प्रयास भी वर्षों से अनवरत चल ही रहे हैं किन्तु समस्या का कोई निश्चित हल नहीं निकल पाया। इस विषय में प्रमुख बाधा भारत की प्रांतीयता तथा विभिन्न-भाषीय भाषाओं का बाहुल्य ही जान पड़ता है। अब तक तो भारत की प्रांतीयता के कारण अनेकों राष्ट्र-भाषाओं बना। अधिकतर व्यक्तियों के विचार अभी भी इस पक्ष पर आश्रित रहाने के रहे किन्तु मौलानाविरुद्ध भारत की स्वतंत्रता ने इस निराधार तथा मकीर्ण रहि-कोष को निर्मूलक कर दिया है। आत्र अनेकों के पक्षपाती तथा अल्पसंख्यक पुद्गलियों की संख्या स्वयंसेवक अल्पसंख्यक होनी जा रही है चाहे वे वैयक्तिक रूप से विदेशी भाषा की प्रशंसा के गुलामी तथा अपने अल्पसंख्यक विज्ञान तथा अल्पसंख्यक साहित्य और इस का अनुमोदन करें किन्तु बाध और सामाजिक रूप से कोई भी मानवीय ऐसा नहीं जो अनेकों का राष्ट्र भाषा या मातृ-भाषा बनाने की कोशिश करने का दुष्प्रभाव कर सके। हाँ, प्रांतीयता के गुलामी अवरुद्ध इस मार्ग के कंठक बने हुए हैं। बंगाली, बिहारो, पंजाबी, गुजराती, महाराष्ट्री, तमिल, मारवाडी, रेवाड़ी, दक्षीणगरी आदि अनेक भाषाएँ हमारे देश में प्रचलित हैं। इस सब भाषाओं में बंगाली, महाराष्ट्री, गुजराती तथा बिहारो के साहित्य अधिक उन्नत हैं। बंगाली से प्रायः इन सभी भाषाओं से अधिक प्रभाव है। बंगाली में कदाचित् रवीन्द्र तथा बंकिमचन्द्र जैसे जगत्प्रसिद्ध लोग हैं। इस भाषा के साहित्य पर विदेशी भाषाओं का भी प्रभाव प्रभाव पड़ा है। महाराष्ट्री और गुजराती की इस प्रभाव से प्रभावित है किन्तु यह सब कुछ होने हुए भी इस प्रांतीय भाषाओं में से एक को प्रायः नहीं निम्न मान भाषा के रूप में



देने को कहा है। उनकी दूसरी दलील इस जिवि की सार्वभौमिकता भी है। उनका यह कथन एक निरिचय भीमा तक ही उभित हो सकता है पूर्णतया नहीं। भारत के खिये रोमन जिवि का प्रचलन उतना ही असुन्दर है जितना एक अंग्रेजी मेम को भारतीय ग्राम्य स्त्री का पाधरा पहना कर मजा करना। कोई भी वस्तु अपने स्थान पर ही सोभा देती है। पदप्युत वा स्थान-अप्य होकर यह मजाबहोन तथा यूणास्पद बन जाती है। हमारे वेद-पुराण, स्मृति-ग्रंथ, संस्कृत काव्य तथा हिन्दी ग्रन्थ सदि सभी रोमन जिवि में जिये जाने लगे तो उनका रूप कितना बिहून होकर रहेगा हमका अनुमान ही कष्टप्रद है। काजीराम का मेघदूत तुलसी का रामचरित मानस और बिहारी और भूषण की कवितायें इस रोमन जिवि के फेर में पड़कर क्या की क्या बन जायेंगी? विदेशी लोग अपनी हस्ता से अपनी सुविधानुसार हमारे ग्रन्थों का अनुवाद अपनी जिवियों में करें, हमें उनका अनुकरण करना उचित नहीं। भारत के सैनिकों को आज तक रोमन जिवि ही मिसाई जाती रही है, यह एक दुःख-प्रद विषय रहा है किन्तु अब इस ओर हमारी सरकार विशेष ध्यान दे रही है और सैनिकों को भी हिन्दी की ओर प्रवृत्त किया जा रहा है।

किसी राष्ट्र की भाषा में उसकी सामाजिक मर्यादा का होना अनिवार्य है। यह वो निर्विवादस्पद सत्य है कि हमारी सभी प्राग्गीय भाषायें पुरातन हिन्दी के विहून रूप हैं। इन विभिन्न भाषाओं के साधारण स्वर से ऊपर उठकर नयी भाषा अपना अस्तित्व स्थापित कर सके यह अवश्य मशान शक्ति है। पुराने साधु सन्तों ने, जिन में कबीर, नानक, तुकाराम आदि मनी गिने जा सकते हैं, विभिन्न प्राग्गीय भाषाओं की अतिवृद्धि में योग दिया किन्तु आज की हिन्दी साधारण चरावल से बहुत ऊपर पहुँच चुकी है, उसका साहित्य उपस्थकोटि का साहित्य बनता जा रहा है, उसकी कला में अतुल्य कृत्रिम विकास हो रहा है। उसके सूत्रनामक













प्रकार भगवान् कृष्ण का शुभ अन्तर्दिन हमारी खोटी चकियों में प्रत्यक्ष के स्थापन पर प्रायः हमें उस अतिथी महापुरुष की मौन का अभिप्राय सुनने ही आता है। संसार की अनेक दुःख जातिवर्षा प्रायः कविरत आदर्शों के आधार पर ही उन्नति के उच्चतम शिखरों पर विराजमान हैं। हमारी जाति के लिये आदर्शों का अभाव नहीं, फिर भी हम दुर्गति के गहन गर्त और आधी जातिमा में अडिग ही रहते हैं। क्या यह सब आदर्शों का अग्रदाय मात्र नहीं ? क्या 'आदर्शवाद' ही हमारी दुर्दशा का कारण बनता है ? नहीं, वह है हमारी अकर्मता भीकृष्ण-चरित्र को मृतवीजन करके उसके अनुसार कार्य कम बनाने की।

आज अन्धधर्मों का मह्य हमारे लिये केवल एक आसोद प्रसोद तथा आने पीने का विषय रह गया है। मत उपनाम भी कुछ आदर्मी बनने हैं परन्तु अधिकांश जनता ऐसी है जो केवल आदर्शपर के अनिश्चित कृष्ण-चरित्र से कोई ठोस शिक्षा नहीं लेती। ये तो निरगन्धेद अपने स्वर्गीय प्रभाव से बच दिन दूध-ले-दूध तथा पानी से भी पानी दूध में पावना की किरणें कैंक ही देना है। बापकों तथा मास्र और अर्थाप वाजिवाधों को जिनकी प्रसङ्गा होती है वह केवल अनुभव का विषय है कर्म की मोड़ से उतका ही नहीं खींचा या मचना। पुत्रक और पुत्रनिर्वा भी कृष्ण के प्रेम और आनन्दक स्वकप का समान कर आनन्द-विभोर हो जान है और उन्हें बरबस जब अदोम्यन वेम-परिवादी की समुति हा करती है जिसमें व्याकुल होकर मोर्छाकावें वह उठी भी 'अनिर्वा हरि-दशम की भूमि' पर हमें केवल 'गीत मोहिन्द' के कृष्ण की ही आदर्श मानकर संतुष्ट होकर नहीं बैसना है। यदि अन्ध कदा प्राय तो इसक हृदय स्वकप के मावक्य से देश और जाति का वधान अकर्मत्व किता है। आद के हृदय नृपम युग में, जब सात वरग्न हा चुका है, हम कबीर के चढाव बनकर अपनी चतुर्द्वि का परिचय नहीं देना है परन्तु दूरदर्शिता से काम लेकर कृष्ण के 'महाभावन स्वकप' से ही दूरगम दूरगम जाना है। वह निराजनक नहीं कि उनके अद्वि प्रो प्रत्यक्षनाई हम जनता है अन्ध दूध कप से अन्धकार के दे दे, हमसे ना हृदय आनन्दार्थ









रक्षाबंधन, रामनवमी और सीतावली का मकर करी संबंध है। चात्तों की नृत्यता के प्रेमी हल चात्तों की खोजकर नृत्य को भी की नृत्य को नृत्य मूल्य जायेंगे तथा करने नृत्यन नृत्य के नृत्यन चात्तों को नृत्यन में लाकर उन पर आनंद करने का प्रयत्न करेंगे।

—\*—

## राष्ट्र के कर्षणार पं० नेहरू

प्रत्येक राष्ट्र जब पवन की वादवायु को पहुँचने को होता है तो ईसा कुछ ऐसी विभूतियों का आविर्भाव करता है जो समाज को नृत्य-राज्यन में निष्ठाकर शान्ति-सुख का पान कराते हैं। दर्शों का कमावराता, इरशों का मुमोत्रमी, रूप का राक्षसता तथा नृत्यन का मुकताव देने ही उदाहरण है। भारत में ही 'पदा पदा हि धर्मस्य आभिर्भवति' के अनुसार प्रत्येक युग में उदाहरण कर्मवीर उत्पन्न होते रहे हैं। चात्तों के हल नृत्यन युग में इरशों 'बापू' तथा 'नेहरू' के रूप में उभरे हैं। स्वर्गीय बापू की विरव-विषा और मङ्गाव्य तो सवमाव्य है ही किन्तु राष्ट्र के कर्षणार पं० नेहरू की भी चात्तों प्रायः समस्त विरव के नागरिक जानते तथा भद्रों की दृष्टि से दृश्य हैं। एशिया के तो चात्तों प्रधान व्यक्ति हैं तथा एशिया के शीत चात्तों राष्ट्र अपने मार्ग-प्रदर्शन के निमित्त चात्तों की राक्षनिक अनुमत के दृष्टि रहते हैं। एशियाई देशों में, कुछ वर्ष हुए, एक सभा (Conference) के चात्तों प्रधान बनाये गये थे। चात्तों की सवनिम प्रतिभा और निष्ठाव्य राजनैतिक समता इरशों से जानी जा सकती है। इस महान् विभूति के जीवन और कार्य-क्षेत्र के ऊपर विरव्य चात्तोंचना करने से पूर्व इनक जन्म तथा पैत्रिक सम्बन्ध के विषय में कुछ लिखना अनिवार्य सा है क्योंकि इरशों तो नेहरू के समान कर्मवीर किसी राष्ट्र विशेष को सम्पत्ति नहीं होने, समूचे विरव पर उनके कार्यों का प्रभाव पड़ता है फिर परिवार में उनका प्रभाव कुछ विशेष नहीं रह जाता किन्तु फिर भी पारिवारिक और जन्मजन्त संबंधों का बंधन आवश्यक हो जाता है।

सन् १८८१ ई० में एक कारमोरी ब्राह्मण परिवार में पं० नेहरू का जन्म हुआ। आपके पिता प्रयाग के एक सुप्रसिद्ध एडवोकेट थे। पं० मोतीलाल नेहरू ने अपने व्यवसाय से इतना धनार्जन कर रक्खा था कि नेहरू परिवार की कई पीढ़ियों तक उसे हम विषय में चिन्ता नहीं हो सकती थी। पं० मोतीलाल एक कुशल एडवोकेट थे तथा साधारण अभियोगों में न जाकर बड़े-बड़े राज्यों और रईमों के अभियोगों का पक्ष समर्थन करते थे। पंडित नेहरू को पिता के लिये कैम्ब्रिज भेजा गया। वनका रहन-सहन आहार-व्यवहार सब कुछ पारचाय्य ढंग का बन गया। वस्तुतः जन्म से उच्च धनिक परिवार में उत्पन्न होने से आपका जीवन का भार-दंड बहुत ऊँचा था। इंग्लैंड में जाकर भी वह वैसा ही रहा। अध्ययन-काल में आपके वस्त्र पेरिस से चुनकर आते थे। अंग्रेजी आपकी मातृ-भाषा भी बन गई थी तथा इसी संस्कार के प्रभाव से हम नेहरू को माहिरिदक क्षेत्र में देखते हैं। इंग्लैंड के वातावरण ने नेहरू के मस्तिष्क में वह मुगन्धि भर दी जो स्वाधीन राष्ट्र अपने निवासियों को प्रदान करता है। उसे अपने देश की दुर्दशा पर शोक हुआ और जब वह विदेश में एक बैरिस्टर तथा कैम्ब्रिज प्रोफेसर होकर भारत आया तो उसने देश-हित के लिये जीवन समर्पण करने का एह निश्चय कर लिया।

सब प्रकार से सम्पन्न तथा भ्रैरव्य और धन में पके हुए एक तरुण के लिये यह कार्य कितना कठिन था इसे वही समुचित रूप से समझ सकता है जिसे स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रयास के ये दिन देखे हैं। अपने प्रथम प्रयत्न में, जबकि नाना में, श्री गिदानी को बन्दी बना लिया गया, पं० नेहरू ने मार्पी के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करने का निश्चय किया। उन्होंने अपने वित्त को विवश किया कि स्वयं भी नाना की ओर चले किन्तु कुछ अन्य मित्रों के कथन, जो निरपेक्षामक थे, के सहार ले रुक गये। उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है—'मैंने मित्रों की सम्मति को शरणा ली तथा अपना कारगरता को द्विवान का एक बहाना निकाला...

मैंने प्रायः अपने एक साथी को इस प्रकार

एकान्ती छोड़कर चले जाने से स्वयं सच्चा का अनुभव दिया है। मानवी-  
चित्त-स्वभाव के कारण घन और घुल में चले एक युवक के लिये अपने  
भारमिक सामनैतिक धर्मों में ऐसा ही जाला कोई आश्चर्यजनक घटना नहीं  
तदुपरान्त एक बात जब पं० नेहरू स्वयंसेवकों की एक टुकड़ी के समक्ष  
बने खड़े रहे थे उन्होंने देखा हमरी ओर पुलिस के अधिकारी स्वयंसेवकों  
की घुरी लाह पीट रहे हैं। उनका हृदय धक-धक करने लगा किन्तु मात्तो हुई  
निर्यजता को रूढ़ निश्चय के बल पर रोक कर वे सड़क पर बढ़ते रहे। वह  
एक कायर का सा व्यवहार करने के लिये अब उद्यत न थे; पुलिस के निम्न  
आवाजों ने, हृदय में उत्पन्न प्रतिजिवा के विषम भावों ने उन्हें प्रायः  
अन्धा-सा बना दिया, उनके अन्तर से निकाली हुई रोषमय विचारधारा  
ने कहा कि अश्वारूढ़ पुलिस घबरा कर की सीधे गिराकर स्वयं उसका  
स्थान ले लिया जाय किन्तु नियन्त्रण तथा अपनी पार्श्वों के अनुशासन ने  
उन्हें रोका तथा उन्होंने चोट से रक्षा करने के लिये अपने मुँह को  
दोनों हाथों से केवल ढँक लिया। नेहरू दिन प्रतिदिन अपने को नियंत्रित  
तथा कष्ट-सहिष्णु बनाते गए। अहिंसात्मक संघर्ष के लिये उन्होंने कितना  
त्याग किया। अपनी आत्म-कहानी में वह स्वयं लिखते हैं 'दधिर-मो लकी  
तथा सड़क पर पड़ी हुई मीके विचार ने मुझे विह्वल बना दिया। यदि मैं  
उसे देखने के लिये वहाँ होता तो मुझे विस्मय है, मेरा व्यवहार न  
जाने कैसा हो गया होता। अहिंसा के सिद्धान्त पर मैं कहीं तक चला सकता  
मुझे भय है कि वह कहण दरम मुझे उस पाठ की भुजा देता जिस मैंने  
दर्जनों सालों में सीखा है। उपरोक्त उदाहरण ने उद्भुत उदाहरण है जिन्हें  
विरय इतिहास का कोई भी पाठक कभी भूल नहीं सकता।

अपने सामनैतिक जीवन में पं० नेहरू की युग के अवतार स्वर्गीय  
बाद से ही प्रेरणा मिली है। नेहरू तथा बापू के सम्पर्क में रहे हैं।  
जिनमें अद्भुत कार्यशक्ति तथा प्रतिभा है किन्तु जहाँ कहीं उन्हें अपने  
कर्तव्य में अटकता पड़ा, बापू के आध्यात्मिक बल ने उनकी महायत्ना  
की। नेहरू की पर गांधी की की चटूट विरवास रहा। १० जी भी समित अन्धा



कमीठी पर कमने से मही इतरने योग्य ही है उसमें केवल विश्वास के सहारे कहा गया कुछ भी नहीं। योग्य के समनागमन तथा उसके ऐतिहासिक अध्ययन ने नेहरू को विश्वस्त बना दिया है कि मानव की धार्मिक आवश्यकताएँ उसका व्यवहार बनाती हैं किन्तु निरवासी पात्रियों के समुदाय को अपने द्वार में एकत्रित देखकर एक बार वह कह उठा था :— 'उस धार्मिक विश्वास में कितनी आश्चर्यजनक शक्ति थी जो सदस्यों वहाँ तक इन्हें तथा इनके पूर्वजों को भारत के प्रायिक स्थान से गंगा-स्नान के लिये छाती रही है। पं० नेहरू ने अपने निजी दृष्टिकोण से धर्म को विश्वास न मानकर भारतीय अध्यात्मवाद को राजनीति से निजा देने का प्रयत्न किया।

जीवन की सरलता के साथ पड़पाठी अवश्य है किन्तु जीवन के मापदंड को ऊँचा उठाना चाहते हैं। आपकी डाकट इच्छा रही है कि भारत के कृषक केवल साधारण रीति से जीवन चालन करके ही संतुष्ट न हो बैठें वरन् उसका रहन-सहन का स्तर ऊँचा होना चाहिये। मजदूरों तथा किसानों के लिये आपके दृश्य में समित्त कहना भरी पड़ी है। साधारण जनता ने आपके जीवन से इसे पूर्णतया जान लिया है। कार्य के आभिरम ने पं० जी को इतना समय नहीं दिया कि आप अपने इस प्रेम को पूर्ण रूप से प्रकट कर सकें। उन्होंने कई बार स्वयं अपने को साम्यवादी घोषित किया है किन्तु कार्य रूप में कोई प्रशस्त पद इस दशा में नहीं उठाया। आपका यह साम्यवाद कृषकवाद या मजदूरवाद की एक प्रतिष्ठाया है। 'विरह इतिहास की मूलक' नामक विशद प्रथम में आपके विचारों का उद्घाटन किया है तथा ससार के विभिन्न 'वादों' पर प्रकाश डाला है। आपके विचार इसी साम्यवाद से पूर्णतया नहीं मिलन और यदि मिलते हैं तो कम-से-कम अपने राजनैतिक जीवन में आपने उन विचारों को मुख्यता नहीं दी। आप प्रजातंत्र के मित्र न तथा अमेरिका द्वारा प्रतिपादित मित्रास्त्री पर ही अब तक चढ़ रहे हैं। प्रसीदारी क पं० नेहरू समु हैं। शीत किसान के जीवन को आप सुखी देखना चाहते हैं। उनका कथन है 'Why this



## “देश को विद्वान् हेतुओं की आवश्यकता है”

“रूपमिति ते मुहूर्तमो रसमिदं कवीश्वराः ।

नामिति मेधा यशःकाये अरामाणश्च भयम् ॥”

वस्तुतः विद्वानों में सदैव से यज्ञा आने वाला यह उपरोक्त कथन समान नहीं, एक अनादि कात्र से विद्वान् क्षेत्रज्ञ तथा भातुक्त करि ही दुर्लभ-राशानत्र से द्वाध मानव जाति को सुख-संतोष तथा शान्ति का मार्ग दिशाये रहे हैं । उनकी समस्त कृतियाँ विरह के भूते भटके पथिकों के लिये प्रकाश-रश्मि बनीं, उनके जीवन सम्बन्धी अनुभव तथा संशुद्ध विचार ही विश्व के मनुष्यों के जीवन में काम आये । होमर मिलन, रोमानीयर गीते तथा जालमन, बर्क और रमिकन की रचनाएँ केवल वास्तव्य देशों के लिये नहीं वरन् समस्त विश्व के लिये विचार्य तक जीवित रह कर समस्त जगत्देशों का काम देनी रहेंगी । वास्तव्य को सुदृढ के जीवन-सम्बन्धी विज्ञान कीन सहृदय पाठक भूत्र सकता है । वास्तव्य मनीषियों ने ओ नान् अपने ग्रन्थ-रत्नों में भर दिये हैं वे उन विद्वान् क्षेत्रज्ञों के कठिन परिश्रमों के परिणाम हैं तथा किसी भी भारतीय अथवा एही सम्बन्ध के अनुगामी अथवा प्रतिपादक के लिये सुदृढीय है । हमारे भारतीय साहित्य में तो ऐसे विद्वान् क्षेत्रज्ञों की आदि से ही एक अनवरत पंक्ति ही लक्षी आती है । उपनिषद् तथा ब्राह्मण ग्रन्थों की दार्शनिकता की कीन स्तुति नहीं होगी ? बुद्ध के ज्ञानक ग्रन्थ किसे विव नहीं ? पारिजात-वाचार्थ सुन्दर कल्लेद्वान् कीन वरने के लिए आहूत नहीं रहना ? हर्ष, कालिदास और बाण के ग्रन्थ-रत्नों ने लिये नहीं अजवाब ? अरुण और सुतुल के गरीब सम्बन्धी ज्ञान की कीन मुक्त कंद से दर्शना नहीं कर रहना ? रामकृष्ण परमहंस तथा विवेकानन्द के देशान्तर से आत्र की किताब वरन् यात्रा में रहना है वरन् मुक्त हास का मुक्त करि अनाद, अमृत, अक्षय्य आदि छ उपरज कवन रहना से भर है ? गूर, मुहूर्त और कर्ण के ज्ञान के ज्ञान का ज्ञान । ज्ञान देना है । दुर्लभ में क्षेत्रज्ञों तथा कठिकों ने इतना बुद्धि । ज्ञान और कला है तथा सब का सर्वज्ञ करना सम्भव है । विवेकानन्द ने ज्ञान के रूप में सब जगत् का ज्ञान नहीं था





किन्तु मूर्ख ने उन्हें और भी प्रोत्साहित कर दिया। बच्चा की बाजी का खेलकूद की कक्षम में एक ग्राह्य होना है जो मुझने या पढ़ने वाले को उत्पन्न बना देता है। विद्वान् खेलकूद मुझा देता है कि वह पाठक को गुणमयी सिखा दे रहा है तथा उनकी शीघ्र कदाचित् पाठक के जिये स्वयं एक उपदेशक का काम करनी रहनी है। इसी प्रकार बच्चा भी छोटागर्भों को मोहनी मन्त्र से मोह लेता है परन्तु सच्चा खेलकूद या बच्चा नहीं है जो केवल स्वार्थ भाव से प्रेरित होकर निरवार्थता के प्रत्यक्ष रूप पर तो तथा स्वार्थ-विरमण एवं त्याग के अनुकरणीय विद्वान्ओं पर बहना हुआ जनता का मार्ग-प्रदर्शन करे। स्पष्ट है कि भारत को आज के विद्वान् खेलकों की निताम्न आवश्यकता है।

कुछ धन-संपद की हेष तथा अधिकतर प्रवृत्ति से साहित्य-क्षेत्र में आने वाले खेलकों के जिये यह एक सज्जसास्पद विषय है, पूर्व रूप से धन का खंडन करना उचित नहीं। अपने जीवन-निर्वाह के जिये सभी को प्रयत्न करना पड़ता है। उदरपूर्ति के बिना न साहित्य-सेवा संभव है न समाज-सेवा, किन्तु केवल धन की स्पृहा के सहारे ही चञ्चला मड़ा कत्थाव-कारी है। जितना हमारे जीवन के जिये अनिवार्य है हमें उतना ही ज्ञान चाहिये, अधिक ज्ञान या बढोटना महान पाप है। महात्मा गांधी ने एक बार कहा था "कि भारत की हम दीन दशा का एक कारण यह भी है कि हम ज्ञान का जाने दे जितना हमें मही ज्ञान चाहिये और हम प्रकार दूसरों की प्रथा के कारण बनते हैं।" वस्तुतः यह प्रवृत्ति जिस प्रकार भारत के अन्य क्षेत्रों में प्रति-प्रसक्त है उससे कहीं अधिक दानिष्ट साहित्यिक क्षेत्र में स्पष्ट हो सकती है। कदा-ककंट हकट्टा करके तथा उसे मुनहरी परों में बन्द करके ऊँची कीमत पर बेचना जितना विरा है उससे कहीं अधिक निरा यह है कि आसक्त शीघ्रक तथा टाइटिल के लक्षणवाकर विषय के जिये साहित्य पुस्तकें दूकानों पर रखवान का व्यवस्था किया जाय। भारत के बहुत से क्षेत्रों में, जो उत्तराध्या नहीं है, यह कल्पना दम्भन में आती है कि प्रायः खेल चुनकर उन्हें नूतन साहित्य देने का प्रयत्न किया जाता है।



कवियों की नायिका उनके साथ की गई छायावाद और रहस्यवाद अपनी इस निकृता के लिये घिरकाज तक भादुरणीय रहेंगे किन्तु अब तो पथार्थवाद दिन है, हमारा प्रगतिवाद हम पथार्थवाद की प्रतिष्ठावा है, प्रतिरंजित कर्म का स्थान जीवन की कठोर अनुमति को देना चाहिये, व्यक्ति कुंजों के परिकरणा अब भूमि को निज स्वर्ग पर खलवाना छोड़ दे यदि हम सामर्थ्य है तो अलका का निर्माण यही कर दे जिसमे देश का निम्नतम प्रायः यममें प्रवेश कर सके ।

आज के कुछ विद्वान् क्षेत्रों ने प्रदर्शन नहीं तो एक उचित मोड तक पग हम दिशा में उठाया है उनमें श्री विद्योती हरि का विरचबंदुर कार्य, तादृश साहित्य-पावन का अनुसंधान पूर्ण तथा श्री वेकट राव सास्त्री के दूत स्रजनात्मक क्षेत्र वस्तुन प्रशमनीय है । हमारे क्षेत्रों को इन रक्षाध्व आशों का अनुकरण करना चाहिये । केवल सामान्युष्टि के लिये लिखने के दिन गए । आज तो जनता के सुख तथा पुण्य के लिये ही लिखना कुछ मात्र समता है । विरच-साहित्य का अनुशीलन करके हमारे क्षेत्रक अनुयायन पूर्ण क्षेत्र लिखें जिनमें प्रचुर मात्रा में आज की विषय समस्याओं के निरूप उपलब्ध हो सकें । शास्त्रों पर लिखने की अपेक्षा साहस्यर रहित सत्य को जनता के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक है, ऐसे विद्वान् बड़े भाग्यों को देश को निरात्मक सावरयचना है जो विदेशी साहित्य का हिस्से में अनुवाद कर सकें तथा विज्ञान और दृष्टि-वस्तुमयी तारों को साधारण जनता के लिये बोधगम्य बनाकर देश का लाभ कर सकें, इसके लिये अधिनाय साहित्यिक कर्मता तथा साहस्य-वस्तुन शक्ति चाहिये । शास्त्र का वास्तविक ही अनुवाद कार्य में सफल हो सकना है, अपनी भाषा के लिए एक ऐसा वैज्ञानिक कोष बनाया आज तो निराश्रित्य है जिस हिन्दी में सब ज्ञान समन्वय बना सके । इस प्रकार अब तो आदि विद्वान् भाषाओं में कुछ साहित्यिक ज्ञान प्रदान आज विषय साधारण निराश्रित्य के लिए सरलतम बन जायेंगे । यह कार्य बहुत परलभ्य से सम्प्राप्त किया जा सकता किन्तु हमसे सम्पूर्ण तादृश का जो दिन है । हमसे तादृश प्रसार कही अधिक महत्त्वपूर्ण होता । आज के भारतीय चेतक यदि अपनी



भर देती है। इसीजिये वीरत्व में जगन्मोहिनी शक्ति सभी अन्य गुणों से श्रेष्ठतर है और यह कीर्ति का सबसे बड़ा वर्धक है।

जब भी किसी देश या जाति पर कठिनाइयों के बादल मगाने और सैनिकों और वीरों ने प्रबल पवमान बनकर उम्हें द्रुम-भिन्न कर दिया। राम ने राक्षसों से देश की रक्षा अपने नुकीले बाणों से की। कृष्ण ने सैनिक शक्ति के बल पर ही कंस जरासंध और अघर्षों की रक्षा काया। वीरवर रक्तगुप्त जीवन पर्यन्त निर्मम हूषों से टपकर खेता रहा। वीर-शिरोमणि पोरस और चन्द्रगुप्त ने भारत भूमि को यूनानी अधिकार से मुक्ति के जिये बचा दिया। शिवा और राणा अपनी चमकमावी तलवारों से ही गौ, माझण तथा धर्म की रक्षा करते रहे। एक मही संसार में कबेक उदाहरण मित्रने है। महारवाकोंची दिठकर स्थाविन के घर में सुसकर भी जमका कुछ बिगाड़ न सका। ब्रिटेन और अमेरिका ने समस्त संसार में अपने उपनिवेश बना जिये। अफगानिस्तान के परान तथा नेराज के निरामी आतम भी स्वतन्त्र हैं। आखिर किसी प्रकार ? केवल अपने सैन्य बल पर और भारत भी अपने वीर सुभाष के सहारे ही तर गया। यदि निम्नच मान से भारतीय स्वतन्त्रता के मूल को खोता जाय तो स्वीकार करना पड़ता है कि निम्न कार्य कांग्रेस और समूचा देश मित्रकर नहीं कर भी न कर सका उसे सुभाष और उनकी 'आजाद कीर्ति' ने कुछ ही दिनों में कर दिया। जब दिव्य शक्ति के अन्तर में रहती हुई वीर बाणी गराव रही 'Friends ! My comrades in the war of liberation ? I demand of you one thing above all, I demand of you blood. Give me blood and I promise you freedom' फिर क्या था जबहिन्द की स्वतन्त्रता से सभी और अराजक के प्रगल्भ गुण उठ। नेना भी दिव्यी तक स्वर्ण नहीं पहुँच सक तो क्या ? उनकी बार आमा न अपना काम स्वर्ण किया। उनकेचन्द्रमन कार्य न देश में दूषण पैदा कर दिया। उस प्रबल दूषण के समक्ष मित्रिण सना का बल पात भारत में दिक् न सका और आतम













सबका पुण्य परि भीत बनें  
तो हमको दे बरदान सखी  
चबड़ाये लठ पड़े देश को  
करें पुनः समस्तान सखी  
देखें कि इस जगती-तल में  
होगी कैसे दार सखी ! " ---

### सुमद्राकुमारी 'चीदान'

भारतीय यह है कि पुरातन नारी और आधुनिक नारी में जमीन  
आममान का अन्तर है। नारी पुण्य के समान ही अपना सामाजिक रूप  
बनाने में प्रयत्नशील है और उसे उत्तरोत्तर सफलता मिलती जा रही है।  
वैवाहिक धर्म पर वर्णित विवाह और धार्मिक-पंचरों के उत्तरागत भारतीय  
विधान-निरूप में नारी के विवाह-सम्बन्धी नियमों की एक सूची बनाकर  
इसे एन, कानून या विधि के रूप में प्रकाशित या घोषित भी कर दिया  
है। इस वैवाहिक विधान के अनुसार भारतीय नारी को प्रायः वे सब  
सम्बन्धनाएँ मिली हैं जो पितृ के द्विती भी राष्ट्र को प्राप्त हैं। हाँ, देश की  
कुछ अश्लील तथा अनिवार्य परम्पराओं को अपरध ध्यान में रक्खा गया  
है किन्तु जो कुछ इस विधान के अन्तर्गत है वह अपरध नहीं।  
सम्बन्धों में लेकर के अधिक बर्तों की श्रितियों तक समान रूप से एक ओर और  
में बंधी बरही में अपना पीड़ा सुनाकर बोझ हटका करना चाहती है  
व सम्मान की सम्मति भी अनेक साक्षित श्रितियों के श्रेष्ठ पत्रिका तथा पत्रों  
में प्रतिदिन निकलने रहते हैं। बच्चों की कीर्ति में सुदृढता पाने के लिये के राष्ट्र  
और राष्ट्र के सुवर्णों को वैवाहिक सुविधों में धन-मित्रों के निमित्त प्रेरित  
करती है। मान्य की अमान्य विषय मात्र सम्बन्धों तथा परिस्थितियों  
की देखभाल रूप पर कार्य अनुचित नहीं। इसमें नहीं राष्ट्र का हित मान्य  
है नहीं इसमें नहीं अधिक उपकार उस चबड़ाओं का है जो अमान्यक  
सम्मान तथा भारतीय जीवन में सबका सुदृढता पाने का ध्येय है।  
राजकुमारी अमृतकीर ने इस दिशा में विधान सम्बन्धन में 'मैंने भी' की 'मैंने'



की गई है। मैं उसे इसलिये पूजनीय मानता हूँ कि मनुष्य का मनुष्यत्व केवल उसी से विभेदा है।" श्रीबिज

२—"स्त्री के मयनों में परमात्मा ने छपने हो दीपक रख दिये हैं ताकि संसार के भूखे-भरके लोग प्रकाश में छपना सीखा हुआ रास्ता देख सकें।" बिजिज

३—"तारे आकाश की कविता है तो स्थिरा पृथ्वी की कविता भी है, दुनिया के भाग्य का निरतार हाथों के हाथों में है।" हारमेव

४—"तेरा स्वर्ग तेरी माँ के पैरों तले है।" हजरतमुहम्मद

५—"भारतवर्ष का धर्म भारतवर्ष के पुत्रों से नहीं पुत्रियों की कृपा से स्थिर है। यदि भारत-रमणियों अपना धर्म छोड़ देती तो अब तक भारत नष्ट हो गया होता।" स्वामी दयानन्द

जिस नारी जाति के विषय में उपरोक्त विचार विरव के विरुद्ध पुरुष छोड़ गये हैं भारत के पुरुष वर्ग को उसकी प्रगति तथा उसके बाधा बनना महान् पाप है। निरसन्देह स्त्री-स्वातन्त्र्य तथा शिक्षा-प्रचार से देश और समाज उन्नति की पराकाष्ठा पर पहुँचेगा किन्तु साथ ही-साथ ही भारत की देवियों के लिये भी कुछ आवश्यक विषय हैं जिन्हें राष्ट्रियता में रखकर उन्हें प्रगति के दृष्टान्त पथ पर बढ़ना है। मदभानी नदियों की भाँति उन्हें पर्वतशृंगों से स्पर्श नहीं टकराना है। वरन् विन्धु जैसे गाम्भीर्य धारण करके बढ़ना है। निरम-बद्ध स्वतंत्रता ही भारतवर्ष-स्वतंत्रता तथा दुष्टदुःखता बन आती है। केवल इसलिये कि विरव हमारे राष्ट्रों में स्त्री वर्ग सदस्य है। हमारी भारतीय महिलाओं को कष्टों की भाँति अनुसरण नहीं करना है। हमारा देश कुछ परम्परागत सांस्कृतिक विशेषताएँ रखता है जो विरव के अन्य किसी राष्ट्र के पास नहीं। हम अपने पुरातन आदर्शों को पूर्ण भूलना नहीं है। हमारी सामाजिक धार्मिक तथा नैतिक परिस्थितियाँ अन्य राष्ट्रों से सामंजस्य नहीं रखती अतः भारतीय नारीत्व के आदर्शों को अपनाना भी एक भारी भूल होगी 'स्त्री शूद्रों का जीवता' का प्रतिबन्ध तो आज है नहीं। भारत की महिला



# जीवन में परिश्रम का महत्व

‘अथोगिनः पुरुषार्थिदगुणैः अचमीः’

मनोरुति से ही मानव-चरित्र का निर्माण होता है, जिसका वास्तव्य कर्म से व्यतिरिक्त है और कर्म ही निर्माण का अङ्गसम्बन्ध है। कर्म के प्रतिपादन में शरीर अथवा मस्तिष्क को कुछ दिखाना-सुझाना पड़ता है। इसी क्रिया का साहित्यिक अर्थ श्रम है। श्रम शब्द का यही वैज्ञानिक निरूपण है।

मानव-जीवन में परिश्रम का एक विशेष महत्व है। दुनिया में जिन लोगों ने कुछ किया है वह केवल पुरुषार्थ और संश्रानता के बल पर किया है। पुरुषार्थी मनुष्य और और और होता है। इसमें वह जैसे और महत्कष्ट होता है जो कठिनाइयों, आपत्तियों और निष्पत्तियों से विचलित नहीं होते देनी। उसके मुख पर सदैव एक अद्भुत मुस्कान, एक मनुष्य हास्य, सुनीलित रहता है। कर्मण्य की प्रवृत्ति में वह मग्न रहता है। हास्य-काम, वस्तु-अवस्था विविध के हास्य के मूल समर्थ कर वह ‘कर्मव्यवहारिकार्थे मा कथेयुः कदाचन’ के उच्चारण को ही अपने हृदय के ही जीवन का अर्थ बनाकर चलाता है। इसको न किसी ने र्त्ती होती है न किसी के सामर्थ्य पर हंस। अत्येक निष्पत्ति इसकी अवस्थिति में मनुष्य एक का संसार करता है। अत्येक निष्पत्ति इसके अर्थ मनुष्य कर्म-इतना बड़ा का महत्त्व एवं मनोरम मार्ग प्रोक्त रहा है। मान के समर्थिन्तु पुरुष ठिकठा नहीं पाते, इसकी निष्पत्ति होती है। एक कर वह और अधिक भी उदात्त वेग मत्वा नीचगति से जीवन-प्राप्ति के इच्छास्पन्न वह वह अवस्था रहता है। तब और मन एक अवस्थिति मनुष्य से जीवनगत हो जाता है। वही कर्म वह अवस्था दे जो रहता है इसकी शक्ति का प्रभाव मानव के मान-अभिमान तथा निम्नता वही नहीं बदलकर जाती, वह कम और कमजोरता के मान में बदलकर करने का अर्थवत् ही नहीं रहती। अतः और उदात्त किसी भी व्यक्ति अवस्था





हमने सञ्ज्ञान-वश किये गये हम अहम्भ प्रपराध को भी क्षमा कर  
 दिया तथा पुनः आरम्भ से निरोक्षण कार्य में जुट गया। ऐसा ही एक  
 सुन्दर उदाहरण कार्यालय का है। प्रीत रात्र्याग्नि पर त्रिची हुई  
 हमकी प्रसिद्ध पुस्तकें मेज पर रखी हुई एक सेवक द्वारा काढ़ दी गई  
 थी किन्तु तबिक भी रोग प्रकट न करके उन्होंने उसे पुनः चारि-  
 से त्रिचने का कार्य आरम्भ किया था। एक नहीं विरव इतिहास में  
 हमें अनेक विमूर्तियाँ ऐसी मिलती हैं जो अम-सूत्र के सहारे ही विरव  
 में विशिष्ट स्थान बना सकें हैं। अम और अहम्भसाय का समिश्रण  
 सब कुछ सम्भव बना देता है। एकत्रय का अहम्भ-भेद का दूरतत्वापर  
 हमके कठिन परिश्रम का प्रतिफल था। राम का कठोर बर्नोवास  
 उन्हें मर्यादापुद्गलितम बना सका। अमवत कर्म-परायणता से  
 ही कृष्ण जैसे कर्मवीर, कविदास जैसे मुक्ति तथा विरवाभिन्न और  
 बलिष्ठ जैसे अवि और योगीश्वरों का निर्माण हुआ है। आज भी  
 ऐसे व्यक्ति को स्मृतता नहीं जो अम को जीवन में प्रधानता देकर  
 एक अति कुशलकोटि के नेता, नेता और राजनैतिक बने हैं।  
 हाकर राजेन्द्रप्रसाद पंडित नेहरू तथा स्वर्गीय 'बापू' अमिक जीवन  
 के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। विरव में साधनहीन और हीन-इतिहास मानवता  
 का ही आधिकार है ऐसे तो नमक में आटे के समान मिश्रते हैं जो  
 सुन्दरी पात्रों में लुप्तकर उन्नति के पद को सच्चे अर्थ में प्राप्त  
 कर सकें। यह तो एक निर्विवाद सत्य है कि देवदत्त और अम अहम्भ-  
 वना की ओर से आते हैं और किसी भी समाज या व्यक्ति के  
 विकास में बाधक हैं। कठोर अम करके दूर-पूँति करने वाले ही  
 आगे बढ़कर विरवाकाय के समकाले हुए विचार बने हैं। सुप्रसिद्ध  
 राजवाल्स विद्वान हाकर मानवता के अम और कार्य शक्ति की मदद  
 इन शक्तियों में प्रकट की है, बापू पुष्पा की कथाएँ हैं और कार्य अम के पुनः।  
 उद्योग बहू स्थापन है जो नम-नम हाव भाव सभी समादायिकों को  
 पुष्पा की कथाओं का निम्न कारिमाण स्वयं पुष्पा में परिवर्तित कर  
 रता है।



भारत के बुद्धिजीवी अपनी सारी निरक्षर जनता को नहीं करवाने। कार्य-कुशलता गहन गर्त में गिरनी का रही है और भारत के शिक्षा, कृषकता तथा अन्य आदि प्रमुख क्षेत्रों में यह कथन सर्वांग से हीक बैठा है 'आधुने मिलने नहीं बाधु बुद्धा को दम इतर'—शिक्षित वर्ग में तो अंधम का प्रभाव है ही भारत का धनिक वर्ग और भी शीघ्रनीय अवस्था में है। उनकी दिनचर्या के प्रमुख आधार आहार्य और प्रमाद ही रह गये हैं।

इसी क्षेत्रे धनिकों में दम्प्य व्यक्ति को अधिका होनी जारी है। इसके विपरीत भारत का कृषक-अमुदाय आज भी अंधमी होने के कारण स्वस्थ और 'बहुला सुख निरोपी कावा' की दृष्टि से सुखी है। इसमें समेत नहीं कि हमका सामाजिक स्तर और जीवन का मापदण्ड उनका उल्टा ही जितना नागरिक जनता का है परन्तु उसका स्वस्थ शरीर और श्रृंखलित अवस्था इसे सर्वे सन्तोष प्रदान करते हैं और यह प्रायः उन वर्गों से कहा रहता है जिन्हें निरक्षमी धनिक 'An empty mind devil's workshop' के अनुसार कमाने रहते हैं। वस्तुतः भारत का निरक्षमी वर्ग भ्रम को निजोवृद्धि देकर मानव न श्रुकर शुष्क मय बनने का प्रयास कर रहा है।

आम का युग सर्व-युग अवस्थ है किन्तु जिन देशों में मशीनों का अधिभव है वहाँ भी भ्रम का इतना निरादर नहीं। रूस और अमेरिका आदि देशों में स्त्री-पुरुष आज भी समान रूप से उद्योग करते हैं। वहाँ के बच्चा छन्देदार भाषा का प्रयोग कम करते हैं वरन् दैनिक कार्यों की मात्रा बढ़ाते हैं। वहाँ के राजनैतिक आतिश-बाजी का प्रदर्शन नहीं करते निर्माण के साधारण किन्तु महत्वपूर्ण प्रश्नों को और अधिक ध्यान देते हैं। इन्हीं आदर्शों की कार्यान्वित योजना के बज्रपर रूप के भाग्य विधाता स्वर्गीय लेनिन को सदन करके रूप के राजा लुक्सेमबर्ग ने एक बार कहने का साहस किया था — 'मम भादमी को चरही तरह दल छो। बड़ी क्षेतिन है, हमके आत्म-निश्चयो और कभी न मुकनेवाले मिर की और देखो धोही-मी परिषाई आकृति जिये हुये वह एक रूसी किसान का



हुआ देखते हैं । 'पन्द्रह अगस्त' के साथ ही हम अपनी पराधीनता की समाप्ति और स्वाधीनता के क्षिप्त अह्मलौदय को अपने देश के विभिन्न पर आश्रित हूँवा पाते हैं । यह हमारी प्रसन्नता का स्रोत है । स्वतन्त्रता के बाद ऐसा परम पावन दिन हमारे देश के इतिहास में अल्पित हुआ है ।

भारतीय जनता ने अंग्रेजों को दासता से मुक्ति पाने के ल ८२ वर्ष से जो प्रयत्न किये उनका ही परिणाम यह १२ अगस्त का शुभ दिन है । राष्ट्र में स्वतन्त्र भावना उत्पन्न करके उसे जागृत करने का श्रेय मुख्य रूप से अविज्ञ-भारतीय कांग्रेस कमिटी मर्या को है । हमी की अस्पष्टता में देश ने अनेक बार अपनी स्वतन्त्रता के द्विने प्रयत्न किये और अन्त में १२ अगस्त की हमारे प्रयत्न सफल हुये ।

१२ अगस्त की देश के कोने कोने में आनन्दोत्सव मनाये गये । देश के प्रधान मंत्री का पर पंडित जवाहरलाल नेहरू ने मन्त्रालय और उपप्रधान मंत्री बनाए गये थी सरदार वल्लभ भाई पटेल । देश के विभिन्न प्रांतों में गवर्नर का पर भी भारतीयों को दिया तथा और देश का स्वतन्त्र भावना से परिपूर्ण हो उठा ।

हम स्वतन्त्रता को पाने में कांग्रेस ने का कार्य किया उसे भी जान लेना इस प्रसंग में आवश्यक है । अपना स्वाधीनता का आरम्भ करने में अविज्ञ-भारतीय कांग्रेस का पर पूर्ण सहयोग महीन शासन-मुक्ति तथा अविज्ञ अर्थिक तथा मान काता हो था । अन्त

निर्णय अधिकार गया हुत्तरदायी शासन की मांग मधुमे पहले सन् १८१८ में उपरिगत की गई । इस मांग में ब्रिटिश सत्ता को सुस्पष्ट और चिह्नित कर दिया । भारतवर्ष में शासन करने वाले ब्रिटिशों में हमने भारतीय जनता के शुद्ध गिने-चुने लोगों का पक्षधर समझा और 'सामाजिक' जैसे लोगों को दबाने का प्रयत्न किया । हमी का परिणाम संज्ञा में जलियावाला बाग का दृष्या-बोध हुआ । उसके बाद सन् १८२० में महात्मा गांधी के प्रयासों से देश में ब्रिटिश साम्राज्य शाही को मंचित करने का नया असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ । इस आन्दोलन में हम पूर्ण अहिंसक बने रहे । इसके बाद सन् १८२१ में लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के नेतृत्व में हमने 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' की पुकार की । विदेशी सरकार ने इस पुकार की ओर पूर्ण रूप से उदासीनता दिखाई । फलतः विषय होकर भारतवर्ष की जनता को असहयोग की भावना का अपने भीतर जागृत करना पड़ा और विदेशी वस्त्र तथा पशु के बहिष्कार के भी आन्दोलन करने पड़े । जिसके फल-स्वरूप अनेक नेताओं को कारावास का कठोर दंड दिया गया । इसके बाद फिर देश ने करवट बदला और फिर देश के नेताओं ने स्वर्गीय श्री मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में और निवेशिक स्वराज्य का एक नूतन विधान तैयार करके सरकार को दिया । और साथ ही यह पुनीती भी की कि यदि सरकार २१ दिसम्बर १८२६ तक इसे स्वीकार नहीं करेगा तो देश में फिर से स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए अहिंसा से आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया जायगा । सरकार ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया और २१ दिसम्बर १८२६ को रावा नदा के तट

हर खादौर में अर्द्धरात्रि के समय भारतीय जनता ने अपनी पूर्ण स्वायत्त की घोषणा कर ली, और उसी दिन २६ जनवरी को हमने अपना स्वायत्त दिवस मिरिचन किया । वही दिन आज भी हमारी स्वायत्त भावना के नादगार का दिन है ।

हमके बाद देश के सर्वमान्य नेता महात्मा गांधी जी के नेतृत्व में राष्ट्रीय जागृति के नूतन आन्दोलन प्रारम्भ हुए । नमक-सत्याग्रह हम आन्दोलन का मोड़-दण्ड बना और देश के कोने-कोने में नमक का की दूर करने की पुकार सुनरित हो उठी । नमक सत्याग्रह में भाग लेने पर हजारों देशवासी कारागृहों में बन्द कर दिये गये । दो वर्ष के अहिंसात्मक आन्दोलन के बाद वह अन्धकार सख्त हुआ और साम्राज्यवादी शासक मुड़े । उन्होंने महात्मा गांधी को पुनः समझौता किया । किन्तु वह स्वाधीन बन सका । सरकार ने महात्मा गांधी के साथ और अहिंसा को डीक डीक न समझकर बूट नीति से अपने पत्रों को और अधिक दृढ़ करने की चालें खोजी किन्तु वे सब असफल हुए । इस प्रकार १९१९ में देश में कांग्रेसी नेताओं की अपने अपने प्रान्त में मन्त्रिमण्डल बनाकर काम चलाने का व्यवसर मिला किन्तु वह भी स्वाधीन न रह सका और पुनः प्रान्तों के गवर्नरों ने कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल को भंग करके शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली । हर प्रान्त में फिर से तानाशाही शासन स्थापित हो गया । हमो समय उबर बीरौर में दिक्षीय महापुरुष की उगाड़ार्थ मण्डप स्तर से खपक उठी और कांग्रेसी को भी उसमें शामिल होना पड़ा । युद्ध की हम वक्रा न कांग्रेसी ने भारतवर्ष की धन, सम्पत्ति, जनता तथा समस्त उपकरणों से देश को बिना इच्छा के भी अपने हित में लगाया । परिणाम यह हुआ कि





लिए सदैव स्वयंशरी में लिखा जायगा और भारतीय जनता के हृदय में तो वह प्रेम और पुत्रक के साथ सदैव अंकित रहेगा ही ।

इस घटाघात के बाद ही भारतीय राजनीति के क्षेत्र में पुनः भीषण अन्धकार की आभाएँ जग उठीं । स्वतन्त्रता संग्राम के 'आन्दोलन' घर घर में गूँज उठा और स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए देश के बाबू, बूढ़, धनिता एवं दल में पुकार उठे—'अंग्रेज भारत छोड़ो' । इसर भारतवर्ष में स्वतन्त्रता आन्दोलन के लिये असीम प्रयत्न जारी थे । उपर अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति इतनी जटिल हो गई थी कि अंग्रेजों का औज़ादी संग्राम अस्मय संकट भारत में जमें रहना सम्भव न था । अंग्रेज सरकार से शांति और गम्भीर बने हुए भी भीतर ही भीतर निश्चित और व्याकुल हो उठे थे । उसे कोई उपाय सूझ न रहा था कि भारतीय जनता कि अन्तर्गत अस्मिता को दुहराकर अपना राज्य कायम रख सके । अन्त, अहिंसा और अस्मय के द्वारा भारत के नेताओं ने संसार के राजनैतिक आचारसूत्र में अनेक नए मान्यता प्राप्त कर ली थी और अन्तः अन्तः अस्मय राष्ट्र भारत को स्वतन्त्रता दिलाने के पक्ष में अपना मन प्रकट करने लगे थे ।

द्वितीय महायुद्ध समाप्त हुआ । अंग्रेजों की आन्तरिक विग्रह हुई । इस युद्ध में भारतीयों को स्वतन्त्र करने के जो वचन दिये थे उनके पूरे काने का समय था पहुँचा किन्तु अंग्रेजों ने भारत में कुछ आवाकानी की । उन्होंने भारत की पुरानी समस्या—सांस्कृतिक समस्या को प्राथम्यता देकर मुस्लिमलीग की माँग को

दिये दिये प्रोत्साहित किया। मुस्लिमलोग भारत का बटवारा चाहते थे। अपना पूरा राष्ट्र पाकिस्तान बना कर। इनकी मांग पर में एकर होती चली गई और अन्त में ३ जून १९४७ को पार्लियामेंट ने यह निर्णय दिया कि १२ अगस्त को भारत का बटवारा करके 'इरिडियन डोमिनियन' तथा 'पाकिस्तान डोमिनियन' दो राष्ट्र बना दिये जायेंगे। उसी के अनुसार देश का विभाजन करके १२ अगस्त ४७ को हमारी स्वतन्त्रता का प्रथम सूर्य उदित हुआ।

देश स्वतन्त्र हुआ। किन्तु साम्प्रदायिक बैधनस्य की ओर चिनगारी सुलग रही थी वह अगस्त के प्राग्भ में और के सा. बंधक लड़ी और लाखों निर्दोष प्राणियों का बध और बहिदान होने के परचाह देश का मया रूप पैदा हुआ। एक करोड़ के लगभग जनता एक देश से दूसरे देश में भाई हम प्रका संसार के इतिहास में शरापियों की समस्या का सबसे बड़ा उदाहरण दर्शित हुआ।

आज हम स्वतन्त्र हैं। १२ अगस्त हमारी स्वतन्त्रता का प्रथम प्रभाउ है और हमें १२ अगस्त की स्मृति में ही करने देश में जीवन और जाति के बिन्दु बतल होठे होयते हैं। विश्व के इतिहास में स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए जो अमंल्य दुःख कष्ट मध्य पर होने गे हैं। भारतवर्ष की स्वतन्त्रता का यह दुःख उन सबसे बड़ा कष्टों इतिहास में एक बड़ा रूप पैदा करता है। सत्य इतिहास और सत्यता का स्वस्व बंधन मिली सत्यता में हमारे द ३

नेताओं ने सभी कर्ष में अद्विष्ट रहकर ही विजय प्राप्त की है। यह संग्रह विनाश और लालच के इस युग में एक नया आदर्श उपस्थित करने वाला है। हमें अज्ञात है कि यही सत्य हमारे मावी शासकों का दाय होगा और अद्विष्ट ही हमारे शासकों पर नजर दुखावेगी।



हुकम अहकाम के तौर पर एक कर्मचारी से दूसरे कर्मचारी को भेजे जाते हैं।

आज्ञकज्ञ पत्र लिखने की दो विधियाँ प्रचलित हैं, एक पुरानी प्रथा तथा जिसका चलन कुछ धार्मिक दृष्टिों और व्यापारी लोगों तक सीमित रह गया है। दूसरी मकीन प्रथा जिसमें चगरेओ वरु वरु पत्र लिखे जाते हैं। इन पत्रों में अर्थ का शब्दाङ्गण नहीं होता। संक्षिप्त प्रशस्ति जिनका मुख्य विषय जिनका आरम्भ कर देने हैं।

प्रतिष्ठा के अनुसार पत्र तीन प्रकार के होते हैं—( १ ) बोटों की ओर से बटों को ( २ ) बटों की ओर से बोटों की ओर बतावर बाजों को। प्रत्येक पत्र के मुख्य निम्नलिखित चारू होते हैं :—

(क) पत्र भेजने की तिथि और ठिकाना, (ख) सिध्दापर और प्रशस्ति, (ग) पत्र का मुख्य विषय (घ) पत्र की समाप्ति और (ङ) पत्र भेजने वाले का नाम तथा पूरा पता। इसके अनतिरिक्त पत्र पाने वाले का पूरा पता लिखा जाता है।

## पुरानी प्रथा के अनुसार पत्र लिखना

पुरानी प्रथा में प्रशस्ति में बटों को 'सिद्धि' और बतावर बाजों को 'स्वस्ति श्री' लिखा जाता है। पुरानी प्रथा में जो लिखने की बड़ी परिपाटी थी किन्तु आजकल भी लिखने की परम्परा मिट गई है। पुरानी प्रथा में बटों को आदर-सूचक शब्दों द्वारा ही सम्बोधित करते हैं। पत्र के अनतिरिक्त कहीं बटों का नाम नहीं लिखते। बटों को 'परम पूज्य', 'पूज्य पाद' और 'सर्व-गुण-सम्पन्न' आदि विशेषण शब्दों का प्रयोग करते हैं। बतावर बाजों के लिये 'प्रिय' 'प्रियवर' या 'हितैषी', आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं।



जोतीप्रसाद वाले मामले में कोई पैमाना नहीं बनता। दारा जी के काफ़ी कोशिश कर ली है। रामबाबू रामप्रसाद का दारिम बना दिया गया है। दारा जी कल के मुकदमे में गए हुए हैं। देखिये क्या होगा है ? कृष्ण चल गया है। भाए छोटे दारा जी के नाम का एक पाथर अवरण बनवा खाना। देवी बाबा अब तो ठीक ठीक हैं। बाबा भी दारा के पास उठते बैठते हैं। गाँव के कुशलता पूर्वक है। गाँव की रात्रनीति किसी की समझ में नहीं आती। मामा चाने चले गये हैं। बड़े मामा का काम कभी-कभी मै हो कर देता है। इस वर्ष मैं परीचा में पास हो जाऊँगा। भाए एक साइकिल अवरण करवा दीजियेगा। मामो अभी बेजोड मे नहीं आई है। गिरोप नहीं को क्या जिल्ले ?

मिली फावगुन हप्प्या हादगी गुरुवार सं० १३३० विक्रमी

## नवीन प्रथा के अनुसार पत्र लिखना ।

(क) नवीन प्रथा में पत्र के दाहिनी ओर पत्र लिखने का दिशाना और दिक्कत के नीचे पत्र भेजने की तारीख इस प्रकार लिखी जाती है :—

( १ )

( २ )

( ३ )

जनवरी २३, १९४१, ३ मार्च, १९४१, फावगुन शुक्रवा ११ सं० १३३०

२३-१-४१

३-३-४१

अथवा

(ख) नवीन प्रथा में प्रशस्ति सधप-से-सधप लिखी जाती है। नवीन प्रथा को प्रशस्ति और निवेदन दाहिनायें निम्नलिखित हैं :—

1. बड़े संबंधियों को	मान्यवर, पूज्यवर, पूज्य	आज्ञाकारी, स्नेहभाजन,
2. छोटे संबंधियों को	पिता जी आदि चिरंजीवी, प्रिय	कृपा-वाली शुभचिन्तक, हितैषी
3. बराबर वालों को	प्रियवर, प्रिय	सुम्हारा मित्र, सुहृद
4. परिचितों को	प्रिय अथवा प्रिय गुप्ता जी	आपका (आगे अपना पूरा नाम)
5. अपरिचितों को	महाराय, प्रिय महाराय	"
6. स्त्रियों को यदि वे परिचित न हों	महोदया	"
7. स्त्री को	आल-मिसे	"
8. अधिकारी को	मान्यवर	सुम्हारा, भवदीय
9. निमन्त्रण-पत्र में	श्रीगुरु, मान्यवर	आपों, संवक
		दर्शनान्वितादी

(ग) प्रशस्ति के परचारण पत्र का मुख्य विषय लिखा जाता है।  
महोदय निम्नलिखित वाक्यों में आरम्भ करना चाहिये —

आपका पत्र पाकर मुझे हार्दिक हर्ष हुआ, मुझे कभी-कभी  
आपका पत्र मिलता है, आपका पत्र पाकर हर्ष की  
हवा भाग पाय हुए, आपका पत्र पाकर मुझे आपका  
पत्र पाकर हर्ष की भावना महसूस होती है।



बनावट और आङ्गूर न प्रकट हो रहा हो । वज्र में सर्पिलों का प्रयोग न करना चाहिये । वज्र जिसने में देखा प्रतीत हो, मानो गुप्त रूप में चले कर रहे हो ।

(घ) समाचार-पत्रों को जो पत्र मिले जायें, वह सम्पत्तियों के नाम लिखना चाहिये । सम्पादक को सदैव 'भीमार्क' अथवा 'महाशय' लिखना चाहिये । अन्त में आया 'विरवासी' अथवा 'मन्दीप' लिखना चाहिये ।

(क) कुछ लोग यह के समझ में तारीख ढाँढ़ते हैं, काकेदमन-गों में तो प्रधानमन्त्री समझ में तारीख ढाँढ़ने का बखान है। समझने का पत्र माँ दिया जाता है :—

(2) पत्र मित्र को ( नवीन प्रकाश से )

**धर्म-समाज-कालेज, कलकत्ता ।**

14 MAY 1961

विषय का नाम और नं.

आपका वन पाकर मुझे हादिक इर्ष हुआ । आप दो ० आप में  
आपका वन मित्रा । मुझे आपपर ईद हुआ कि आप ० कर्ष के गोले हुए मित्र  
गये । समो नुम हो कने कटोर इवमि । आप मात्र से आपने कुन बना नदी  
दिवा । मै तो दिवत था, कर्षो आपको वन मित्रता । आपका 'मोदने-देवे'  
को आपने मन ३० में मित्रता या स्नेहीमैत्र में मित्रता का हम हम को मै  
आपने में मैने दूदा तो था दिव्यु नदीने भी आपका कुन बना नदी दिवा ।  
आपका 'आपने निवृत्त' जननीमादावक ने स्नेहीमैत्र में मेरा दे । आपका  
वन कोर आपका आपने निवृत्त दानो माप माप मित्रे । आपका ईद हुआ  
आप या आप वन मापननी को कर्षा हो नदी दे । वन मुन्दर दिव्यु हो ।  
मैने निवृत्त म बाआर म 'वकन बाव निवृत्त' म आप आपका आपका  
निवृत्त क समकक बाई नदी वेदावा या यकता । यकता आपका







अदाशोनवा का परिचय देता है तो उसको पाठशाळा से निहाल रिया  
जाता है । अनुष्ठान का बहुत ध्यान रक्खा जाता है ।

। विद्यालय में एक वाक्-वर्द्धिनी मना है जिसमें विद्यार्थियों को  
स्वास्थ्य देने का सम्भाव्य कराया जाता है । वाक्-वर्द्धिनी मना को  
मीडिंग साप्ताहिक होती है, प्रत्येक पन्द्रहवें दिन मस्त्रों की प्रतिस्पर्धा  
की परीक्षा होती है । जीने वाक्को पुरस्कार दिया जाता है जिससे  
छात्रों के उत्साह में वृद्धि होती है । बच्चे स्वाभाविक रूप से वाक्विमल  
और कीमिल बनाते हैं, उनका नियमानुसार चुनाव होता है । पाठशाळा  
के विद्यार्थियों की तरफ से एक 'विमुक्त' नामक साप्ताहिक पत्र भी निकलता  
है जिसमें छोटे बड़े बच्चे सभी प्रकार के भाव प्रकट करते हैं । छोटी-बड़ी  
कहानियाँ और कविताओं का ज्ञान भी बच्चों को कराया जाता है । स्व  
विजकुल राष्ट्रीय छत्र पर चलाया जा रहा है । पूरे विद्यालय में ७ कक्षाएँ  
हैं । प्रत्येक कक्षा में ३० विद्यार्थी हैं । सब विद्यार्थी सब छोटे हैं और मुक्तिकर्म  
में रहते हैं । सारे सूत्रों में यही एक राष्ट्रीय संस्था है जो महात्मा जी की  
योजना के अनुसार काम कर रही है । कुपि कलाय के लिये २० एंजल भूमि  
विद्यालय के पास है । एक ट्यूबवैल भी लगा दिया गया है । ४ 'ओडी रेज'  
हैं । ३० हिमा की मस्त्र की गायें भी फार्म में पाली गई हैं । कुपि  
कलाय के लिये देहली गवर्नमेण्ट ने २००० रु० का महापत्र 'विगत'  
वर्ष दी थी ।

अभिप्राय यह है कि विद्यालय राष्ट्रीय, सामाजिक, आचारिक,  
और नैतिक-दृष्टि से बहुत उत्तम कार्य का है । इस जनता का सारा  
श्रेष्ठ योगदान निम्नलिखित था य, मातृ का है । नन्दाने अपना सारा  
सर्वस्व आवाग जी को अर्पण कर रक्खा है । विद्यालय बच्चों का बड़ा विश्व  
माना जी की धारणा गुना कहना ।

मातृका आग पुत्र—

विन्तामणि मना

दशवर्षीय



गेज़ने की। गेज़ का मैदान भी उतना ही आवश्यक है जितना बज्जामूम। कभी लोप न करो, कभी किसी से अवे-नवे से न बीजो। एक दूसरे के सहयोगी बनो, उठने बैठने के तरीके सीखो। अपने आप पर शासन करने की प्रवृत्ति को विकसित करो। भुरे आचरण के सबकों के पाल कभी न बैठो। अपने स्वास्ती समय को सायबत्री की पुस्तकों के पाने में व्यतीत किया करो। अपने अन्धकारों का सदेर घादर करो और उनकी प्रत्येक आज़ा का पाज़न करो। कभी उनके ऊपर आज़ोचना न करो।

तुम 'मादा जीवन और उच्च विचार' के विद्वान्त को कभी न भूलो। कभी दूसरों को नफ़र न करो। आज़स्य और जिज्ञास की अपने पास न आने दो। तुम फैसान के ज़क़र से दूर रहो। तुम्हें अपने की एक योग्य नागरिक बनना है अतः तुम अपने दायित्व को समझो। अपने आचरण को बनाओ, गुरधों की सेवा करो। मिगरेट आदि कुट्टों को न पकने दो। सिनेमा, जेज़-तमाशे और कुरचिपूर्ण नाच-रंगों में कभी न जाओ। पूरी तत्परता और तन्मयता के साथ विद्याध्ययन करो। तभी तुम्हारे अन्दर उन गुणों का विकास होगा जिसमें तुम अपने बरा (मानवान्) और देश का मुल उज्जवल कर सकोगे।

तुम्हारे मित्रिपञ्च साहब के पाम मैंने २२\*) जमा कर दिये हैं, जब तुम्हें आवश्यकता पड़े। उनसे ले लिया करना। हमसे तुम्हें सुविधा रहेगी। मैं समझता हूँ कि तुम इस सुविधा का सदुपयोग करोगे। तुम्हारी माया जो तुम्हें प्यार कहती है। मिय दिनेश तुमको नमस्ते कहता है।

तुम्हारा पिता,  
वासुदेव शर्मा।





बहुत-सी बातें तो यहाँ बिना भिन्नाये ही सीख जाते हैं । यहाँ सब लोग पढ़ रहे हैं तो पढ़ ही रहे हैं, यहाँ का प्रत्येक काम नियत समय पर होता है किन्तु घर पर ऐसी व्यवस्था नहीं हो सकती क्योंकि घर पर कोई-न-कोई काम आवश्यक निकल आता है और इसमें विद्यार्थी को रुकना पड़ता है । यहाँ घर का भा कोई बिम्बा नहीं । खाने-पीने का प्रबन्ध वाईन साइव करने है । जहाँ मैत्र यज्ञा है । मन्त्रीने में एक दिन दिवाण करने जाना पड़ता है । न लीकर की देणभाल है न शाकभाजी की भागने पड़ता है ।

हमारे हाइड्रॉ में मुख्य खोज कर और एक विद्यार्थी मेरठ का है । सब ऊँची कक्षाओं का है । मेरा तो एक विद्यार्थी से परिचय हो गया है । मैं कभी-कभी पढ़ने लिखने में इनमें सहायता के सेना हूँ ।

मैं तो चारको जानूँ ही है कि खेड़ों के प्रति मेरा क्या प्रेम है । खान के ५ घण्टे में खज-कर में खाना जाता है । यहाँ व्यायाम के विषे पढ़ा जाता प्रबन्ध है । यहाँ दो व्यायामशाळा है । व्यायामशाळा में खुले हुए स्थान पर है । जहाँ का जलवायु बड़ा ही स्वास्थ्यकर है । होराइ के खाने लड़ खिन्नानुन मैदान है जिसमें सुबह के समय निर्वाहण कर से निम्न उदय की आता है ।

व्यायाम को एक बान मूक बड़ी प्रशस्ति थी है । यह सब है कि प्रत्येक कार्य नियत ही होता है । प्राचीन को खरीदें बतली है, खाने की बतली बतली है और खान की भी पारा बतली है । सागर जीवन कण्डियों के साथ निर्वाहण-मरा हो जाता है । यहाँ यदि नियत हीन करो तो गढ़ना कहें हो खान । यह सब मेरा कोई नियत हो न वा । खान को कभी मिलेगा न कण्ड बतली लीट रहा है । खान ५ घण्टे खाना ला रहा है । खान ५ घण्टे । यहाँ कोई नियत हीन नहीं हो खाना । इस सब 'वैतकी' बतली कर ही खाना है । इस खान सब बतली बतली बतली । खान सब बतली बतली बतली है ।

यहाँ सब खान निजद्वय कर रहने है । प्रबन्ध १५ घण्टे खानाभूति



पारो तरफ देवदार के गगनचुम्बी वृक्ष अपनी मन-भावनी लूटा से दर्शन का मन मोह रहे हैं। ठण्डी-ठण्डी हवा के झोंके हृदय में एक आनन्द उत्पन्न कर रहे हैं। हमारा कालेज १३ मई को बन्द हो गया था। १० दिन पिता जी के साथ जयनन्द बिताये। १० जून तक मामा जी के यहाँ इलाहाबाद का आनन्द लूटा। १२ दिन न्यू देहली में चाचा जी के पास रहा। चाचा जी के मेरी गिरणी हुई आरोग्यता को देखकर कहा कि इन पुष्टियों को किसी पहाड़ी स्थान पर क्यों न बिताओ? हमारे दुन्दुभर के अनेक बानू गए हुये हैं, वही किसी के पास ठहर जाना। मुझे उनका परामर्श बड़ा सुन्दर लगा। सचमुच मुझे यहाँ बड़ा आनन्द अनुभव हो रहा है।

रैल में बड़ी भीड़ थी। इस कारण कुछ विशेष आनन्द नहीं आया। काजिका पहुँचते-पहुँचते कुछ सहूलियत हो गई थीर बिजु को कुछ आनन्द हुआ; क्योंकि काजिका पर मैदान से काफी दूर था। कुछ पहाड़ों के मनोहारी दृश्य भी सामने आकर आकर्षण हो रहे थे। गाड़ी पहाड़ियों को चीरती हुई शिमला पहुँचती है, रैल की पटरियाँ बने चक्करदार मार्गों से गुजरती हैं। गाड़ी के एक तरफ गहरे लफू थे और दूसरी तरफ ऊँची चोटियाँ। ऐसी यात्रा मेरे जीवन की पहली यात्रा थी।

हमारी गाड़ी शाम के ३ बजे करीब पर शिमला पहुँची - रामगढ़ हाऊस मुझे पहुँचता था। स्टेशन पर किराय की टैक्सी का। टैक्सी में बकर खेती हुई बना लगी से चढ़ती थी। इससे मरा तो बड़ा लज्जता था। मैं, राम राम करके रामगढ़ हाऊस पहुँचा। शाम के सात बजे रात थी। शाम को मि. अन्नाबाय का अतिथि रहा। रात मरा बड़ा सोफा किया जिसमें इससे मरा नहीं सुनूँगा।

रात का अन्नाबाय खराबी बन रहा था। उसकी क प्रथम सभा में ही आचार्य मंत्री का मृत्यु वहाँ अनुभव हुआ। मारा मरने के बाद और मर को अन्ध पड़ा। कैसा अनुभव? कैसा सन्तुष्ट? और कैसा आश्चर्य? वहाँ का दृश्य है १११ स्वच्छ जल। क कहीं जाने बंद रह दे,



## (७) छोटे माई की पर

बम्पा समवाज इण्डर कावेर,

मथुरा

१२ अप्रैल, १९२०

शिव वैवाजमिंद,

यह सुनकर मुझे दार्शनिक प्रयत्नता हुई कि तुम परीक्षा में प्रथम सीढ़ी में उत्तीर्ण हुए हो। तुम्हारी मिठाई और पुरस्कार दोनों सुरक्षित रख दिये गए हैं। मेरे पुरस्कारों का निर्वाचन तो तुम जानते ही हो कि मैं ऐसी वस्तुओं पारितोषिक में देता हूँ जो मनोरंजन तो करें ही, साथ ही ज्ञान-बुद्धि और चरित्र-निर्माण करने में भी सहायता प्रदान करें। मेरी समझना है कि तुम्हारा शुद्ध का अवकाश महापुरुषों के जीवन-चरित्र पढ़ने में खोजी हो तो बड़ा ही उत्तम है क्योंकि महापुरुषों के जीवन में ज्ञान और चरित्र दोनों की पर्याप्त सामग्री होती है। जीवन-चरित्र 'भारतीय-मनन' मथुरा के मैनेजर के द्वारा मैंने मंगा लिये हैं, उन्हें शिव बदनमिंद के हाथों जगजे इच्छे भिजवा दूंगा। बदनमिंद २४ अप्रैल को माना जो से भिजने पासौज आ रहे हैं। तुम्हें चादिये कि तुम उन पुस्तकों की काफ़ी समझदारी के साथ अध्ययन करते हुए गने जने: बदना। हम तरह से काफ़ी दिनों को तुम्हारे पास पढ़ने की सामग्री हो आयेगी।

मैं लगभग उन्नीस पुरुषों के जीवन-चरित्र तुम्हारे पास भेज रहा हूँ जिसका तुम्हें थोड़ा बहुत परिचय है। उन चरित्रों के पढ़ने से तुम यह बात मज्जी-मोनि समझ सकोगे कि समझ में नाम और जग बड़े परिश्रम और तपस्वियों से प्राप्त होता है। जीवन-चरित्रों में एक और चन्द्री बात देखोगे कि समझ में जिनके भा महापुरुष हुए हैं, पर साधारण कष्ट से बदकर उम्हान अपन का किरना हुआ बना लिया है। इन महापुरुषों में प्रायः ऐसे महापुरुष निकले जिनका वाक्य वाचन बड़ा कठिनाई से खोजी हुआ है। जिसके पास से मात्रन का मात्रन या चीर न पत्र का चीर न पढ़ने-लिखने का हा मुद्रिधा रही थी। उनमें कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें वाक्य-



६—दृष्टी-प्रदक्षिणा, १० प्रतिष्ठा

७—छोट-व्यवहार, १० प्रतिष्ठा

मन्त्रीय—

विनोदकुमार वर्मा

मन्त्रीयक।

### ( १६ ) शोक-प्रस्ताव

हिन्दो-प्रचारिणी सभा देहली के सदस्यों को यह सभा परिवार  
वासुदेव शर्मा साहिबराज के अनेक पुत्र रामेशचन्द्र शर्मा की अमास्यिक  
मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रकट करती है और ईश्वर से प्रार्थना करती है कि  
वह दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे और उक्त प० जी तथा उनके  
संतत परिवार को धैर्य प्रदान करे ।

देहली

२८ मार्च, १९२० ई०

### ( १७ ) पाचना-पत्र

होली दरवाजा, मधुग।

१० मार्च, १९४१ ई०

श्री० शिवमल्लमिह जी, एम. ए.

एल एल वा मधुग।

प्रिय महाशय,

विगत तीन मास से आपन हमारे शान्ति निकेतन बंगले  
का किराया अब तक नहीं चुकाया। यद्यपि एप्रामयट से मास  
प्रति मास चुकान का यत्न है। इस समय तक बंगले का किराया ३५) रु०





म्युनिमिपैत्रिटी से हमने खे खी है । प्रार्थना है कि आप हमारे हृदय में  
मैत्र को स्वीकार करेंगे ।

देहली,

२० अक्टूबर १९४६

भवदीय—

महावीरसिंह "राजपूत वज्र"

दीदीबाबा-देहली ।

(२०) बघाई-पत्र

( मित्र की पुत्र-जन्म बघाई )

कैलाश कुटीर, काठपुर ।

१६ जून, १९४६

प्रिय राधाकृष्ण,

बघाई ! बघाई !! बघाई !!!

आप आनन्द का वाराणार नहीं । आप अनुदित मुझे आनन्द ही  
आनन्द दृष्टिगोचर हो रहा है । संसार में पुत्र-रत्न से बड़कर  
कोई वस्तु नहीं है । क्यों न हो ? पुत्र है भी तो वरा का आधार । त्रिम  
घर में पुत्र नहीं वह घर मरघट मुक्त है । घर में धन है, कज्र है और  
देवद्वय है किन्तु एक पुत्र नहीं है तो सारा का सारा निरर्थक । निस्सन्देह  
पुत्र माता-पिता का खिलौना है, उनके मनोरंजन की वस्तु है, उनका  
मनोरंजन है और उनका माया है । पुत्र की तोतली वाणी हृदय में अपार  
आनन्द उत्पन्न करती है हृदय को आकषित करती है, और हृदय में अनुभूत  
शान्ति उत्पन्न करती है । संसार में पुत्र से बड़कर कोई धन नहीं और सुख  
नहीं । पुत्र विपत्ति के समय पावत्र हृदय की औषधि, दुःख की लकड़ी  
और मौलों की पुतली है । भगवान को अपार कृपा है कि आपको घर पुत्र  
रत्न उत्पन्न हुआ है । भगवान इसको दीर्घजीवन, धन, कीर्ति और देवद्वय  
प्रदान करें ।



हमें जीवन में जिस प्रकार भोजन और निद्रा की आवश्यकता है वही प्रकार नियमित व्यायाम की भी आवश्यकता है। व्यायाम शरीर के अवयवों को ठीक रखता है। रक्त-संचार को तीव्र करता है। पाचन-शक्ति को बढ़ाता है। रक्त शुद्ध करता है। मूत्र की कोश को बढ़ाता है। निर्भयता आदि गुणों को विकसित करता है। मस्तिष्क में शक्ति प्रदान करता है।

“शक्ति बढ़े कुर्ती लहे, खोट न अधिक विराय ।

अन्न वसे खंभा रहे, कसरत सदा सहाय ॥”

संसार में जितने बलशाली और यशस्वी पुरुष हुए हैं वह किसी-न-किसी रूप में अवश्य व्यायाम करते थे। कोई रहस्यता था, कोई प्रशस्ति-मिरास को निरक्ष जाता था। कोई मृगया-विहारी था। कोई योगीन से प्रेम रखता था। अभिप्राय यह है किसी-न-किसी प्रकार का व्यायाम करते स्वास्थ्य सुवर्जन करते थे और पुत्रपार्थ को बढ़ाते थे।

जब तक अवश्य शरीर न होगा तब तक मस्तिष्क भी अवश्य और शक्तिशालक न होगा। अवश्य रहने के लिये व्यायाम आवश्यक है। व्यायाम में नहीं नहीं है कि हँकी हो लेखी जाये। नुटकाल लेखिये, बाजीबाज लेखिये, तैलिये, खोदे पर सवारी कीजिये, प्रातः काज लखे नुमने निरक्ष जाइये। निष्कर्ष यह है कि किसी प्रकार हाथ-पैर को दिखाइये इजाइये। यह विचार ठीक नहीं कि घरने में बाधा आती है और समय नहीं मिलता। हमारा ध्यान कि नियमित व्यायाम के बिना संसार में जीवन सुखमय नहीं बन सकता।

यह दूसरा गुण आशा है कि हम सब इन विचारों पर परा व्यायाम अवश्य और अपने जीवन का सुख बनने की चेष्टा कराना। जिस लक्ष्य-क्षेत्र से व्यायाम बढ़ता। मित्रों बाजी की बना-बाध्य।

दुबारा माई

1950 के बाद की प्रकाश







मुलाधिकर सामिक वाम खेवर बाधा करते हैं वही तकलीफ है । १ बजे के बाद २७ बजे तक कोई गाड़ी न ई. पी. कार. की और न ई. कारें. जा. की इधर जाती है । पूरे ४० घंटे तक हमें देहली में बसा रहना पड़ता है या कारियों से जाना पड़ता है, जिससे हमारे वाम खेने का मतलब कुछ नहीं होता । ऐसी परिस्थिति में हम आपसे प्रार्थना करते हैं ३ और २ बजे के बीच कोई स्पेशल ट्रेन निकाल देहली से गुज्रियावाड़ तक जारी कर दी जाए तो हम लोगों का बहुत कुछ कष्ट कम हो सकता है । आशा है हमारी इस समस्या पर ध्यान देते, और कोई स्पेशल ट्रेन के छोड़ने का प्रबन्ध करेंगे ।

हम हैं आपके आशाकारी:—

शाहदरा-देहली  
१२ मार्च, १९२०

1-रयाममोहन इन्जीनियर, २-रायामल  
बापट, ३-किशनकिशोर पोस्टमास्टर, ४-बबू  
बाबू कुम्भेजर, इत्यादि इत्यादि ।

(२७) कलक्टर साहब को लगान माफ करने का प्रार्थना-पत्र

श्रीमान्

श्रीमान् कलक्टर साहब

अलीगढ़ जिला, अलीगढ़ ।

सेवा में निवेदन यह है, अमानक १२ मार्च को हमारे गाँव पर ओखे गिरे । जिसके कारण सारी फसल खराब हो गई है । खेतों में न एक छट्ठाक मात्र होगा न एक तिनका । हम तो पारसाख ही अनादृष्टि के कारण बहुत परेशान हो रहे थे । अब इन पत्थरों ने गिर कर हमारे ऊपर पूरे पत्थर गिरा दिये हैं । आजकल हम भूखों मर रहे हैं । हमारे बाग़-बग़चे दाने-दाने को तरसते हैं । उधर हमारी भवेशिर्वा बिना चारों के मरी जा रही हैं । ऐसी परिस्थिति में हम मन-मस्तक हो आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप श्री का मारा लगान माफ करने का हुक्म दे दीजियेगा ।

हमें पूर्ण आशा है कि आप हमारी इस महाकायिक दशा पर ख़ास ध्यान देने और रबी का मारा लगान माफ करके हम दोन-दुनियाँ

को रक्षा करेंगे। हम हरा के हम मारे जीवन जानारी रहेंगे।

भीमान् के आज्ञाकारी—

दलीपुर

बहमोद हगबाम

दिवा बल्लोम?

२२ मार्च, १९२० ई०

१—नारायणमस्तुद सुखिया, २—बाव  
बनरदार, ३—निहोताज मास्टर, ४—  
गिरवर घोमर, २—जोला खटोक इत्यादि

## (२२) नौकरी के लिए प्रार्थना-पत्र

भीमान् सेक्रेटरी साइड,

कनरुब-इटर-मीडेट-कावेज, देहली १

माननीय महोदय जी,

सेवक ने आपका यूनीवर्सिटी से फुल्ट टिबोवन (मथन भोली) में  
बी. ए. पास किया है। पंजाब यूनीवर्सिटी बी. टी. और एम. ए. बी.  
डिपार्टमेंट परीक्षाएँ पास भी की हैं। हिन्दी की 'ग्रामर' और  
पुस्तक परीक्षाएँ भी सेवक ने पास की हैं। कद-पुस्तकें भी लिखी हैं  
जो यू. पी., सी. पी. और देहली यूनी में पार्स जायी हैं आपसे निम्न  
मानक पुस्तक, जो आपके स्कूल में डिप्लोमा है, वह सेवक की ही बनाई  
हुई है। सेवक कायक संस्थान हाई स्कूल र्पांगज में हैट हिन्दी  
अध्यापक के पद पर काम कर रहा है। सेवक का स्वास्थ्य बहुत अच्छा है।  
सब प्रकार के सेवों का शौक है। सेवों की उत्तमता के कद माटीकिंडम  
और मैडिस भी प्राप्त किये हुए हैं।

कब के हिन्दुस्तानी-युद्ध में वह सुचना परक कि आपकी





कमा हो जाये वा कम्बुका है । जब चाही करेगा तो  
और टीकों का और स्वाभाविक है । जिसमें कनेक रोग फैलने  
सम्भावना है ।

अतः हम आपसे मत-मागत हो प्रार्थना करते हैं कि  
समय में परसे ही परख हमारे इन कष्टों को जान सारा  
करा देंगे ।

हम हैं आपके आज्ञाकारी :-

- (१) रामप्रसाद गौड़, पकील, (२) लाल
- बमरचन्द, गौड़ बाजे । (३) रामनारायण मुनार
- (४) मुनारलाल धोदी । (५) शम्भू रंगरेज ।
- (६) विनियम पादरी इत्यादि ।

आगरा ।

३० जून, १९११

(३०) सम्पादक के नाम पत्र

( बाद के सम्बन्ध में )

श्रीयुक्त प्रताप सम्पादक जी कानपुर,

बाद के समाचारों ने मेरे हृदय को व्यथित कर दिया । मैं  
कुछ सहायता और सेवा भावना लेकर पहुँचा था । वहाँ व  
तोमाचकारी हरय, जो मैंने अपनी आँखों देखा है, बर्तन करने में  
रखनी कापती है । सारे उत्तरी विहार प्रान्त में भयंकर दल्लदकॉट  
चा हुआ है । सारा पूर्वी प्रान्त अलमय हो गया है । पानी क  
निष्पन्न कोई वस्तु नजर नही आता । पृथ्वी का शान्वा मात्र नजर  
आता है । लोग गलत हुंज पर रन और दिन व्यतीत कर रह  
उनके उधर धर का मानन बढ़ गया है । गंगा, गडका  
और मान न धरनी विकराल मूँ बन जा है । हजारों



इस विवाह के परचाव पिता जी कहते थे कि अबकी बार हम तुम्हें बम्बई ले चलेंगे। सम्भवतः पिताजी मई के आरंभिक सप्ताह में बम्बई जायें। बम्बई की अनायास सैर का आनन्द मिलेगा। मैंने समुद्र और जहाज नहीं देखे हैं। अतः बम्बई जाकर इन दोनों वस्तुओं के देखने का सौभाग्य प्राप्त होगा। बम्बई के पास ही महादेवश्वर हैं, महादेवश्वर में छोटे चाचाजी रहते हैं। सुनते हैं महादेवश्वर की जलवायु बड़ी स्वास्थ्य-वर्द्धक है। वहाँ यहाँ की पं गारमी नहीं पड़ती। प्रत्युत ठण्ड रहती है। बम्बई नृप के यहाँ लोग गर्मियों में महादेवश्वर की हवा खाने बहुत जाते हैं। सुनते हैं कि यहाँ प्राकृतिक दृश्य बड़े ही मनोहारी हैं। कहीं कल-कल शब्द करने हुए झरने झरते हैं। कहीं सुन्दर बागों की शोभा निराली है। चाँों तरफ़ हरियाली-ही हरियाली दृष्टिगोचर होती है। मेरा बड़ा सौभाग्य होगा कि इन स्थानों की सुन्दर शोभा को अपने नेत्रों से अवलोकन करूँगा। यदि आप भी आ जायें तो बड़ा हा आनन्द हो। आपके साथ रहने में पूरी स्वतन्त्रता भी रहेगी और मनोरंजन भी भूष रहेगा।

२० मई को यहाँ ज़ांजी की बिदा कराने लखनऊ जाना है। अतः महादेवश्वर से १८ मई के लगभग लौटूँगा। मुझे बड़ा हर्ष है कि इन घुट्टियों में मुझे लखनऊ देखने का भी सौभाग्य प्राप्त होगा। सुना है लखनऊ भी बड़ा सुन्दर नगर है। वहाँ का अजायब-घर, बनारस बाग़, अमानाबाद पार्क, कॉमिल हाऊस, यूनिवर्सिटी भवन दृश्य शोच्य हैं। हर्ष है कि इन वास्तव दृश्य का भी मुझे सौभाग्य प्राप्त होगा।

मैं इलाहाबाद से ऊब गया हूँ। इस वर्ष मेरी चुकट समितिकर  
 है कि मैं बनारस यूनिवर्सिटी में अपना नाम दानिज कराऊँ।  
 १० बीलाई को बनारस यूनिवर्सिटी खुल रही है। मैं चाहता हूँ कि  
 राज्य में अरुहा कमरा मित्र लाय, इसलिये यूनिवर्सिटी खुलने में कुछ  
 दिन पहले बनारस पहुँच जाऊँ।

इस तमाम यात्रा में आप मेरे साथ रहे तो बड़ा आनन्द हो।  
 हरबा अपने बिना भी मे अनुमति लेकर इस यात्रा के बिदे नैया  
 गहो। मुझे पूर्ण आशा है कि आप मेरी इस योजना को सर्वन स्वीकार  
 कर मुझे मिलोगे।

शेष बातें सब पूर्ववत् है।

आपका दशनामिलाली—

मदरास राज्य शासकी।

